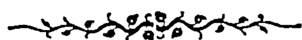
धर्म्म और विज्ञान।

पहिला अध्याय।

विज्ञान का मूल कारण।



(यीसू मसीह से पूर्व चौथी शताब्दी में यूनानियों की धार्मिक दशा का वर्णन। फारस राज्य पर उनकी चढ़ाई हुई। इससे उन लोगों को नवीन प्राकृतिक दृश्य देखने को मिले। और इसी से वे नवीन धार्मिक प्रथा से खूब जानकार होगए। मैसीडोनिया की चढ़ाई के समय उन्हें सैनिक, शिल्पीय और वैज्ञानिक काम करने पड़े, जिससे सिकंदरिया नगर में एक अजायब घर स्थापित हुआ, जिससे लोग प्रयोग विधान, देख भाल तथा गणितबल से अपना ज्ञान बढ़ा सकें। बस यही विज्ञान का मूल कारण हुआ।)

जो अपने प्रचार के समय में मनुष्य की कई पीढ़ियों तक शान्ति प्रद रहा हो ऐसे प्राचीन धर्म्म के नष्ट हो जाने के दृश्य से अधिक गौरवान्वित्त और अधिक शोचनीय दृश्य विचारवान पुरुषों के सामने कोई भी नहीं पेश किया जा सकता।

ईसा के जन्म से चार शताब्दी पूर्व, यूनान देश अपना पुराना धर्म बड़ी शीघ्रता से छोड़ रहा था। यूनानी तत्ववेत्ता लोग, अपने सांसारिक अनुभवों से भली भांति समझ चुके थे कि प्राकृतिक कामों के महत्व और आलिम्पस के देवताओं की अयोग्यता में भारी अन्तर है। यूनानी इतिहासकार लोग, राजनैतिक व्यवहारों का क्रमागत प्रवाह और मनुष्यों के कामों की स्पष्ट एकता विचार कर, और यह सोच कर कि उनकी आंखों के सम्मुख होने वाली घटनाओं में से कोई भी ऐसी घटना न थी जिसका कारण किसी पूर्व घटित घटना मे स्पष्ट न पासकते हों, सन्देह करने लगे कि कि प्राकृतिक चमत्कार और दैवी मध्यस्थता, जिनके वर्णन से पुरानी कथाएं भरी पड़ी थीं, केवल कल्पना मात्र थीं। जब दैवी शक्ति का समय जाता

रहा, तब वे प्रश्न करने लगे कि दैवी भविष्यवादक क्यों चुप हो रहे, और अब संसार मे वे आश्चर्य्यप्रद बातें क्यों नही होतीं ? ।

मौखिक कथाओं ने, जो बहुत प्राचीन काल से प्रचलित थीं, और जिनको प्राचीन धार्मिक जनों ने निःसन्देह सत्य माना था, भूमध्य सागर के द्वीपों और उसके निकटस्थ देशों को दैवी आश्चर्य्यों, अर्थात् जादूगरनियों, जादूगरों, भूतों, राक्षसो, परवदार राक्षसों, भयंकर रूप धारियों, पंखदार नृसिंहों और क्रूरकर्मा दैत्यों से भर दिया था। नील आकाश स्वर्गलोक की भूमि थी, जहा "जीअस" देवताओं से घिरा हुआ, मनुष्यों के से कामों में लगा हुआ, और मानुषी विषयों और दोषों सहित अपनी सभा किया करता था।

बहुत स्थानों से भंगुरित समुद्रतट तथा एक ऐसे द्वीप समूह ने जिसमें संसार के अत्यन्त सुन्दर द्वीप हैं, यूनानी लोगों को समुद्रीय जीवन, भौगोलिक नवान्वेषण, और नवीन बस्तियां बसाने के चाव से भर दिया था। उनके जहाज कृष्णसागर और भूमध्यसागर में सब जगह घूमा करते थे। ज्ञात हुआ कि समय समादरित आश्चर्य जिनका वर्णन "आडिसी" नामक ग्रथ में बड़ी धूमधाम से किया गया है, और जिनको सर्व साधारण जन अति पवित्र समझते थे कुछ थे ही नहीं। जब प्रकृति का और अधिक ज्ञान लाभ हुआ तब स्पष्ट प्रमाणित कर दिया गया कि आकाश एक धोखा है। ऐसा जाना गया कि आलिम्पस कोई वस्तु नहीं है। रहने का स्थान अन्तरधान होते ही "होमर" के यूनानी देवता और 'हीसिअड' के डोरिक देवता सब गायब हो गए।

परन्तु यह बात विना विरोध हुए नहीं हुई। पहिले तो जन साधारण ने और विशेष कर उसके धार्मिक भाग ने इन सदेहों को नास्तिकता कहके उनकी निन्दा की। उन्होंने अपने देवताओं को अप्रसन्न करने वालों में से कुछ का तो धन अपहरण कर लिया, कुछ को देश से निकाल दिया और कुछ को उन्होंने मार डाला। वे ज़ोर के साथ कहते थे कि प्राचीन काल में जिस पर पवित्रात्मा मनुष्यो का विश्वास रहा है, और जो बहुत काल की जांच में सदैव सत्य निकला है, वह अवश्य सत्य होगा॥ तदनन्तर जब विरोधी प्रमाण अकाट्य होने लगे

तब उन्होंने मान लिया कि ये आश्चर्य्य प्रद बातें रूपक थीं जिनकी आड़ में प्राचीन मनुष्यों की बुद्धि ने बहुत सी पवित्र और भेदपूर्ण बातें छिपा रक्खी हैं। तदनन्तर अपने सदेह के कारण वे बहुतसी बातों को कूटार्थपूर्ण कथाएं समझने लगे थे, और ऐसा समझने को अपनी बुद्धि की बढ़ती हुई दशा बतलाने का उद्योग करते थे। परन्तु उनके उद्योग विफलही थे। क्योंकि कुछ पहिले से नियत दशाएं ऐसी हैं जिनमें होकर साधारण जन सम्मति को ऐसे मौकों पर अवश्यही गमन करना पड़ता है। साधारण जन सम्मति ने पहिले जिस वस्तु को बड़े आदर से स्वीकार किया था कुछ दिनों के अनन्तर उस पर सदेह होने लगता है। तदनन्तर उसके नवीन नवीन अर्थ लगाए जाते हैं। तद-नन्तर उस के विषय में मतभेद होता है, और अन्त में वह सर्वथा अमूलक कथा कहकर त्याज्य हो जाती है।

इस स्वधर्म त्याग में तत्त्वज्ञानियों और इतिहासवेत्ताओं का अनुकरण कवियों ने भी किया। 'यूरीपाईडीज़' ने नास्तिक होने की बदनामी उठाई। ईसचिलस ईश्वर निन्दा के दोष में पत्थरों से कुचनकर मार डाले जाने से बहुत ही बच गया। परन्तु उन लोगों के मदोन्मत्त उद्योग जो असत्य बात के समर्थन में ही चाव रखते हैं, अन्त में सदैव ही विफल होते हैं। साहित्य की सब ही शाखाओं में बेरोकटोक आचार भ्रष्टता बढ गई, यहां तक कि अन्त में वह जन साधारण तक पहुंच गई।

इस जातीय धर्मनाश में, यूनानी तत्त्वावधान को, यूनानी तत्त्वज्ञों की गुणदोषविवेचना ने बहुत सहायता दी थी। इस गुण दोष विवे-चना ने बहुत से प्रमाण देकर फैलते हुए अविश्वास का समर्थन किया। उसने अनेक पंथानुगामियों के सिद्धान्तों का परस्पर मिलान किया, और उन के विरोध से स्पष्ट दिखला दिया कि मनुष्य के पास सत्यता का कोई ठीक लक्षण नहीं है, और चूंकि मनुष्य के भलाई बुराई के विचार, रहने वाले देश के अनुसार अनेक भांति के होते हैं, इस लिये उन विचारों का मूल प्रकृति पर नहीं होता, किन्तु वे सर्वथा शिक्षा के फल होते हैं। और सत्य और असत्य केवल कल्पनाएं हैं जिन्हें समाज

ने अपने मतलब के लिये बना लिया है। एथेंस में कतिपय उन्नत श्रेणी के लोग ऐसी अवस्था तक पहुंच चुके थे कि वे अदृश्य और दैवी शक्तियों के अस्तित्व को केवल अमान्य ही नहीं करते थे, वरन् वे यह भी कहते थे कि ससार एक स्वप्न और कल्पना मात्र है और वास्तव में कोई वस्तु है नहीं।

यूनान के स्थानिक नक़शे ने उस की राजनैतिक दशा में विशेषता दे रक्खी थी। वहां के निवासी भिन्न भिन्न जातियों में विभाजित थे, और परस्पर विरोधी स्वार्थ रखते थे। इसी करण वे सब एक नहीं हो सकते थे। विरोधी राज्यों के सदैवकालीन घरेलू लड़ाइयों के कारण उस की उन्नति में बाधा पडती थी। वह देश गरीब था और उस के मुखिया लोग रिशवतखोर हो गए थे। परदेशियों के रुपए के बदले वे स्वदेश भक्ति त्यागने को सदा प्रस्तुत रहा करते थे। और फारिस वालों की रिशवतों पर अपने को बेंच डालने को सदैव तैयार थे। वे लोग सुन्दर रूप के इतने वड़े उपासक थे, (जैसा कि मूर्तियों और इमारतों से प्रगट है), जितने कहीं के लोग किसी समय मे नहीं हुए; इसी कारण यूनान निवासी जन भलाई और सत्य की क़द्रदानी करना भूल गए थे। जिस समय यूरुपीय यूनान ने, स्वच्छन्दता और स्वतन्त्रता के विचारों से पूर्ण होकर फारिस की अधीनता मानने से इकार कर दिया था, एशियाई यूनान उसे खुशी से मानता था। उस समय फारिस राज्य का भौगोलिक प्रस्तार हाल के आधे यूरुप के बराबर था। वह राज्य भूमध्यसागर, ईजियनसागर, कृष्णसागर, कैस्पियनसागर, इन्डियनसागर, फारिससागर, और लालसागर के किनारो तक था। उसके राज्य में दुनियां के छ. बड़े नद बहते थे अर्थात्, फ्रात नदी, टिगरिस नदी, सिंध नदी, जगजारटीज़, आक्सस और नील नदी, जिन में से प्रत्येक नदी लम्बाई में एक हज़ार मील से अधिक है। उस के राज्य की भूमि की सतह, समुद्र की सतह से, तेरह सौ फीट नीची से लेकर बीस हज़ार फीट तक ऊंची थी। इस कारण उस राज्य मे कृषी की प्रत्येक वस्तु पैदा होती थी। उस का खानिक धन भी अतुल था। वहा के राजा को नीडियनराज्य, असीरियनराज्य और

कैलडियनराज्य के विशेष अधिकार विरासत में मिले थे, जिन के इतिहास दो हज़ार वर्ष पीछे तक का ठीक पता देते थे।

फारिस राज्य यूरुपीय यूनान को सदैव तुच्छ देश समझता था। क्योंकि उस का भूमि विस्तार कठिता से उस के एक प्रान्त के आधे के बराबर था। परन्तु ज़बरदस्ती अपनी आज्ञापालन कराने के हेतु की गई चढ़ाइयों ने, फारिस राज्य के यूनान निवासियों के युद्धसंबधी गुण स्पष्ट दिखा दिए थे। फारिस ने अपनी सेना में तनखाहदार यूनानी सैनिकों को सम्मिलित कर लिया था। वे सर्वोत्तम सिपाही समझे जाते थे। कभी कभी यूनानी जनरलों को सेना का कमान (अध्यक्षता) देने में भी आगा पीछा नहीं किया जाता था। यूनानी कप्तानों को नाविक बेड़ों की अध्यक्षता देने में भी सोच विचार न था। उस राजनैतिक विक्षोभ में भी जो फारिस में हुआ था, यूनानी सिपाही झगड़ने वाले सरदारों की ओर से काम में लाए गए थे। इन युद्ध सवधी कामों का एक बहुत बड़ा फल हुआ। इन युद्धप्रिय यूनानी सिपाहियों को इन कामों से राज्य की निर्बलता ज्ञात हो गई और उस के केन्द्रस्थल तक पहुंचना उन्हें संभव जान पड़ा। **'कुनक्सा'** के रणक्षेत्र में **'साइरस'** के मारेजाने के अनन्तर **'ज़ेनोफ़न'** की अधीनता में दश हजार सैनिकों के सदास्मरणीय पराजय से, यह बात प्रमाणित हो गई कि यूनानी सेना फारिस के मध्यस्थल तक प्रवेश कर सकती है, और वहां से निकल भी आ सकती है।

एशियाई सेनानायकों की युद्धकुशलता का वह रोब जो "हेलेस्पांट" का पुल बांध लेने और "माउट अथास" के स्थलडमरूमध्य के काटने से, यूनानीयों के चित्त मे भली भांति अंकित होगया था, तैलानिस प्लैटी और माइकेल की लड़ाइयों से निकल चुका था। इस हेतु यूनानी लोग फारिस के धनपूर्ण प्रन्तों को लूट लेने के लिये अति उत्सुक हो उठे थे। स्पार्टा नरेश "अजीसिलास" की चढ़ाई इसी प्रकार की थी। परन्तु उसकी अच्छी सफलताओं को फारिस सरकार ने बहुत प्राचीन रिशवत-कूटनीति से रोक दिया, अर्थात उसने स्पार्टा के पड़ोसी राज्यों को रिशवत दी कि वे स्पर्टा पर आक्रमण करदे।

ने अपने मतलब के लिये बना लिया है। एथेंस में कतिपय उन्नत श्रेणी के लोग ऐसी अवस्था तक पहुंच चुके थे कि वे अदृश्य और दैवी शक्तियों के अस्तित्व को केवल अमान्य ही नहीं करते थे, वरन् वे यह भी कहते थे कि संसार एक स्वप्न और कल्पना मात्र है और वास्तव में कोई वस्तु है नहीं।

यूनान के स्थानिक नक़शे ने उस की राजनैतिक दशा में विशेषता दे रक्खी थी। वहां के निवासी भिन्न भिन्न जातियो में विभाजित थे, और परस्पर विरोधी स्वार्थ रखते थे। इसी कारण वे सब एक नहीं हो सकते थे। विरोधी राज्यों के सदैवकालीन घरेलू लड़ाइयों के कारण उस की उन्नति में बाधा पड़ती थी। वह देश गरीब था और उस के मुखिया लोग रिशवतखोर हो गए थे। परदेशियो के रुपए के बदले वे स्वदेश भक्ति त्यागने को सदा प्रस्तुत रहा करते थे। और फारिस वालों की रिशवतों पर अपने को बेंच डालने को सदैव तैयार थे। वे लोग सुन्दर रूप के इतने बड़े उपासक थे, (जैसा कि मूर्तियों और इमारतों से प्रगट है), जितने कहीं के लोग किसी समय में नहीं हुए; इसी कारण यूनान निवासी जन भलाई और सत्य की क़द्रदानी करना भूल गए थे। जिस समय यूरुपीय यूनान ने, स्वच्छन्दता और स्वतन्त्रता के विचारों से पूर्ण होकर फारिस की अधीनता मानने से इंकार कर दिया था, एशियाई यूनान उसे खुशी से मानता था। उस समय फारिस राज्य का भौगोलिक प्रस्तार हाल के आधे यूरुप के बराबर था। वह राज्य भूमध्यसागर, ईजियनसागर, कृष्णसागर, कैस्पियनसागर, इन्डियनसागर, फारिससागर, और लालसागर के किनारो तक था। उसके राज्य में दुनियां के छ. बड़े नद बहते थे अर्थात, फ्रात नदी, टिगरिस नदी, सिंध नदी, जग्जारटीज़, आक्सस और नील नदी, जिन में से प्रत्येक नदी लम्बाई में एक हज़ार मील से अधिक है। उस के राज्य की भूमि की सतह, समुद्र की सतह से, तेरह सौ फीट नीची से लेकर बीस हज़ार फीट तक ऊंची थी। इस कारण उस राज्य मे कृषी की प्रत्येक वस्तु पैदा होती थी। उस का खानिक धन भी अतुल था। वहां के राजा को मीडियनराज्य, असीरियनराज्य और

कैलडियनराज्य के विशेष अधिकार विरासत में मिले थे, जिन के इतिहास दो हजार वर्ष पीछे तक का ठीक पता देते थे।

फारिस राज्य यूरुपीय यूनान को सदैव तुच्छ देश समझता था। क्योंति उस का भूमि विस्तार कठिता से उस के एक प्रान्त के आधे के बराबर था। परन्तु ज़बरदस्ती अपनी आज्ञापालन कराने के हेतु की गई चढ़ाइयों ने, फारिस राज्य के यूनान निवासियों के युद्धसंबधी गुण स्पष्ट दिखा दिए थे। फारिस ने अपनी सेना में तनखाहदार यूनानी सैनिकों को सम्मिलित कर लिया था। वे सर्वोत्तम सिपोही समझे जाते थे। कभी कभी यूनानी जनरलों को सेना का कमान (अध्यक्षता) देने में भी आगा पीछा नहीं किया जाता था। यूनानी कप्तानों को नाविक बेड़ों की अध्यक्षता देने में भी सोच विचार न था। उस राजनैतिक विक्षोभ में भी जो फारिस में हुआ था, यूनानी सिपाही झगडने वाले सरदारों की ओर से काम में लाए गए थे। इन युद्ध संबधी कामों का एक बहुत बड़ा फल हुआ। इन युद्धप्रिय यूनानी सिपाहियों को इन कामों से राज्य की निर्बलता ज्ञात हो गई और उस के केन्द्रस्थल तक पहुंचना उन्हें संभव जान पड़ा। '**कुनक्सा**' के रणक्षेत्र में '**साइरस**' के मारेजाने के अनन्तर '**ज़ेनोफ़न**' की अधीनता में दश हजार सैनिकों के सदास्मरणीय पराजय से, यह बात प्रमाणित हो गई कि यूनानी सेना फारिस के मध्यस्थल तक प्रवेश कर सकती है, और वहां से निकल भी आ सकती है।

एशियाई सेनानायकों की युद्धकुशलता का वह रोब जो "हेलेस्पांट" का पुल बाध लेने और "माउट अथास" के स्थलडमरूमध्य के काटने से, यूनानीयों के चित्त में भली भांति अंकित होगया था, तेलानिस प्लैटी और माइकेल की लड़ाइयों से निकल चुका था। इस हेतु यूनानी लोग फारिस के धनपूर्ण प्रन्तों को लूट लेने के लिये अति उत्सुक हो उठे थे। स्पार्टा नरेश "अजीसिलास" की चढ़ाई इसी प्रकार की थी। परन्तु उसकी अच्छी सफलताओं को फारिस सरकार ने बहुत प्राचीन रिशवत-कूटनीति से रोक दिया, अर्थात उसने स्पार्टा के पड़ोसी राज्यों को रिशवत दी कि वे स्पर्टा पर आक्रमण करदें।

बरताव किया गया। परन्तु ग़ाज़ा में, मिस्रदेश प्रवेश करती हुई सिकन्दर की सेना रोकी गई थी, जहां के बेटिस नामक फारसी गवर्नर ने कठिन मुकाबिला किया था, इस हेतु वह स्थान, दो मास के घेरे के अनन्तर, हल्ला करके ले लिया गया और वहां के दश हज़ार मनुष्य मरवा डाले गए और शेष बीबी बच्चों सहित गुलामी में बेच दिए गए। स्वयं बेटिस विजेता के रथ के पहियों में बांधकर तमाम शहर में खींचा गया। अब कोई रोक न रही। मिस्रदेश निवासियों ने, जो फारिसी राज्य से घृणा करते थे, अपने ऊपर आक्रमण कारियों का खुले दिल से स्वागत किया। उस ने अपने स्वार्थ के अनुकूल देश का प्रबंध किया; सैनिक प्रबन्ध मैसिडोनिया के अफसरों के हाथ मे दिया, और देश की भीतरी शासनप्रथा मिस्रदेश निवासियों के ही हाथ मे रक्खी॥

जब अंतिम चढ़ाई की तैयारिया हो रही थी, उस समय सिकन्दर 'जूपिटर एमन' के दर्शनों को उस के मन्दिर तक गया था जो 'लीबिया' के बलुए मैदान के एक सुरम्य स्थान में था और वहां से २०० मील दूर था। उस मन्दिर की आकाशवाणी ने उसे उस देवता का पुत्र बतलाया जिस ने सर्प के भेष में उस की माता ओलम्पियस को धोखा दिया था। निर्दोष गर्भाधारण प्रथा और दैवी अवतारो की प्रथा उन दिनों ऐसी प्रचलित थी कि जो कोई मानुषी विषयों के बड़े बड़े काम करता था वह अवतारी समझा जाता था। यहां तक कि रोम में, कई शताब्दी पीछे भी, कोई यह नहीं कह सकता था कि उस नगर के स्थापक, 'रोम्यूलस' की पैदायश मंगलदेव और 'रीसिल्विया' नामक कन्या के अचानक संयोग से, (जब वह घड़ा लिये झरने से पानी भरने जाती थी) नहीं हुई। प्लेटो के मिश्र देश निवासी चेले उन मनुष्यों पर रुष्ट होते थे जो इस कथा को नहीं मानते थे कि उस बड़े तत्ववेत्ता की माता ने कन्यावस्था ही में "अपालो" देव से निर्दोष गर्भधारण किया था और उस देवता ने उस के भावी पति "अरिस्टन" से यह बात कह दी थी। जब सिकन्दर अपने पत्रों, आज्ञाओं और न्यायाज्ञाओं पर अपने को 'सिकन्दर वल्द जूपिटर एमन' लिख कर उन्हें प्रकाशित करता तब मिश्र और सीरिया देश निवा-

सियों पर उन का इतना प्रभाव पड़ता जितना अब आज कल लोगों की समझ ही में नहीं आ सकता ॥ परन्तु स्वतंत्र विचार वाले यूनानियों ने ऐसे देवजातक की ठीक २ क़द्र की । ओलिम्पियस (सिकन्दर की माता) जो इस हाल को अन्य सब ही जनों से अधिक जानती थी, हँसी में बहुधा कहा करती थी कि "मैं चाहती हूं कि सिकन्दर मुझे जूपिटर की जोरू न बनाया करे तो अच्छा है'। मैसिडोनिया की चढ़ाई का इतिहासकार, 'एरियन' कहता है कि मैं उसे इसलिये कुछ दोष नहीं दे सकता कि उसने अपनी प्रजा को यह विश्वास दिलाया था कि वह देववंशी है ; और न मैं इस को कोई बड़ा दोष ही मान सकता हूं, क्योंकि यह बात भली भांति समझ में आ सकती है कि ऐसा करने से उस का कुछ अन्य तात्पर्य्य न था वरन् केवल इतना ही कि सैनिकों पर खूब अधिकार जमा रहे" ॥

सेना के पिछले भाग में इस प्रकार सब पक्का प्रबंध करके, सीरिया प्रदेश में लौटकर, सिकन्दर ने पचास हजार अनुभवप्राप्त योद्धाओं से बनी हुई अपनी सेना को पूर्व की ओर बढ़ने की आज्ञा दी। फ्रात नदी पार करके वह मैसियन पहाड़ियों के निकट ही निकट रवाना हुआ जिस से दक्षिणी मेसोपोटेमिया के मैदानों की कठिन गर्मी से बचाव हो जाय । और रिसाले के लिये यहां चारा भी अधिकता से मिल सकता था । टिगरिस नदी के बायें तट पर, अरबेला के निकट, उस से ११ लाख सैनिकों वाली बड़ी सेना से जिसे 'दारा' वेबीलान से लाया था, लड़ाई हुई । फारिस नरेश दारा के पराजित होने और तदनन्तर शीघ्र ही उस की मृत्यु होने से, मैसीडोनिया का जनरल डैन्यूब से लेकर गंगा तक फैले हुए देशों का मालिक हो गया। अन्ततः उस ने गंगा तक अपनी विजय पताका फहराई । इस विजय में उसे इतना धन मिला कि सुनकर विश्वास करने को जी नहीं चाहता । एरियन कहता है कि केवल 'सुसा' स्थान में ही उसे पचास हज़ार 'टैलेएट*' नगद मिले ॥

---

* टैलेएट = फारिस देश का एक सिक्का ।

ने भी इस विजय किये हुए राज्य में बहुत सी ऐसी चीजें पाईं जो उनके लिये बड़ी आश्चर्य्य प्रद वस्तुएं थीं। 'कैलिस्थेनीज़, ने बैबीलान नगर में बहुत से ऐसे कैलडियन ज्यौतिष संबंधी लेख पाये जिनमें १९०३ वर्ष पहले तक का हाल दिया था। ये लेख उसने अरस्तू के पास भेज दिये। चूंकि वे लेख पक्की ईंटों पर थे इसलिये संभव है कि यदि असीरिया नरेशों की मृन्मूर्ति पुस्तक शाला में हाल के खोज करने वाले खोज करें तो उनकी द्वितीय प्रति भी मिलजावे। मिश्रदेश के ज्यौतिषी 'टालेमी' के पास एक बैबीलान देश की ग्रहण संबंधी पुस्तक थी जिस में सन ईसवी से ७४७ वर्ष पहले तक का हाल दिया हुआ था। ज्यौतिष संबंधी जो जो प्राचीन बातें इस समय तक पाई जाती हैं उनको निश्चय करने के लिये निःसन्देह बहुत काल तक बड़े ध्यान पूर्वक देख भाल करने की आवश्यकता पड़ी होगी। बैबीलान निवासियों ने भूमध्य भागों के लिये वर्ष की लंबाई ऐसी निश्चित की थी जिसमें केवल २५ सेकिंडों से कम की ग़लती है। उनके नाक्षत्रिक वर्ष के अन्दाज़ में मुशकिल से दो मिनट की अधिकता थी। उन्हो ने क्रान्तपातगति को भी जान लियाथा। वे ग्रहण होने के कारणों को भी जानते थे। और अपने कालचक्र की सहायता से जिसे वे 'सैरस' कहते थे वे ग्रहणकाल पहले से बतला सकते थे। उनके कालचक्र के मान के अटकल में, जो ६५८५ दिन से अधिक है, केवल साढ़े उन्नीस (१९½) मिनटों से कमही की ग़लती है॥

ऐसी २ बातें उस धैर्य और चतुराई का अविरोधनीय प्रमाण हैं जिनसे मेसोपोटेमिया में ज्यौतिष विद्या का प्रचार हुआ और इसका भी अच्छा प्रमाण हैं कि उचित यांत्रिक सहायता के बिनाही वह बिद्या बहुत कुछ पूर्णता को पहुंच गई थी। इन प्राचीन दर्शकों ने सितारों की एक सूची बनाई थी और राशिचक्र को बारह राशियों में विभाजित कियाथा। उन्होने दिन तथा रात को बारह घंटों में विभाजित कियाथा। अरस्तू के कथनानुसार उन्होने चन्द्रमा द्वारा नक्षत्र-ग्रास की बहुत काल तक जांच पड़ताल की थी। उनको सूर्य सम्प्रदाय की बनावट का शुद्ध ज्ञान था, और वे ग्रहों की स्थिति के

वस्तुओं का प्रभाव उनके चित्त पर बहुत शीघ्र और बहुत गहरा होता था। कहीं सीमा रहित बलुये मैदान थे, कहीं गगनभेदी पहाड़ थे। कहीं जंगलों में दलदल थे, कहीं पहाड़ों के इधर उधर जंगलों पर मँडराते हुये बादलों की क्षणभंगुर छाया थी। वे लोग ऐसे देशों मे भी होआए थे जहां पीले छुहारे के और सरों के वृक्ष थे, झाऊ, हरित मेहदी और चिकनाई प्रद वृक्ष थे। आरबेला में वे भारतवर्षीय हाथियों की सेना से लड़े थे। कैस्पियन-सागर के निकटस्थ घने जंगलों में उन्हों ने अपनी मांद में छुपे हुये बड़े२ शेरों को जगा दिया था। उन्हों ने ऐसे २ जन्तु देखे थे जो यूरुपीय जन्तुओ की अपेक्षा केवल अद्भुत ही नहीं थे, वरन् अधिक विशालाकार भी थे; अर्थात् गैंडे, दरियाई घोड़े, ऊंट और नील नदी और गंगा के मगर भी देखे थे। जिन्हों ने अनेक रंग और अनेक पोशाक के लोगों से लड़ाई की थी, अर्थात् कृष्णवर्ण मीरिया निवासियों से, गोरे फारसियों से और अफरीका के काले कलूटे हबशियो से। यहां तक कि स्वयं सिकन्दर के विषय में यह बात कही जाती है कि मरते समय उसने अपने जनरल 'नियरचस, को अपने पलंग के पास बैठाया और उस जहाज़ी के कठिन कामों का वर्णन सुन २ कर, (अर्थात सिंधु नदी से फारिस की खाड़ी तक के सफर की कथा) उसे शांन्ति मिली थी। इस विजेता ने ज्वारभाटे का चढ़ाव उतार बड़े आश्चर्य से देखा था। उसने कैस्पियन-सागर की ढूंढ़ खोज करने के लिये जहाज़ बनवाये थे। उसका ऐसा अनुमान था कि कैस्पियन-सागर और कृष्ण-सागर शायद किसी बड़े समुद्र की खाड़ियां हो, जैसे 'नियरचस, ने फारिस की खाड़ी और लाल-सागर को पाया था। उसने पक्का इरादा करलिया था कि मेरे जहाज़ी बेड़े को अफरीका की परिक्रमा करने का उद्योग करना चाहिये और "पिलर्स आफ हरक्यूलीज़" होकर भूमध्य-सागर में आना चाहिये। यह एक ऐसा काम था, जिसके विषय में लोग कहते हैं, कि किसी समय एक बार यह काम 'फ़िरऊन' ने किया था॥

यूनान के केवल बड़े सैनिकों ने ही नहीं वरन् बड़े २ तत्ववेत्ताओं

ने भी इस विजय किये हुए राज्य में बहुत सी ऐसी चीजें पाईं जो उनके लिये बड़ी आश्चर्य्य प्रद वस्तुएं थीं। 'कैलिस्थेनीज़, ने बैबीलान नगर में बहुत से ऐसे कैलडियन ज्यौतिष संबंधी लेख पाये जिनमें १९०३ वर्ष पहले तक का हाल दिया था। ये लेख उसने अरस्तू के पास भेज दिये। चूंकि वे लेख पक्की ईंटों पर थे इसलिये संभव है कि यदि असीरिया नरेशों की मृन्मूर्ति पुस्तक शाला में हाल के खोज करने वाले खोज करैं तो उनकी द्वितीय प्रति भी मिलजावे। मिश्रदेश के ज्यौतिषी 'टालेमी' के पास एक बैबीलान देश की ग्रहण संबंधी पुस्तक थी जिस में सन ईसवी से ७४७ वर्ष पहले तक का हाल दिया हुआ था। ज्यौतिष संबंधी जो जो प्राचीन बातें इस समय तक पाई जाती हैं उनको निश्चय करने के लिये निःसन्देह बहुत काल तक बड़े ध्यान पूर्वक देख भाल करने की आवश्यकता पड़ी होगी। बैबीलान निवासियों ने भूमध्य भागों के लिये वर्ष की लंबाई ऐसी निश्चित की थी जिसमें केवल २५ सेकिंडों से कम की ग़लती है। उनके नाक्षत्रिक वर्ष के अन्दाज़ में मुशकिल से दो मिनट की अधिकता थी। उन्हो ने क्रान्तपातगति को भी जान लियाथा। वे ग्रहण होने के कारणों को भी जानते थे। और अपने कालचक्र की सहायता से जिसे वे 'सैरस' कहते थे वे ग्रहणकाल पहले से बतला सकते थे। उनके कालचक्र के मान के अटकल में, जो ६५८५ दिन से अधिक है, केवल साढ़े उन्नीस (१९½) मिनटों से कमही की ग़लती है॥

ऐसी २ बातें उस धैर्य और चतुराई का अविरोधनीय प्रमाण हैं जिनसे मेसोपोटेमिया में ज्यौतिष विद्या का प्रचार हुआ और इसका भी अच्छा प्रमाण हैं कि उचित यांत्रिक सहायता के विनाही वह विद्या बहुत कुछ पूर्णता को पहुंच गई थी। इन प्राचीन दर्शकों ने सितारों की एक सूची बनाई थी और राशिचक्र को बारह राशियों में बिभाजित कियाथा। उन्होने दिन तथा रात को बारह घंटों में विभाजित कियाथा। अरस्तू के कथनानुसार उन्होने चन्द्रमा द्वारा नक्षत्र-ग्रास की बहुत काल तक जांच पड़ताल की थी। उनको सूर्य सम्प्रदाय की बनावट का शुद्ध ज्ञान था, और वे ग्रहों की स्थिति के

हुआ सूर्य मनुष्यों के पूजन के हेतु सर्वोत्तम व्यक्ति मानागया था। एशिया निवासी जातियों में सम्राट से बढ़कर किसी का मान नहीं है। और आकाश में सूर्य निकलते ही अन्य सब वस्तुएं विलीन होजाती हैं॥

बहुत से बड़े बड़े संकल्पों को अपूर्ण छोड़, तैंतीसवां वर्ष पूरा होने के पहलेही बैबीलान नगर में सिकन्दर असमय मर गया। लोग ऐसा भी सन्देह करते हैं कि उसे विष दियागया। उसकी प्रकृति ऐसी उद्दण्ड होगई थी, और उसका क्रोध ऐसा भयंकर हो उठा था कि उसके जनरल और उसके गाढ़े मित्र भी सदैव सभीत रहा करते थे। क्लाइटस नामक अपने एक मित्र को उसने क्रोध में आकर कटार भोंक दी "कैलिसथिनीज़" को जो उसके और अरस्तू के बीच का मध्यस्थ था, फांसी दिला दी। अथवा एक सत्य घटना जानने वाले के कथनानुसार उसने उसे पहले शिकजे में खींचा तदनन्तर सूली दिला दी। अपनी रक्षा के हेतुही ऐसा हुआ होगा कि षड्यन्त्रियों ने उसके बध का संकल्प कर लिया हो। परन्तु इस कार्य के संबध में अरस्तू का भी नाम लेना निःसन्देह बड़ी बदनामी की घटना है। वह ऐसा मनुष्य था कि सिकन्दर का किया हुआ बुरे से बुरा अपकार सह लेता पर ऐसे बड़े पाप कर्म में कदापि सम्मिलित न होता।

(सिकन्दर के मरने के अनन्तर) बहुत वर्षों तक बड़ी गड़बड़ी और खून खराबी रही। मकदूनिया के जनरलों के राज्य बांट लेने पर भी वह गड़बड़ न मिटी। इन परिवर्तनों में से एक घटना की ओर हमारा विशेष ध्यान आकर्षित होता है। वह यह है कि 'टालेमी' जो सुन्दरी "आरसिनो" नामक रक्षिता स्त्री के गर्भ से पैदा हुआ फिलिफ राजा का पुत्र था, और जो लड़कपन ही में सिकन्दर के साथ साथ जिलावतन किया गया था। जब उनपर उनके पिता ने क्रोध किया था, और जो बहुत सी लड़ाइयों और चढ़ाइयों में सिकन्दर का साथी रहा था, मिश्रदेश का गवर्नर होगया और अन्त में वहां का राजा बनगया।

रोड के घेरे में 'टालेमी' ने उस नगर के निवासियों की ऐसी उत्तम सेवा की थी कि उसकी कृतज्ञता में उन्होंने उसको दैवी आदर से

सम्मानित किया और उसे अपना रक्षक कहने लगे। उसी उपाधि (टालेमी रक्षक) से मकदूनिया वंशी अन्य मिश्रनरेशों से वह अब भी पहचाना जाता है।

उसने अपनी राजधानी, देश के पुराने राज्यनगरों में से किसी में न जमाकर केवल अलेग्ज़ैंड्रिया में स्थापित की, 'जूपिटर एमन' के मन्दिर पर चढ़ाई करने के समय सिकन्दर ने उस नगर की नींव इस विचार से डलवाई थी कि वह नगर एशिया और यूरप के मध्य का एक व्यापारी स्थान हो सकैगा। यह बात विशेष कहने के योग्य है कि केवल सिकन्दरही इस नगर में बसाने के लिये पैलस्टाइन से यहूदियों को नहीं लाया था; और केवल टालेमी रक्षक ही जरुसलिम के घेरे के बाद एक लाख अधिक यहूदी नहीं लाया था, वरन् उसके उत्तराधिकारी फिलैडेल्फस ने मिश्र निवासी मालिकों को बदले में उचित रुपया देकर एक लाख अठ्ठानवे हज़ार यहूदियों को गुलामी से छोड़ाकर वहां बसाया था। इन यहूदियों को वेही अधिकार प्राप्त थे जो मकदूनिया निवासियों को थे। इस आदरयुक्त वर्ताव के प्रभाव से उनके बहुत से देश निवासी और बहुत भाषा बोलने से सीरिया प्रदेश वासी स्वयं मिश्र देश में आए। इन लोगों को 'यूनानी वाले यहूदियों" का उपनाम दिया गया। इसी भांति 'रक्षक' की दयालु गवर्नमेंट से लालच पाकर बहुत से यूनान निवासी भी उस देश में आ बसे, और 'परडीकास' और 'ऐंटीगोनस' के आक्रमणों ने दिखा दिया कि यूनानी सिपाही अन्य मकदूनी जनरल की सेवा छोड़कर उसकी सेना में नौकरी करने की इच्छा करते थे।

इस कारण सिकन्दरिया नगर में तीन प्रथक प्रथक जाति के लोग निवास करते थे। (१) स्वदेशी मिश्र निवासी, (२) यूनानी और (३) यहूदी। यह ऐसी बात है जिसका बहुत कुछ प्रभाव अब भी यूरुप के वर्तमान धार्मिक विश्वास में पाया जाता है॥

यूनानी कारीगरों और यूनानी इंजिनियरों ने सिकन्दरिया नगर को प्राचीन जगत में अधिक सुन्दर नगर बना दिया था। उन्हों ने उसको बड़े बड़े महलों, देवालयों, और नाट्यशालाओं से भर

ग्रंथों का अनुवाद होता अथवा नक़ल होती तब इतना अधिक धन दिया जाता था जो विश्वास से बाहर है, जैसा कि 'टालेमीफिलेडेल-फस की आज्ञानुसार।यार्कबिल के सत्तर मनुष्य कृत अनुवाद मे हुआ ॥

(२) विद्या के बढ़ाने के विषय में--अजायबघर के मुख्य तात्पर्य्यों में से एक यह भी था कि वह स्थान ऐसे लोगो का घर हो जावै जो विद्याध्ययन करना चाहते थे। और उनके रहने और जीवन निर्वाह का प्रबन्ध सरकारी रुपये से होता था। कभी कभी राजा स्वयं उनके साथ भोजन करता। ऐसे आनन्दप्रद सुअवसरों की कथाये अबतक प्रचलित हैं। अजायबघर के असली प्रवंध मे वहां के निवासी जन चार विभागों में विभाजित थे; अर्थात साहित्य, गणित, ज्योतिष और वैद्यक। छोटी छोटी शाखाओ के ठीक ठीक विभाग इन्हीं चार बड़े विभागों के अन्तरगत होते थे। इस भांति प्राकृतिक इतिहास, वैद्यक की शाखा मानी जाता था। एक बहुत बड़ा विख्यात पुरुष इस कारखाने का मुखिया था और उसकी भलाई करना उसका साधारण धर्म था। 'डेमीट्रियस फैलेरियस' जो स्यात उस समय का सर्वाधिक विद्वान पुरुष था और जो बहुत दिनो तक एथेंस का गव-र्नर रहा था इस पदवी पर नियत किया हुआ पहला पुरुष था। इसके अधीनस्थ पुस्तकालयाध्यक्ष का पद था। कभी इस पद पर वे मनुष्य थे जिनके नाम आजतक प्रसिद्ध चले आते हैं, अर्थात 'एरैटास-थेनीज़' और 'अपालोनियस रोडियस' ॥

इस अजायबघर से संबन्ध रखने वाले एक बनस्पतिशास्त्र सम्ब-न्धी और एक पशुशास्त्र सम्बन्धी उद्यान थे। ये उद्यान, जैसा कि उनके नाम से ही प्रगट है, बनस्पति और पशुओं सबंधी विद्या को सरल करने के तात्पर्य्य से थे। एक ज्योतिष संबंधी बेधशाला भी थी जिसमें कंकणाकार गोले, भूगोले, अयन सबंधी और भूमध्य-रेखा संबधी चक्र, उन्नतांशमापकयंत्र, स्थानभेद विषयक नियन, और उस समय के प्रचलित यंत्र थे। विभागसूचक यंत्रों के विभागचिन्ह अंशो और षष्ठमांशों में थे। इस बेधशाला की भूमि पर एक मध्यान सूचक रेखा खिची थी। ठीक समय और ठीक सर्दी गर्मी नापने के यन्त्रो की बड़ी

कमी थी। ठीक समय जानने के लिये 'टेसीवियस' की जलघड़ी ठीक काम नहीं देती थी, पानी के प्याले में उतराता हुआ जलमापकयंत्र सर्दी गर्मी नापने में ठीक काम नहीं देता था। वह सर्दी गर्मी के परिवर्तनों को (पानी के) हलकेपन वा भारीपन के अनुसार नापता था। फिलैडेलफस जो बुढ़ापे में मृत्यु से बहुत ही अधिक डरने लगा था, एक रासायनिक औषधि निकालने में अपना बहुत समय लगाता था। इस काम के लिये उस अजायबघर में एक रासायनिक प्रयोगशाला भी थी। सामयिक दुराग्रहें के होते हुए भी, और विशेष कर मिस्र निवासियों के दुराग्रहें के होते हुए, वैद्यक विभाग में चीरफाड़ करने के हेतु एक शरीरविच्छेद-भवन भी था। इसमें केवल मुर्देही नहीं चीरे फाड़े जाते थे वरन व.स्तव में वे जीवित मनुष्य भी चीरे फाड़े जाते थे जिन्हें किसी अपराध में मृत्यु दंड हुआ हो॥

(३) विद्या के प्रचार के विषय में-इसी अजायबघर में व्याख्यानों, संभाषणें और अन्य उचित ढंगों से मनुष्योपयोगी विद्या के विविध विभाग सिखलाये जाते थे। इस बड़े मानसिक शक्ति संबंधी केन्द्र-स्थल में सब देशों से बहुत से विद्यार्थी आते थे। ऐसा कहा जाता है कि एक समय में १४००० से कम विद्यार्थी न थे। तदन्तर क्रिस्तान धर्म ने भी यहीं से कुछ बहुत प्रख्यात पादरी पाये, जैसे "क्लीमेंस अलेगजैंड्री" "ओरीजेन", और "अथनेसियस"॥

इस अजायबघर का पुस्तकालय उस समय जल गया जब ज्यूलियस सीजर ने सिकन्दरिया नगर को घेर लिया था। इस बड़ी हानि की पूर्ति करने के लिये परगैमस नरेश यूमिनीज़ की जमा की हुई पुस्तकें मार्कऐएटोनी ने क्लियोपैट्रा रानी को प्रदान करदीं। असल में यह पुस्तकालय टालेमी नामक राजाओं के पुस्तकालय के मुकाबले के लिये बनाया गया था। यह पुस्तकालय सिरैपिस के मन्दिरवाले पुस्तकालय में शामिल कर दिया गया।

अब संक्षेपत. यह वर्णन करने को शेष रहा कि इस अजायबघर का तत्वात्मकधार क्या था और उससे मनुष्योपयोगी विद्या के भंडार में कौन २ सी बातें अधिक हुईं।

के साथ कहता था कि शिक्षा ही नेकी की सच्ची नीव है, क्योंकि अगर हम जान जांय कि भलाई क्या वस्तु है तो हम उसके करने की ओर भी झुकेंगे। ज्ञान के स्वीकृत तत्वों के देने के लिये हमें अपने इन्द्रियजन्य ज्ञान पर विश्वास करना चाहिये, और तदनन्तर बुद्धि भी उचित रीति से उनसे मिल जायगी। इस सिद्धान्त में जेनो और अरस्तू की समानता प्रत्यक्ष देख पड़ती है। प्रत्येक अभिलाषा, कामेच्छा, और मनोरथ अपूर्ण ज्ञान से पैदा होता है। हमारा स्वभाव भाग्य से हमारे माथे मढ़ा गया है। परन्तु हमें अपने मनोविकारों को अपने वश में रखना सीखना चाहिये। और बुद्धि के अनुसार सबही बातों में स्वच्छन्द, समझदार, और नेक होकर जीवन व्यतीत करना चाहिये। हमारा जीवन बुद्धि सम्बंधी होना चाहिये, हमको सब सुखों और दु:खों को समान दृष्टि से देखना चाहिये। हमको यह बात कभी न भूलनी चाहिये कि हम स्वच्छन्द मनुष्य हैं न कि जनसमूह के गुलाम। 'स्टोइक, कहा करता था कि "मेरे पास एक ऐसा ख़जाना है जिसे सब दुनिया भी मुझसे नहीं छीन सकती--अर्थात मेरी मौत मुझसे कोई नहीं छीन सकता"। हमको याद रखना चाहिये कि प्रकृति अपने कामों में सर्वव्यापकता का लिहाज़ रखती है और किसी एक व्यक्ति के साथ कुछ रियायत नहीं करती, वरन् उन व्यक्तियों को अपने कार्य्यसाधन का द्वारा बनाती है। इसलिये हमको तबभव्यता को मानना चाहिये और नेकी के लिये आवश्यक समझ कर विद्या, संयम, सहन-शीलता, और न्याय को बढ़ाना चाहिये। हमको स्मरण रखना चाहिये कि प्रत्येक वस्तु चचल अवस्था में है। बिगड़ने के बाद फिर बनती है। और बनने के बाद बिगड़ती है। और यह भी याद रखना चाहिये कि एक ऐसी दुनिया में जहां प्रत्येक वस्तु मरती है, मृत्यु के लिये शोक करना व्यर्थ है। जैसे एक जलप्रपात साल दरसाल अपना एकही सा रूप रखता है यद्यपि उसका पानी सदैव बदला करता है, वैसेही प्रकृति का चेहरा पदार्थों के बहाव के सिवाय कुछ नहीं है जिस से अस्थिरताही देख पड़ती है। यह सब विश्वास समष्टि रूप से बदलने वाला नहीं है। सिवाय अन्त-

रिक्ष, परमाणुओं, और शक्ति के कोई वस्तु सनातन नहीं है। प्राकृतिक वस्तुओं के रूप जब हम देखते हैं वे क्षणिक हैं। वे सब अवश्य मिट जाने वाले हैं।

हमको अवश्य स्मरण रखना चाहिये कि मनुष्यों में से अधिक जन, पूर्णतः शिक्षित नहीं हैं, इसलिये हमको अपने समय के धार्मिक विचारों का व्यर्थ खंडन न करना चाहिये। हमको स्वयं इतना जान लेना काफी है कि संसार मे एक सर्वमान्यशक्ति तो है पर कोई सर्वोच्च व्यक्ति नहीं है। संसार मे एक अदृष्ट सिद्धान्त है, पर कोई साकार ईश्वर नहीं है। उस सिद्धान्त के लिये ऐसा कहना कि उसका रूप, विचार, और मनोभाव आदमियों केसे हैं, इतनी बड़ी बदनामी नहीं होसकती, जितनी कि असंभवता सिद्ध होती है। सब प्रकार की ईश्वरवाणी निश्चय ही केवल कल्पना मात्र है। जिसको मनुष्य दैवयोग कहते हैं वह केवल अज्ञात कारण का प्रतिफल है। दैवयोगों के लिये भी नियम है। परमेश्वर कोई वस्तु नहीं है, क्योंकि प्रकृति अरोक नियमों के साथ आगे बढ़ती है और इस लिहाज़ से यह विश्व केवल एक बड़ा स्वयं चलनेवाला यत्र है। उस जीवन शक्ति को जो तमाम संसार मे फैली हुई है अपढ़ मनुष्य ईश्वर कहते हैं। वे सुधार जिनमें होकर सब वस्तुओं को गुजरना पड़ता है, बेरोक ढंग से हुआ करते हैं, इस कारण यह कहा जा सकता है कि होनी के अनुसार इस संसार की उन्नति एक बीज के समान है, वह एक अग्रनिर्धारित ढंग से बढ़ सकता है।

मनुष्य की जीवात्मा एक सजीव ज्वाला की चिनगारी है अर्थात् उसी सर्वव्यापी जीवन सिद्धान्त की। गर्मी के समान वह एक से दूसरे में जाती है और अन्त में उसी सर्वव्यापी वस्तु में मिल जाती है जिस से वह निकली थी। इसलिये हमें विनाश की आशा नहीं करना चाहिये, वरन् फिर मिल जाने की आशा ठीक है, और जैसे एक थका हुआ मनुष्य निद्रा की अचैतन्यता से सुखानुभव की आशा रखता है ऐसेही दुनिया से उदासीन तत्वज्ञानी को प्रलय सुख की आशा करनी चाहिये। परन्तु इन बातों पर हमें सन्देह सहित विचार करना

नियो ने किया था वह सन् ईस्वी से ४३२ वर्ष पहिले वाले साल के उत्तरायण सम्बंध रखता है, जिसे 'मिटन' और 'यूकटेमन' ने किया था। पहिले पहिल हमको उसी विद्यालय में उन निरीक्षणों की सम्मिलित प्रथा मिलती है जो कोणमापक यन्त्रों द्वारा की जाती थी, और त्रिकोणमितिविद्या के नियमों से गणना की जाती थी। उस समय ज्योतिष विद्या ने ऐसा रूप धारण कर लिया था, जिसको आगे आने वाले समयों ने केवल ठीक ही किया है॥

न तो इस पुस्तक में अटही सकता है और न इस पुस्तक का तात्पर्य्य ही है कि मनुष्योपयोगी विद्या के भंडार को जो लाभ सिकन्दरिया के अजायबघर से हुआ है उसका सविस्तर विवरण दिया जाय बस इतनाही अलम है कि पाठक जान ले कि वे लाभ किस प्रकार के थे। सविस्तर हाल जानने के लिये मैं अपनी बनाई हुई "हिस्ट्री आफ़ दी इन्टेलेक्चुअल डिवलपमेंट आफ यूरोप" History of the intellectual development of Europe) का छठा अध्याय पढ़ने की सिफ़ारिस करता हूं॥

यह बात अभी कही जा चुकी है कि स्टोइक का तत्वज्ञान इस बात में सन्देह करता है कि मनुष्य की मानसिक शक्ति ठीक सचाई की खोज नहीं कर सकती। जब जेनों ऐसे सन्देहों में पड़ा हुआ था, यूकलिड अपनी वह बड़ी पुस्तक लिख रहा था जिसके भाग्य में यह बदा था कि सब मनुष्यजाति भर के लोगों में से कोई भी उसे काट नहीं सकेगा। बाईस शताब्दियों से अधिक समय बीतने पर भी वह पुस्तक अबतक यथार्थता, स्पष्टता और ठीक प्रमाणों का नमूना बनी हुई है। इस बड़े रेखागणितज्ञ ने केवल अन्य गणित सम्बधी विषयों पर ही ग्रंथ नहीं लिखे (जैसे शंकुच्छिन्न विद्या और पोरिज़्मस) वरन् कहा जाता है कि उसने स्वरशास्त्र, और दृष्टिविद्या पर भी पुस्तकें लिखी हैं। दृष्टिविद्या वाली पुस्तकों में उन किरणों सम्बंधी प्रतिज्ञाओं पर वादविवाद किया गया है जो आंख से निकल कर वस्तु तक जाती हैं॥

सिकन्दरिया के गणितज्ञों और पदार्थज्ञों ही मे 'आरकैमेडीज़' को भी सम्मिलित करना चाहिये यद्यपि वह वास्तव मे सिसिली में

रहता था। उसके बनाये हुये गणित ग्रंथों में से दो ग्रंथ गोला और बेलन सम्बंधी विषयों पर थे, जिन मे उसने प्रमाण दिये थे कि गोले का घनात्मक मान उसके गिर्द घूमने वाले बेलन के मान से दो तिहाई होता है। वह इस विद्या का इतना आदर करता था कि उसने आज्ञा दे दी थी कि इसकी शकल मेरे कबर के पत्थर पर खोद दी जाय। उसने वृत्त के चतुर्थांश और अनुवृत्त पर भी कुछ लिखा है। उसने सूच्याकार धरातलों और अंड-गोलाकार धरातलों पर भी पुस्तकें लिखी हैं। और सर्पाकार धरातलों पर भी पुस्तक लिखी है जो अबतक उसके नाम से प्रसिद्ध है और जिसके बनाए जाने के लिए सिकन्दरिया निवासी 'कोनन' नामक उसके एक मित्र ने सम्मति दी थी। गणितविद्याविशारद की हैसियत से यूरोप ने लगभग दो हजार बरस तक उसकी बराबरी का आदमी नहीं पैदा किया। पदार्थविद्या में उदकस्थितिविद्या की नीव उसीने डाली थी; वस्तुओं के गुरुत्व जान लेने के लिए एक ढंग निकाला था; उतराते हुए पदार्थों के समान गुरुत्व पर भी विवेचना की थी; तराजू की डंडी का ठीक सिद्धान्त दरयाफ़ कर लिया था और नील नदी का पानी उठाने के लिये एक व्यावर्त्तन कील ईजाद की थी जो अब तक उसके नाम से चलती है। अनन्त व्यावर्त्तन कील का बनाने वाला भी वही कहा जा सकता है, और एक विशेष रूप का आग्नेय शीशा भी उसी का बनाया कहा जाता है जिस से, लोग कहते हैं कि, सिरैक्यूज के घेरे के समय उसने रोम वालों के जहाज़ी बेड़ों में आग लगा दी थी।

इरैटास्थेनीज़, जो किसी समय पुस्तकालय का अध्यक्ष था बहुत सी आवश्यक पुस्तकों का कर्ता था। उनमे से अयनरेखाओं के बीच का फासिला निश्चित करना, और पृथ्वी का परिमाण निश्चित करने का उद्योग वर्णनीय बातें है। उस ने महाद्वीपों के जोड़ और फैलाव, पर्वत श्रेणियों की स्थिति, बादलों का काम, पृथ्वी-खण्डों का धस जाना, पुराने समुद्रतलों का ऊपर उठना, डारडैनेलीज़ और जिब-राल्टर स्थलडमरूमध्य का काटना और यूगज़ाईन समुद्र का सम्बन्ध-

आकाशगङ्गा की प्रकृति भी वर्णन करता है, और बड़ी विद्वता के साथ ग्रहों की चालों पर विवाद करता है। इस बात से वैज्ञानिक प्रख्याति से टालेमी का एक दावा और अधिक हो जाता है। अपने निरीक्षणों को प्राचीन ज्योतिषियों के निरीक्षणों से मिला कर उसका ग्रहकक्षाओं सम्बन्धी निश्चय पूर्ण हो गया था, उन निरीक्षणों में टाईमोकेरिस कृत शुक्र ग्रह के निरीक्षण सम्मिलित थे।

सिकन्दरिया के अजायबघर में टिसीबियस ने अग्नि-कल ईजाद की थी। उसके शिष्य 'हीरो' ने उसमें दो बेलन लगा कर उसकी और उन्नति की। वहां पहिली धूमकल भी काम करती थी। यह भी हीरो की ईजाद थी, और यह धौंकनी के सिद्धान्त पर एक प्रतिक्रिया सम्बन्धी कल थी। सिरैपिस के बड़े दालान की निस्तब्धता टिसी-बियस और अपालोनियस की जलघड़ियों से भङ्ग होती थी जो बूंद बूंद पानी गिरा कर समय की माप करती थीं। जब रोमनपत्रा इतना गड़बड़ हो गया था कि उसके सुधारने की बहुत ही आवश्यकता थी तब ज्यूलियस सीज़र सिकन्दरिया से सिजिनीज़ नामक ज्योतिषी को लाया था। उसकी सलाह से चान्द्रवर्ष उठा दिया गया, सर्कारी साल पूर्ण रीति से सूर्य्य के अनुसार बनाया गया, और ज्यूलियन पत्रा प्रचलित किया गया।

मिसर देश के मकदूनिया वंशी राजाओं पर उस ढंग के कारण जिस ढंग से वे अपने समय के धार्मिक विचारों प्रति विचार करते थे दोष लगाया गया है। उन धार्मिक विचारों को नीच श्रेणी के लोगों पर हुकूमत करने का द्वार पाकर उन्हों ने उनको राजकीय छलों के साधन करने के हेतु बिगाड़ डाला था। समझदार लोगों को वे तत्त्वज्ञान सिखाते थे॥

परन्तु निःसन्देह उन्हों ने इस नीति की रक्षा उन अनुभवों से की जो उन्हें उन बड़ी चढाइयों में हुए थे जिन्होने यूनानियों को संसार की अग्रगण्य जाति बना दिया था। उन्हों ने देख लिया था कि उनके पुरुषाओं के देश के देवताओं सम्बन्धी विचार केवल काल्पनिक कथाएं हो चुकी थीं, और वे आश्चर्य्यप्रद बातें जिनसे प्राचीन कवियों ने भूमध्यसागर को शृंगारित किया था अमूलक छल छद्म होना

प्रमाणित हो गई थीं। आलिम्पस पहाड पर से उसके देवता गायब हो चुके थे, और वास्तव में स्वयं आलिम्पस ही का एक काल्पनिक वस्तु होना प्रमाणित हो चुका था। नर्क का रोब जाता रहा था, और उसके लिये कोई जगह नहीं थी।

एशियाई रूम के जंगलों और गुफाओं और नदियों से वहां के स्थानिक देवता और देवी रवाना हो चुके थे. यहां तक कि उनके भक्त लोग सन्देह करने लगे थे कि आया वे वहां थे या नहीं। यदि अब तक सीरिया निवासी कुमारियां अपने प्रेम गीतों में अडोनिस के भाग्य के लिये रोती थीं तो यह बात केवल स्मारक रूप थी, न कि सत्य बात ' फारिस देश ने बार बार अपना जातीय विश्वास बदला था ज़रदुस्त के श्रुतियों के बदले उसने द्वैतवाद अंगीकार किया था, तदनन्तर नवीन राजनैतिक प्रभावों से उसने मेंजियन धर्म स्वीकार किया था। उसने अग्नि का पूजन किया था, और पहाड़ों की चोटियों पर अपने हवन कुण्ड जला रखे थे। उसने सूर्य्य की पूजा की थी। जब सिकन्दर वहां आया तब वह शीघ्रता के साथ विराट धर्म की ओर गिर रहा था।

एक ऐसे देश में जहां के देशी देवता राजनैतिक कठिनाइयों के समय प्रजा की रक्षा करने में असमर्थ पाये जाते हैं धर्म परिवर्तन अवश्यम्भावी है। मिसर देश के महामान्य देवतागण जिनके आदर के हेतु सूच्याकारस्तंभ और मंदिर बनवाये गये थे एक परदेशी विजयी पुरुष की तलवार के सामने बार बार नतमस्तक हुये थे। मिश्र देश में भारी भारी मूरतें और नृसिंह रूपधारी देवताओं का मान जाता रहा था; उन पर से लोगों का विश्वास हट गया था। अब नवीन दूसरे देवताओं की आवश्यकता थी, और सिरैपिस नामक देवता उसीरिस नामक देवता से अधिक सम्मान पाने लगा था। सिकन्दरिया नगर की दूकानों और गलियों में हज़ारों यहूदी ऐसे थे जो उस ईश्वर को भूल गए थे जो मंदिर के भीतर रहा करता था।

मौखिक पुरानी कथा, ईश्वर वाक्य, और समय इन सबों ने अपना प्रभाव खोदिया था। यूरोपियन देवताओं सम्बन्धी मौखिक

थीं। वह पराजय जो उन्होंने लगातार उठाई किसी भांति उनके लिये विपत्ति नहीं हुई॥ आपस के सदैवकालीन युद्धों का अन्त होगया और वे विपत्तियां जो उनके झगड़ों से पैदा हुई थीं सर्वत्र व्यापक शान्ति मे परिवर्तित हो गई॥

केवल अपने विजय के चिन्हो ही की भांति नहीं, वरन् अपने गर्व के संतोष की भांति भी रोम का प्रजासत्तात्मक राज्य विजित जातियो के देवताओं को रोम में लाया। घृणासूचक सहनशीलता के साथ उसने उन सब देवताओं का पूजन होना भी प्रचलित रहने दिया। वह सर्व शक्तिमत्ता जो अपने अपने स्थान में सब देवता काम मे लाते थे, सब देवी और देवताओं के एकट्ठे होने से एक दम विलीन हो गई। जैसा कि हमने देखा है, भौगोलिक अन्वेषणों और वैज्ञानिक कटाक्षों से प्राचीन धर्म का विश्वास पूर्ण रूप से डिग गया था। अब रोम की इस कूटनीति से उसका सर्वथा अन्त होगया॥

सब विजित प्रान्तों के राजा विलीन हो गये थे और उनके स्थान में एक सम्राट होगया था। देवता भी विलीन होगये थे। उस संबध का ख्याल करके, जो सदाही राजनैतिक और धार्मिक विचारों में रहा है, उस समय यह कुछ आश्चर्य्य की बात न थी कि अनेक-देव-वाद अद्वैत वाद मे परिवर्तन होने की ओर झुकाव प्रगट करे। तदनुसार पहिले तो मृतकों का देव समान आदर होने लगा और अंततः वर्तमान सम्राट का भी वैसाही आदर होने लगा।

जिस सरलता से ये सब देवता पैदा करलिये गये वह सरलता एक दृढ सभ्य प्रभाव रखती थी। एक नवीन देवता का बनजाना, पुराने देवता की असलियत पर हँसी उड़ाना है। पूर्वीय जगत के अवतार और पश्चिमीय जगत के देव-मानव आलिम्पस (स्वर्ग भूमि) को शीघ्रता सहित देवताओं से भर रहे थे। पूर्वीय जगत में देवता स्वर्ग से उतरते थे और मानव शरीर धरते थे, पश्चिमीय जगत में मनुष्य पृथ्वी से ऊपर चढ़ते थे और देवताओं में जा मिलते थे। यह यूनान का सदेहात्मक सिद्धान्त नहीं था जिसने रोम को संदेहमय

बनादिया, वरन् धर्म की अनुचित बातों ने ही विश्वास के मूल का रस चूस लिया ॥

देश वासियों के सबही समूहों ने अद्वैतवादी मत को एकही प्रकार की शीघ्रता से नहीं ग्रहण किया। व्यापारियों पर, कानूनदाओं पर और सिपाहियों पर जो अपने अपने पेशे की प्रकृति के अनुसार जीवन के परिवर्तनों को अधिक जानते मानते हैं और जिनके बुद्धि विचार अधिक बड़े होते हैं, सबसे पहले प्रभाव पड़ा, और मज़दूरों और किसानों पर सबसे अन्त में।

जब सैनिक और राजनैतिक विचार से राज्य प्रबंध अपनी पराकाष्ठता तक पहुंच चुका था उस समय धार्मिक और सामाजिक रूप से वह अपने दुराचार की चोटी तक पहुंच गया था। वह पूर्ण रीति से विषयाशक्त हो गया था। उसका सिद्धान्त यह था कि जीवन को खूब मज़ेदार बनाना चाहिये, और भलाई केवल विषयों को सुस्वाद बनाना ही है और संयम उन विषयों को बढ़ाने का द्वार है। सोने से चमकते हुये और रत्नों से जड़े हुये भोजनागार, अति सुन्दर वस्त्र धारी सेवक, स्त्री समाज की मनोहारी बातें जहां सबही स्त्रियां स्वच्छन्दाचारिणी थीं, बड़े बड़े स्नानागार, नाटक शालायें, बड़े बड़े महल, बस ऐसीही वस्तुएं रोमन लोग चाहते थे। संसार के विजेताओं ने जान लिया था कि शक्तिही एक पूजने योग्य वस्तु है। उसीसे वे सब वस्तुएं जो कठिन परिश्रम और व्यापार से मिली थीं प्राप्त हो सकती हैं। माल असबाब और भूमि ज़ब्त कर लेना, प्रान्तों पर कर लगा देना सफलता से किए हुए युद्ध का इनाम है, और सम्राट महोदय शक्ति का प्रतिरूप हैं। वहां एक सामाजिक विभव भी था, परन्तु वह पुराने मध्यस्थ संसार का चमकीला कलुष था।

सीरिया नामक एक पूर्वीय प्रान्त में कतिपय दीन हीन मनुष्यों ने नेक और धार्मिक कामों के लिये एका कर लिया था। जिन सिद्धान्तों को वे मानते थे वे सर्वलोकव्यापी भाइचारे के उन विचारों से मिलते जुलते थे जो विजित राज्यों के एकीभूतत्व से पैदा हुए थे। वे यहूदियों के सिखाए हुए सिद्धान्त थे।

धार्मिक उत्सवों में सम्मिलित होने से इन्कार किया। यह सैन्यद्रोह इस शीघ्रता से फैला, ऐसी कठिन आवश्यकता आपड़ी कि डायोक्लीटियन नामक सम्राट को यह विचार करने के लिये कि अब क्या करना चाहिए विवश एक सभा करनी पड़ी। कदाचित इस दशा की कठिनाई का तब ठीक अन्दाज हो सकेगा जब यह जान लिया जाय कि स्वयं डायोक्लीटियन की स्त्री और पुत्री भी ईसाई धर्मावलम्बिनी थीं। वह एक बड़ी योग्यता और बड़े राजनैतिक विचारों वाला मनुष्य था। उसने यह बात तो मान ली कि नवीन ईसाई समूह का सामना करना राजनैतिक आवश्यकता है, पर तब भी उसने विशेष रूप से आज्ञा दी कि रक्तपात न होना चाहिए॥ परन्तु प्रजा के क्रोधजनित हलचल को कौन रोक सकता है। निकोमोडिया का गिरजाघर भूमि में मिला दिया गया। इसके बदले में राज्य महल मे आग लगा दी गई, और एक राजाज्ञा का खुल्लमखुल्ला निरादर किया गया और आज्ञा-पत्र फाड़ डाला गया। सेना में जो ईसाई अफसर थे वे पदच्युत किए गए; और चारों ओर मार काट होने लगी। इन घटनाओं का होना ऐसा अनिवार्य्य था कि स्वयं सम्राट इस मारकाट को नहीं रोक सके।

अब यह बात प्रगट होगई थी कि राज्य मे ईसाइयों का एक शक्तिमान समूह है जो उन पर किए गए अत्याचारों को सहते सहते क्रोध से उत्तेजित हो उठा हैं और उसने निश्चय कर लिया है कि अब और अधिक दिनों तक अत्याचार न सहैंगे। डायोक्लीटियन के सन् ३०५ में स्वयं राज्य त्याग देने के बाद, कान्सटेंनूटाईन नामक व्यक्ति जो राज्यपताका के दावेदारों में से एक था यह देखकर कि ऐसी कूटनीति से मुझे क्या लाभ होंगे ईसाई समूह के सरदार होने के लिये अग्रसर हुआ। इस बात से उसे राज्य के प्रत्येक भाग में ऐसे मनुष्य और स्त्रियां मिलीं जो उसके हेतु अग्नि और तलवार का सामना करने के लिये प्रस्तुत थे। इसी बात से उसे सेना के प्रत्येक विभाग से अटल अनुचर मिले। मिलबीयन नामक पुल के निकट एक जय पराजय सूचक युद्ध में उसे विजय प्राप्त हुई। मैकूसीमीन की मृत्यु और तदनन्तर लिसीनियस की मृत्यु ने सब रोकों को हटा दिया। वह सीज़र

नामक राजाओं के राज्यसिंहासन पर आसीन हुआ। यही पहिला ईसाई सम्राट था।

पदवी, लाभ, और शक्ति वेही वे वस्तुएं थीं जिनके लोभ से लोग इस विजयी जाति में सम्मिलित होते थे। दुनियादार लोगों के झुंड के झुंड जिनको उस जाति के धार्मिक विचारों की कुछ भी परवाह न थी उस जाति के सरगर्म सहायक हो गये; परन्तु मन से मूर्ति पूजक थे, इसलिये उनका प्रभाव शीघ्र प्रगट हुआ और ईसाई मत में मूर्ति पूजन सम्मिलित होने लगा। सम्राट महोदय ने उन लोगों के अधिक धार्मिक न होने के कारण उनके कामों को रोकने के लिये कुछ भी नहीं किया। परन्तु सन ३३७ ई० में अपने जीवन के अन्त समय तक वह स्वय गिरजाघर के उत्सव सम्बन्धी आवश्यक कार्य्यों में संमिलित नहीं हुआ।

ताकि हम ईसाई धर्म में इस समय किए गए उन सुधारों का साफ साफ अन्दाज़ कर सकें जिन सुधारों के कारण अन्त में वह धर्म विज्ञान का विरोधी हो गया, मिलान करने के लिये हमारे पास ऐसा वर्णन होना चाहिए जिससे ज्ञात हो कि वह धर्म अपने पवित्र समय में कैसा था। सौभाग्य वश ऐसा वर्णन हमें उस पुस्तक में मिलता है जिसका नाम डिफेन्स आफ दी क्रिश्चियन्स अगेंस्ट दी अक्यूज़ेशन्स आफ दी जेंटाईल्स" है, और जो सिवरस के अभियोग के समय रोम नगर में टरस्यूलियन ने लिखी थी। उसने यह किताब सम्राट को नहीं वरन् न्यायाधीशों को सम्बोधन करके लिखी है जो उस अभियुक्त का न्याय करने बैठे थे। यह पुस्तक एक गंभीर और सर्वोत्तम सत्यनिष्ट तर्क है, उसमें वे सब बातें वर्णन की गई हैं जो उस विषय के विधिवार वर्णन में कही जासकती हैं। वह ईसाई धर्म के विश्वास और पक्ष का निरूपण है जो दुनिया भर के विरुद्ध, राज्य नगर में किया जासकता था। वह धर्म सम्बन्धी विलापात्मक और क्रोधपूर्ण निवेदन नहीं है वरन् एक गौरवपूर्ण ऐतहासिक प्रमाणपत्र है। वह ईसाइयों के बनाए हुए प्रारम्भिक ग्रंथों में से सर्वोत्तम ग्रंथ माना जाता रहा है। वह सन् २०० ई० के लगभग बना था।

अपनी देह धारण करने की आज्ञा देगा, और तदन्तर उनको अनन्त मोक्ष वा अनन्त ज्वाला देगा। नर्क की अग्नि वेही छिपी हुई ज्वालायें हैं, जिन्हें पृथ्वी अपने पेट मे बंद किये हुये है। गत समयों मे उसने संसार मे उपदेशक वा पैग़म्बर भेजे है। उन पुराने समयों के पैग़म्बर यहूदी थे, उन्होने अपने अपने भविष्य वाद (क्योंकि वे भविष्य वाद ही थे) यहूदियों से कहे, जिन्होंने उन भविष्यवादों को इन धर्मपुस्तको में इकट्ठा कर रक्खा है। उन्हीं भविष्यवादों पर, जैसा कि कहा गया है, ईशाई धर्म की बुनियाद है, यद्यपि ईसाई लोग रीति भांति में यहूदियों से विरुद्धाचरण करते हैं। हम पर दोष लगाया जाता है कि हम यहूदियो के ईश्वर की नही वरन् एक मनुष्य की पूजा करते हैं, पर बात ऐसी नहीं है। जो सम्मान हम लोग ईसा का करते हैं वह ईश्वर के सम्मान को अपमानित नहीं करता।

इन्हीं पुराने उपदेशकों की योग्यता की बदौलत केवल यहूदी ही ईश्वर के प्यारे भक्त थे। वह स्वय निज मुख से उनसे बातें करने में हर्षित होता था। उसी ने उन लोगो को प्रशंसनीय गौरव तक पहुंचाया था। परन्तु कुटिलता वश उन्हों ने उस से प्रीति करना छोड़ दिया उन्होने उसके पवित्र नियमो को अपवित्र पूजन में परिवर्तित कर दिया। उसने उन्हें जता दिया कि वह उनसे अधिक ईमानदार सेवकों को अपने साथ लेगा और उनके दोषों के कारण उन्हें यह दंड देगा कि उन्हें उनके देश से निकाल देगा। अब वे लोग सारे संसार में फैल गए है, दुनिया के सब भागों में घूमते फिरते हैं, वे अपने जन्मस्थान की वायु का आनन्द नहीं ले सकते, और वे न मनुष्यही को न ईश्वरही को अपना राजा मानते हैं। उसने जैसी उन्हें धमकी दी थी, वैसाही किया भी। उसने दुनिया की सब जातियों और सब देशों में उन्हीं लोगो को अपनी सेवकाई में लिया है जो उनसे अधिकतर दृढ़ विश्वासी हैं। अपने पैगम्बरो द्वारा उसने सर्वसाधारण को जता दिया है कि येही लोग अधिक कृपाभाजन होगे और उनके मध्य में नवीन नियम प्रचलित करने के हेतु एक मसीहा अवतार लेगा। यही मसीहा हजरत ईसा थे जो ईश्वर भी है। क्योंकि ईश्वर से

ईश्वर निकल सकता है, जैसे एक दीपक से दूसरा दीपक जला लिया जाता है। ईश्वर और उसका पुत्र एकही ईश्वर हैं–कोई प्रकाश वही प्रकाश है जिससे वह लिया गया है।

धर्मपुस्तकें ईश्वर के पुत्र का इस संसार में दोबार आना बताती हैं। प्रथम बार दीनता के सहित, और दूसरी बार, प्रलय के दिन, बड़े अधिकारों सहित। यहूदियों ने इस बात को पैगम्बरों द्वारा सुना ही होगा, पर उनके पापों ने उन्हें ऐसा अन्धा कर दिया था कि उन्हों ने उसे पहिले आगमन में नहीं पहिचाना और अब तक व्यर्थ उसके आगमन की आशा कर रहे हैं। वे विश्वास करते थे कि उसके किए हुए अप्राकृतिक सब कार्य्य जादू के काम थे। कानून विशारद लोग और मुख्य मुख्य पुरोहितगण उस से डाह रखते थे, उन्हों ने पाइलेट के सामने उसपर दोष लगाये। उसको सूली दी गई, वह मर गया, और गाड़ दिया गया; और तीन दिन बाद फिर जी उठा। चालीस दिन तक वह अपने शिष्यों के संग रहा। तदनन्तर वह बादल में लपेट लिया गया और आकाश की ओर चला गया। यह बात उन बातों से कहीं बढ़कर सत्य है जो राम्यूलस या अन्य रोमन राजाओं के अकाश तक चढ़ जाने के विषय में सप्रमाण वर्णन की जाती हैं।

तदनन्तर टरस्यूलियन उन भूतों की असलियत और प्रकृति वर्णन करता है जो अपने राजा शैतान की अधीनता में रह कर रोग, वायु के अनियम संचालन, महामारी, और पृथ्वी के फूलों की सत्यानाशी पैदा करते हैं, और जो आदमियों को बहका कर बलिदान करवाते हैं जिससे वे उन बलि के जन्तुओं का रक्त जो कि उनका भोजन है, पासकें। वे ऐसे फुरतीले होते हैं जैसी चिड़ियां; और इस कारण वे उन सब बातों को जान लेते हैं जो पृथ्वी तल पर हुआ करती हैं। वे वायु में रहते हैं और इस कारण वे जो कुछ आकश मे होता है देख लेते हैं, इसी कारण वे मनुष्य विषयक भविष्य बाणियां कह सकते हैं। इसी तरह उन्होंने रोमनगर में प्रख्यात कर दिया था कि परसियस राजा पर विजय प्राप्त होगी, जब कि वास्तव में वे जानते थे कि युद्ध मे जीत हो चुकी है। वे झूठ ही मूठ रोगी को अच्छा

कि वे धर्मपुस्तकें सब सत्य का प्रमाण और माननिरूपक यंत्र हैं, और जो वस्तु उनके प्रतिकूल है वह अवश्य असत्य है।

टरट्यूलियन के इस उत्तम ग्रंथ से हम देखते हैं कि ईसाई धर्म उस समय कैसा था जिस समय वह पीड़ित हो रहा था और अपने जीवन के लिये लड़ झगड़ रहा था। अब हमें यह देखना है कि वही धर्म उस समय कैसा हो गया जब उसे राज्याधिकार मिलगया। "सिवरस" के समय वाले ईसाई धर्म में बड़ा भारी अन्तर है। बहुत से सिद्धान्त जो पिछले समय में मुख्य माने जाते थे पहिले समय में अज्ञात थे।

दो कारणों से क्रिश्चियन धर्म मे मूर्ति पूजन मिल गया। (१) नवीन राजवंश की राजनैतिक आवश्यकताओं से, और (२) नवीन धर्म को निश्चित रूप से फैलाने की कूटनीति से।

(१) यद्यपि ईसाई समूह ने राज्य को राजा देने में अपने को काफी शक्तिमान प्रमाणित कर दिया था, तथापि वह अपने विरोधी मूर्तिपूजन को विनष्ट करने के हेतु अलम् शक्तिमान न था। इन दोनों के झगड़े का यह फल हुआ कि दोनों के सिद्धान्त एक दूसरे में मिल गये। इस बात में क्रिश्चियन धर्म और मुसलमान धर्म से अन्तर पड़ा है। मुसल्मान धर्म ने अपने विरोधी को सर्वथा विनष्ट कर दिया और स्वयं अपने सिद्धान्तों को बिना मिलावट के फैलाया।

कान्स्टेंटाइन अपने कामों से सदैव यह दिखलाता रहा कि वह जानता है कि उसे अपनी सब प्रजा का अपक्षपाती राजा होना चाहिये न कि केवल एक सफलता प्राप्त विरोध का प्रतिनिधि। इसलिये यदि वह ईसाइयों के गिरजे बनवाता था तो वह मूर्ति पूजकों के देवमन्दिर भी फिर से स्थापित कराता था। यदि वह पादरियों की बात सुनता था तो वह आगमियों से भी सलाह लेता था। यदि उसने नीसिया की सभा इकट्ठी की तो उसने भाग्यदेवी की मूर्ति का भी आदर किया; उसने बपतिस्मा की रीति स्वीकार की तो उसने अपनी ईश्वर पदवी वाला तमगा भी ढलवाया। उसकी मूर्ति जो कुस्तुन्तुनिया नगर में संगसमाक के बड़े स्तंभ की चोटी पर थी अपालो देवता की प्राचीन मुर्ति की थी, जिसके चिहरे पर राजा का चिहरा लगा दिया गया था

और जिसका सिर उन कीलों से घिरा हुआ था जो झूठ मूठ ही मानी जाती थीं कि ईसा की सूली के समय काम मे लाई गई थीं। कीले ऐसी लगी हुई थीं कि उनसे एक शोभा प्रद मुकुट सा बनता था।

ऐसा विचार कर कि पराजित किये हुये मूर्तिपूजक समूह के साथ कुछ रिआयतें भी होनी चाहिए, वह उसी समूह के विचारों के अनुसार, अपने दरबारियों के मूर्तिपूजन सम्बन्धी कार्य्यों को कृपा दृष्टि से देखता था। वास्तव में इन कार्य्यों के मुखिया स्वयं उसके वंश के लोग होते थे।

सम्राट को, जो केवल एक दुनियादार आदमी था, जिसका कोई भी धार्मिक विश्वास न था, निःसन्देह यह बात अपने लिये, राज्य के लिये, और विरोधी समूहों अर्थात ईसाई और मूर्तिपूजकों के लिये, अच्छी जान पड़ी कि उनकी ऐक्यता वा उनका मेल मिलाप यथा संभव बढ़ाया जाय यहां तक कि पक्के ईसाई लोग भी इस बात के विरोधी नहीं जान पड़ते थे। कदाचित उनका ऐसा विश्वास था कि ये नवीन सिद्धान्त अधिक पूर्ण रीति से फैल सकेंगे यदि उनमें प्राचीन धर्म के सिद्धान्त मिला दिए जाएं, और यह भी विश्वास था कि अन्त में सत्यता स्वयं अपना अधिकार जमा लेगी और मैल छट जायगा। इस सम्मेलन के पूरा करने में राज्यमाता 'हेलीना' दरबार की सभ्य कुलांगनाओं की सहायता से मुखिया बनी। उनके मनोरथ सिद्ध के लिये जिरोसिलिस की एक गुफा मे से तीन शताब्दी से अधिक की गड़ी पड़ी हुई हज़रत ईसा और दो चोरों की सूली, और एक लेख और काम में लाई गई कीलें खोज निकाली गईं। वे दैवी शक्ति से पहिचानी गईं; बस एक सच्ची स्मारक पूजा आरंभ होगई। प्राचीन यूनानी समयों का मिथ्या विश्वास फिर प्रचलित हो पड़ा; अर्थात् उन समयों का मिथ्या विश्वास जब सिटैपान्टस में वे हथियार दिखाये जाते थे जिनसे ट्रोजन का घोड़ा बनाया गया था। चरोनिया में पिलाप्स का राज्यदंड देखा जा सकता था। फेसिलिस मे एचिलीज़ का भाला, निकोमीडिया मे मैकनान की तलवार देखी जा सकती थी; और उन समयों के विश्वास जब टैगिटीज़ केलीडोनिया के सुअर

का चमड़ा दिखला सकता थो। और बहुत से नगर टापू के 'पालस' देव की सच्ची मूर्ति रखने का दावा करते थे; और उन समयों के विश्वास अब यूनान मे साईनरवा की ऐसी मूर्तियां थीं जो भाले घुमा सकती थीं; और ऐसे चित्र थे जो लज्जा और संकोच का भाव दर्शा सकते थे, ऐसी मूर्तिया थीं जो पसीज सकती थीं, और अगणित ऐसे यात्रास्थान और पवित्र स्थान थे जहां देवशक्ति से रोग आराम किये जा सकते थे।

ज्यों २ वर्ष बीतते गये टरस्यूलियन का वर्णन किया हुआ धर्म रूप बदल कर एक अधिक व्यवहारी और अधिक नीच धर्म हो गया। वह प्राचीन यूनानी पौराणिक धर्म से मिल गया। आलिम्पस फिर स्थापित हुआ, परन्तु देवताओं के दूसरे दूसरे नाम पड़े। अधिक शक्तिवान प्रान्तों ने अपने प्राचीन विचारों के स्वीकार करने के लिये हठ किया। मिसिर देश की मौखिक कथाओ के अनुसार त्रिदैविक विचार स्थापित हुए। नवीन नाम से ऐसिस नामक देवी की केवल पूजाही पुनः प्रचलित नहीं की गई वरन् उसकी मूर्ति भी अर्धचन्द्र पर खड़ी हुई फिरसे दर्शन देने लगी। उस देवी की प्रख्यात मूर्ति अपने बच्चे होरस को गोदमें लिये हुये हमारे समय में सुन्दर शिल्पीय चतुरताओं सहित "मैडोना और बच्चा" नामक चित्र के नाम से प्रचलित है। नये रूपो से प्राचीन विचारों का ऐसा पुनरागमन सब ही जगह बड़े आनन्द से स्वीकृत किया गया। जब एफीशियन लोगों से यह कहा गया कि उस प्रान्त की राज्यसभा ने साईरिल की अध्यक्षता में ऐसी आज्ञा दी है कि कुमारी मरियम को "ईश्वर की माता" कह कर सम्बोधन किया जाय तब आनन्द के आंसू बहाते हुये वहां के निवासियो ने अपने धर्माध्यक्ष के चरण चूम लिये। इस बात से उनकी सहज बुद्धि झलकती थी, उनके पुरषाओ ने 'डायना' देवी के लिये ऐसा ही किया होता।

सांसारिक परधर्मग्राही लोगों को, उनके विचार और रीति भांति ग्रहण करके खुश करने का यह उद्योग उन लोगों से विना तर्क किए हुए न बचसका जिनकी बुद्धिने असल तात्पर्य्य समझ लिया था।

फास्टस अगस्टाइन से कहता है कि तुमने मूर्तिपूजकों के यज्ञों के स्थान में अपना प्रीतिभोज प्रचलित किया है। उनके मूर्तियों के स्थान में धर्म हेतु तनत्यागी लोगों को उसी भांति पूजते हो जैसे वे मूर्तियों को। तुम मृतकों की आत्माओं को मद्य और भोज से शान्त करते हो, मूर्तिपूजकों के धार्मिक त्योहारों, उनकी प्रतिपदाओं, और उनकी संक्रान्तों को उत्सव मनाते हो; और उनके आचारों को तुमने विना किसी प्रकार का परिवर्तन किए ही ज्यों का त्यों रहने दिया है। सिवाय इसके कि तुम अपनी सभायें अलग करते हो तुमसे और मूर्तिपूजकों में कोई भेद नहीं है। मूर्ति पूजकों की रीतियां हर जगह प्रचलित की गई थीं। विवाहों मे शुक्र के सम्मान हेतु गीत गाने की रीति थी।

अच्छा अव हम थोड़ी देर के लिये ठहरते हैं और आशा सहित देखते हैं कि यह मूर्तिपूजक बनाने की कूटनीति वास्तव मे मानसिक अवनति की किस गहराई तक गई है। मूर्तिपूजकों की रीतियां स्वीकार की गई थीं, बड़ी धूमधाम वाली और भड़कीली रीतियां, तड़क भड़क पोशाकें, मुकुट, लम्बी टोपियां, मोमवत्तियां, यात्रासबधी प्रार्थनायें, शुद्धिकरण, और सोने चांदी के वरतन प्रचलित किए गए थे। रोमन लोगों का चक्रदंड, जो शगुन लेने का विशेष चिन्ह था पादरियों के हाथ का धार्मिक दंड होगया था। धर्म हेतु तनत्यागी मनुष्यों की कबरों पर गिरजाघर बनवाये जाते थे। और रोम के पोप के पुराने नियमो से उधार ली हुई रीतियों से वे स्थान पवित्र ठहाराए जाते थे। त्योहार और धर्म हेतु तनत्यागी मनुष्यों के स्मारक बढ़ते ही गए, ज्यो ज्यों उनकी बची खुची वस्तुओं की अगणित झूठी खोजें होती रहीं। व्रत करना शैतान को भगाने के लिये और ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये एक भारी उपाय समझा गया, अविवाहित रहना सब से बढ़ कर नेकी समझी गई। पैलिस्टाइन और धर्म हेतु तनत्यागी मनुष्यों की क़बरों तक यात्रायें होने लगीं। बहुत सी धूल और मिट्टी पवित्र देश (Holyland) से लाई जाती थी। पवित्र पानी

के गुण माने जाते थे। मूर्तियां और अवशिष्ट वस्तुयें गिरजा घरो में प्रचलित की गईं। और मूर्तिपूजको के देवताओ की भांति उनकी पूजा होने लगी। यह प्रख्यात किया गया कि कतिपय स्थानों मे अद्भुत और अमानुषिक शक्तियां देखी जाती है जैसे कि मूर्तिपूजकों के समय मे थीं। मृत ईसाइयों की मुक्त आत्मायें मंत्र बल से बुलाई जाती थीं। ऐसा विश्वास किया जाता था कि वे संसार मे इधर उधर घूमा करती हैं और अपनी क़ब्रों पर बहुधा आया करती हैं। मन्दिरों, यज्ञशालाओं, और प्रायश्चित्त कारक कांटेदार पोशाकों की बहुत बढ़ती होगई। काफ़िर परधर्मग्राहियो की वह बेचैनी मिटाने के हेतु जो उन्हें 'ल्यूपर केलिया' वा बनवासी देवता के त्योहार उठ-जाने के कारण होती थीं, कुमारी मरियम के शुद्धिकरण का त्योहार प्रचलित किया गया। मूर्तियो की पूजा सूली के टुकड़ो, हड्डियों, लोहकीलो और अन्य अवशिष्ट वस्तुओ की पूजा अर्थात् एक सच्ची पदार्थ पूजा फैल गई। इन वस्तुओ की सत्यता के हेतु दो बातों पर विश्वास किया जाता था; एक गिरजाघर का प्रमाण, दूसरे उन वस्तुओं द्वारा अमानुपिक कार्य्यों का होना। यहा तक कि साधुओं के फटे पुराने कपड़े और उन की कबरों की मिट्टी तक पुजने लगी। पैलिस्टाइन से वे ठठरिया लाई गई जिनको लोग महात्मा 'मार्क' और 'जेम्स' और अन्य प्राचीन महात्माओ की ठठरियां कहते थे। पुराने रोम की देव-करण प्रथा उठा कर उसके स्थान मे सिद्ध-करण प्रथा चलाई गई, पौराणिक देवताओ के स्थान के उतराधिकारी रक्षक संत महात्मा हुये। तदन्तर ट्रैनसब्सटैनशिएशन का भेद प्रचलित हुआ, अर्थात् "रोटी और शराब का पादरी की करामात से हज़रत ईसा के रक्त और मास में बदल जाना"। ज्यों ज्यों शताब्दियां गुजरती गईं त्यों त्यो मूर्तिपूजक बनना अधिक अधिक पूर्ण होता गया। उस भाले के स्मारक में जिससे ईसा की बगल चीरी गई थी, उन लोहकीलों के स्मारक में जिनसे वे सलीब में जड़ दिए गए थे, और उस कांटो के मुकुट के स्मारक में त्योहार प्रचलित किए गए। यद्यपि बहुत से मठ ऐसे थे जिनमे यह अन्तिम अनूपम अवशिष्ट वस्तु (अर्थात कांटेदार

मुकुट) रखा हुआ था, तथापि कोई यह न कह सकता था कि इन सब मुकुटों का सत्य होना असंभव है।

क्रिश्चियन धर्म के इस प्रकार मूर्तिपूजक धर्म बनने के विषय में विशप न्यूटन का विवरण पढ़ना हमारे लिये लाभकारी हो सकता है। वह पूछता है कि "क्या महात्माओं और फरिश्तों की पूजा अब सब भांति से वैसी ही नहीं है जैसी कि अगले समय में भूतों की पूजा होती थी ? । केवल नाम का भेद है बात तो ठीक एक सी है, मूर्तिपूजकों के देवताओं के स्थान मे ईसाइयों के देवता होगये हैं। इस पूजन के प्रचारक जानते थे कि बात वही है, और एकने दूसरे का स्थान लेलिया है; और जैसा वह पूजन एक ही है वैसे ही उस प्रकार की रीतियों से किया भी जाता है। अर्थात एक ही समय में बहुत सी धूप वा सुगंधित पदार्थों का जलाना, सार्वजनिक पूजन स्थानों के भीतर जाते समय और बाहर आते समय साधारण जल और नमक मिला हुआ पवित्रोदक का छिड़कना; दिन में इन देवताओं की मूर्तियों और यज्ञकुंडों के सामने बहुत से दीपक वा मोमबत्तियों का जलाना, बहुत से रोगों से अच्छे कर देने और बहुत से भयों को निवारण कर देने के प्रमाण स्वरूप बहुमूल्य चढ़ौनियों और मानी हुई चढौनियों को लटका रखना; मृत महात्माओं को सिद्ध पुरुष वा देवता मानना, मृत धर्मवीरों वा महात्माओं के लिए अलग अलग प्रान्त वा जिले नियत कर देना; मृतकों को उनके समाधिस्थानों में, और तीर्थों का, और अवशिष्ट पदार्थोंका पूजन और आदर करना; मूर्तियों को पवित्र मानना और उन्हें नमस्कार करना, मूर्तियों मे अद्भुत गुण और शक्तियां मानना, छोटी छोटी मढ़ियां, और मूर्तियाँ, गलियों, सड़कों, और पहाड़ोंकी चोटियों पर स्थापित करना; मूर्तियों और अवशिष्ट पदार्थों को बहुत से दीपकों और गाने बजाने के साथ धूम धाम से सवारी निकालना, प्रायश्चित के विचार से धार्मिक अवसरों पर कोड़े लगवाना, पुरोहितों का मूड़ मुड़ाना, धार्मिक स्त्री पुरुषों के लिए पवित्रता और ब्रह्मचर्य से जीवन व्यतीत करने की शर्तें लगा देना, ये उपरोक्त और अन्य बहुत सी रीतियां मूर्तिपूजकों

उस विवेक सम्बन्धी वादविवाद में, जो पहिले पहल मिसिर देश में हुआ (यहाँ मिसिर देश जो त्रिदेवो का देश था) विशेष झगड़े की बात यह थी कि निश्चित किया जाय कि "पुत्र" का स्थान क्या है। सिकन्दरिया मे एक धर्माचार्य रहता था जिसका नाम एरियस था। वह विशप का पद पाने का उत्साह पदाभिलाषी था। उसने यह मूल तर्क निकाली कि पुत्रपन के प्रकृति से यह बात सिद्ध होती है कि कोई समय ऐसा था कि जब वह पुत्र था ही नहीं, और कोई समय ऐसा था कि जब उसका अस्तित्व प्रारम्भ हुआ। यह बात ऐसा कह कर प्रमाणित की कि पिता पुत्र के सम्बन्ध में यह बात आवश्यक है कि पिता पुत्र से जेठा हो। परन्तु इस कथन से तीनो देवताओ का एक साथ अस्तित्व प्रत्यक्ष ही कट जाता है। इससे यह भी झलकता है कि एक दूसरे पर निर्भर है, या इनमें समानता नही है। और वास्तव मे यह बात निकलती है कि कोई समय ऐसा था जब तीन देवताओ का अस्तित्व न था। इस पर उस विशप ने जिसने सफलता के साथ एरियस का मुकाबला किया था इसी प्रश्न के वादविवाद मे सर्वसाधारण के सामने अपनी वक्तृता शक्ति प्रगट की, और झगड़ा बढ़ता गया, और यहूदी और मूर्तिपूजक लोग जो सिकन्दरिया मे बहुतायत से बसते थे नाट्यशालाओ मे इसी झगड़े का नाटक करके अपना मनोरंजन करने लगे। उनके प्रहसन की मुख्य बात यह होती थी कि बाप और बेटे की अवस्था समान दिखाई जाती थी।

इस वादविवाद ने अन्त मे ऐसा उपद्रव मचाया कि मामला सम्राट तक पहुंचाना पड़ा। पहिले तो उसने इस झगड़े को व्यर्थ ही समझा और कदाचित सचमुच एरियस के कथन की ओर झुका, कि वास्तव मे पिता को पुत्र से जेठा होना ही चाहिए, परन्तु उस पर ऐसा दबाव डाला गया कि अन्त मे उसे विवश होकर 'नीशिया' की सभा करना पड़ी जिसने झगड़ा मिटाने के लिये एक नियम पुस्तक बनाई और उसमे यह निम्न लिखित निष्कासन नियम रक्खा कि "पवित्र कैथलिक और ईसाई धर्म परिचालक धर्मसमाज उन व्यक्तो

को धर्म समाज से निकालता है जो कहते हैं कि किसी समय ईश्वर का पुत्र था ही नहीं, और जन्म लेने से पहिले वह था ही नहीं, और वह नास्ति से अस्ति किया गया है, अथवा किसी अन्य पदार्थ वा तत्व से निकाला गया है, और अथवा परिवर्तनशील है, वा उसमें कमी बढ़ी हो सकती है। कान्सटेन्टाइन ने सभा का यह निश्चित सिद्धान्त राजशक्ति द्वारा तुरन्त प्रचलित कर दिया।

थोड़े वर्षों के अनन्तर थीयोडोसियस राजा ने बलिदान करने की मनाही कर दी। चौपायो की आंतों का देखना वध करने का दोष ठहराया गया, और मन्दिर में जाने की मुमानियत कर दी। उसने धर्म परीक्षक नियत किए और आज्ञा निकाली कि वे सब लोग जो रोम के विशप डैमेसस और सिकन्दरिया के विशप पीटर के विश्वास का अनुकरण नहीं करते देश से निकाल दिए जावें, और उनके नागरिक स्वत्व छीन लिये जावें। उन लोगों को वध कर देने की आज्ञा दी जो ईस्टर का त्योहार उसी दिन मनाने की धृष्टता करते थे जिस दिन यहूदी लोग मनाते हैं। इस समय पश्चिमीय देशों में यूनानी भाषा का ज्ञान बन्द हो चला था, और सत्य विद्या विनष्ट होने लगी थी।

इस समय थियोफिलस सिकन्दरिया का विशप था। ओसिरिस का प्राचीन मन्दिर नगर निवासी ईसाइयों को गिरजा बनाने के लिये दिये जाने पर ऐसी घटना हुई कि इस नवीन धाम बनाये जाने के हेतु नीव खोदते समय दैव योग से प्राचीन काल के पूजन की कुछ गर्हित मूर्तियां मिलीं। इनको लज्जा की अपेक्षा अधिक उत्साह से थियोफिलस ने बाजार में दिखलाया, जिस से सर्व साधारण लोग उनकी हँसी उड़ावें। इस बात से मूर्ति पूजक लोगों ने ईसाइयों की उस सहनशीलता से कम सहनशीलता दिखलाई जो उन्हों ने उस समय दिखलाई थी जब त्रिदेव विषयक झगड़े के समय नाट्यशालाओं में उनकी हतक हुई थी। मूर्ति पूजकों ने अत्याचार करना प्रारम्भ किया और बगावत हो गई। उन्हों ने सिरैपियन को अपना सदर मुकाम बनाया। ऐसा हंगामा और इतना रक्तपात हुआ कि सम्राट को हस्तक्षेप करना पड़ा। उसने

उस त्रिदेव संबन्धी वादविवाद में, जो पहिले पहल मिसिर देश में हुआ (वही मिसिर देश जो त्रिदेवों का देश था) विशेष झगड़े की बात यह थी कि निश्चित किया जाय कि "पुत्र" का स्थान क्या है। सिकन्दरिया मे एक धर्माचार्य्य रहता था जिसका नाम एरियस था। वह विशप का पद पाने का हताश पदाभिलाषी था। उसने यह मूल तर्क निकाली कि पुत्रपन के प्रकृति से यह बात सिद्धि होती है कि कोई समय ऐसा था कि जब वह पुत्र था ही नहीं, और कोई समय ऐसा था कि जब उसका अस्तित्व प्रारंभ हुआ। यह बात ऐसा कह कर प्रमाणित की कि पिता पुत्र के सम्बन्ध मे यह बात आवश्यक है कि पिता पुत्र से जेठा हो। परन्तु इस कथन से तीनों देवताओं का एक साथ अस्तित्व प्रत्यक्ष ही कट जाता है। इससे यह भी झलकता है कि एक दूसरे पर निर्भर है, वा इनमे समानता नही है। और वास्तव मे यह बात निकलती है कि कोई समय ऐसा था जब तीन देवताओं का अस्तित्व न था। इस पर उस विशप ने जिसने सफलता के साथ एरियस का मुकाबला किया था इसी प्रश्न के वादविवाद में सर्वसाधारण के सामने अपनी वक्तृता शक्ति प्रगट की, और झगड़ा बढ़ता गया, और यहूदी और मूर्तिपूजक लोग जो सिकन्दरिया में बहुतायत से बसते थे नाट्यशालाओं में इसी झगड़े का नाटक करके अपना मनोरंजन करने लगे। उनके प्रहसन की मुख्य बात यह होती थी कि बाप और बेटे की अवस्था समान दिखाई जाती थी।

इस वादविवाद ने अन्त में ऐसा उपद्रव मचाया कि मामला सम्राट तक पहुंचाना पड़ा। पहिले तो उसने इस झगड़े को व्यर्थ ही समझा और कदाचित सचमुच एरियस के कथन की ओर झुका, कि वास्तव मे पिता को पुत्र से जेठा होना ही चाहिए, परन्तु उस पर ऐसा दवाव डाला गया कि अन्त में उसे विवश होकर 'नीशिया' की सभा करना पड़ी जिसने झगड़ा मिटाने के लिये एक नियम पुस्तक बनाई और उसमे यह निम्न लिखित निष्कासन नियम रक्खा कि "पवित्र कैथलिक और ईसाई धर्म परिचालक धर्मसमाज उन व्यक्तों

को धर्म समाज से निकालता है जो कहते हैं कि किसी समय ईश्वर का पुत्र था ही नहीं, और जन्म लेने से पहिले वह था ही नहीं, और वह नास्ति से अस्ति किया गया है, अथवा किसी अन्य पदार्थ वा तत्व से निकाला गया है, और अथवा परिवर्तनशील है, वा उसमें कमी बढ़ी हो सकती है। कान्सटेन्टाइन ने सभा का यह निश्चित सिद्धान्त राजशक्ति द्वारा तुरन्त प्रचलित कर दिया।

थोड़े वर्षों के अनन्तर थीयोडोसियस राजा ने बलिदान करने की मनाही कर दी। चौपायों की आंतों का देखना वध करने का दोष ठहराया गया, और मन्दिर में जाने की मुमानियत कर दी। उसने धर्म परीक्षक नियत किए और आज्ञा निकाली कि वे सब लोग जो रोम के बिशप डेमेसस और सिकन्दरिया के बिशप पीटर के विश्वास का अनुकरण नहीं करते देश से निकाल दिए जावें, और उनके नागरिक स्वत्व छीन लिये जावें। उन लोगों को वध कर देने की आज्ञा दी जो ईस्टर का त्योहार उसी दिन मनाने की धृष्टता करते थे जिस दिन यहूदी लोग मनाते हैं। इस समय पश्चिमीय देशों में यूनानी भाषा का ज्ञान बन्द हो चला था, और सत्य विद्या विनष्ट होने लगी थी।

इस समय थियोफिलस सिकन्दरिया का बिशप था। ओसिरिस का प्राचीन मन्दिर नगर निवासी ईसाइयों को गिरजा बनाने के लिये दिये जाने पर ऐसी घटना हुई कि इस नवीन धाम बनाये जाने के हेतु नीव खोदते समय दैव योग से प्राचीन काल के पूजन की कुछ गर्हित मूर्तियां मिलीं। इनको लज्जा की अपेक्षा अधिक उत्साह से थियोफिलस ने बाजार में दिखलाया, जिस से सर्व साधारण लोग उनकी हँसी उड़ावें। इस बात से मूर्ति पूजक लोगों ने ईसाइयों की उस सहनशीलता से कम सहनशीलता दिखलाई जो उन्हों ने उस समय दिखलाई थी जब त्रिदेव विषयक झगड़े के समय नाट्यशालाओं में उनकी हतक हुई थी। मूर्ति पूजकों ने अत्याचार करना प्रारम्भ किया और बगावत हो गई। उन्हों ने सिरैपियन को अपना सदर मुकाम बनाया। ऐसा हंगामा और इतना रक्तपात हुआ कि सम्राट को हस्तक्षेप करना पड़ा। उसने

रोम नगर में पिलैजियस का सादर सत्कार हुआ, परन्तु कारथेज में सेन्ट आगस्टाइन के बहकाने से उस पर अभिशाप लगाया गया। डियासपोलिस की सभाने उसको नास्तिकता के दोष से मुक्त किया, परन्तु जब यह मामला रोम के बिशप प्रथन इनोसेन्ट को सुनाया गया तब उसने उस सभा के विचार के विरुद्ध उसे दोषी ठहराया। दैव योग से ऐसा हुआ कि इसी समय इनोसेन्ट मर गया और उसके उत्तराधिकारी जोजीमस ने उसके निर्णय को रद कर दिया और पिलैजियस की सम्मतियों को शास्त्रोक्त ठहराया। इन परस्पर विरोधी निर्णयों का अब तक बहुधा विरोधी लोग पोप लोगों की अनिश्चितता कह कर परिचय देते हैं। बातें ऐसी ही गइ बढ़ थीं कि आफ्रिका निवासी छली धर्माध्यक्षों ने काउन्ट वैलेरियस के प्रभाव द्वारा सम्राट से एक राज्याज्ञा प्राप्त की जिसमे पिलैजियस को नास्तिकता का दोष लगाया गया था। वह और उसके साथी देश से निकाल दिये गए और उसका माल असबाब जप्त कर लिया गया। यह कहना कि आदम के पतन के पहिले भी संसार में मृत्यु थी राज्य दोष ठहराया गया।

जिन सिद्धान्तों पर यह अद्भुत निर्णय किया गया था उन पर विचार करना बहुत शिक्षाप्रद है। निरा तत्वज्ञान का विषय होने के कारण प्रत्येक मनुष्य अनुमान कर सकता है कि यह विषय प्राकृतिक सिद्धान्तों पर निश्चित किया गया होगा, परन्तु इसके विरुद्ध इस विषय में केवल धर्मशास्त्रों के ही विचार प्रगट किये गए हैं। ईसाई धर्म के सिद्धान्तों का जो विवरण टरट्यूलियन ने किया है उसमें मननशील पाठक ने देखा होगा कि उसमे प्रथम पाप के सिद्धान्तों का नाम तक नहीं है, अन्तर दुष्टता की पूर्णता, भवतव्य अधीनता, कृपा और प्रायश्चित्त का वर्णन है। दो शताब्दी बाद जो मुक्ति की युक्ति मानी जाती थी उससे टरट्यूलियन के वर्णन किए हुए ईसाई धर्म का कुछ प्रयोजन नहीं जान पड़ता। आवश्यक विषयों पर निश्चित विचारों के लिये हम कारथेज निवासी सेन्ट आगस्टाइन के ऋणी हैं।

मृत्यु इस संसार में आदम के पतन के पहिले से थी, अथवा उसके पाप के हेतु ससार में दंडस्वरूप प्रचलित की गई इस बात के निर्णय करने मे जो मार्ग ग्रहण किया गया है वह यह था कि पिलेजियस के विचारों की जांच की जाय कि वे प्रकृति से मिलते हैं वा सेंट आगस्टाइन के शास्त्रिक सिद्धान्तों से। और फल वैसाही हुआ जैसे फल की आशा थी। वह सिद्धान्त जिसको धर्माध्यक्ष लोगों ने शास्त्रानुकूल बतलाया था वर्तमान विज्ञान की सन्देह रहित खोजों से पलट दिया गया। पृथ्वी पर मनुष्य के पैदा होने से बहुत पहिले लाखों जीवधारी, नहीं वरन हजारो प्रकार और हजारों वर्ग के भी मर चुके थे। वे जीव धारी जो अब हमारे साथ वर्त्तमान हैं, उनकी अपेक्षा जो मर चुके है, बहुत ही थोड़े हैं॥

इस पिलेजियस के वादविवाद का निर्णय करने से एक बहुत बड़ा आवश्यकीय फल निकल आया। वह यह कि इञ्जील पुस्तक ईसाई धर्म का मूलाधार बनाई गई। अगर शास्त्रिक मत से, उसके अदन बागीचे के पाप के वर्णन, और अवज्ञा, और आदम के दंड के वर्णन पर, इतना अधिक विश्वास किया गया है, तो तत्व ज्ञानी मत से भी वह प्राचीन विज्ञान का बड़ा भारी प्रमाण हो गया है। ज्योतिष, भूगर्भविद्या, भूगोलविद्या, शारीरिकविद्या, समयचक्रविद्या और वास्तव में सब ही विविध प्रकार के मनुष्योपयोगी ज्ञान उसके अनुसार ही ठहराए गए।

चूंकि सेंट आगस्टाइन के सिद्धान्तों ने इस भांति धर्म और विज्ञान में विरोध करा दिया था, इस हेतु उस बड़े विद्वान के अधिक स्वच्छतत्वज्ञानी विचारों मे से कुछ को संक्षेपत. जांचना मनोरंजक हो सकता है। इसी तात्पर्य से हम इञ्जील के पहिले अध्याय पर उसके विचारों के कुछ भाग चुने लेते हैं जो उसके "कन्फेशन्स" नामक पुस्तक के ग्यारहवें बारहवें, और तेरहवें अध्याय में लिखे हैं।

इनमें तत्व ज्ञानिक वादविवाद हैं और बीच बीच मे बहुत से गीत संग्रह हैं। वह विनय करता है कि ईश्वर उसे शास्त्र समझने की शक्ति

"हे मेरे ईश्वर जब मैं शास्त्रों को कहते हुये सुनता हूं कि प्रारम्भ में ईश्वर ने स्वर्ग और पृथ्वी को बनाया। और पृथ्वी अदृष्ट और रूप रहित थी और समुद्र पर अंधेरा छाया था और यह नहीं बताते कि तूने किस दिन उनको बनाया, तब जो विचार मेरे चित्त में पैदा होता है वह यह है कि यह कथन उस स्वर्गों के स्वर्ग के लिये है, उस बुद्धि सम्बन्धी स्वर्ग के लिए है जिसकी मानसिक शक्तियां सब बातों को एक साथ जानती हैं, टुकड़े टुकड़े करके नहीं, सन्दिग्ध रूप से नहीं, दूरबीन द्वारा नहीं, बस एकत्र रूप से प्रत्यक्ष में, सामने सामने, कभी यह वस्तु कभी वह वस्तु ऐसा नहीं वरन् (जैसा कि मैं ने कहा है) सब वस्तुओं को एक ही साथ बिना समय अनुक्रम के, और उस पृथ्वी के विषय में, उस अदृष्ट और रूप रहित पृथ्वी के विषय में यह समझता हूं कि वह भी विना समय के अनुक्रम के बनाई गई है, क्योंकि अनुक्रम से कभी यह वस्तु, कभी वह वस्तु ऐसा प्रगट होता है, क्योंकि जहां रूप नहीं है वहां वस्तुओं का भेद नहीं है। इसलिये तब इन्हीं दोनों के लिये अर्थात् रूप सहित आदि वस्तु और रूप रहित आदि वस्तु अर्थात् स्वर्ग, स्वर्गों का स्वर्ग, और पृथ्वी, चर और रूपरहित पृथ्वी। मैं समझता हूं कि इन्हीं दोनों के विषय में विना समय बताए हुए शास्त्र ने कहा है कि आदि में ईश्वर ने स्वर्ग और पृथ्वी बनाए। क्योंकि तदनन्तर वह उस कथित पृथ्वी का नाम देता है और उसमें भी उस आकाश के विषय में लिखा है कि दूसरे दिन बनाया गया और उसका नाम स्वर्ग पड़ा। इससे हम समझ सकते हैं कि विना समय बताये हुए उसने किस स्वर्ग के विषय में कहा है"।

"तेरे शब्दों में विचित्र गहराई है। उनका ऊपरी भाग हमारे सामने है और छोटी बातों की ओर आकर्षित करता है, तथापि वे बहुत गहरे है, हे ईश्वर वे बहुत ही गहरे हैं। उनके आन्तरिक भाव को देखना भयप्रद है, जो आदर और प्रेम का भय है। उसके शत्रुओं को मैं बड़ी घृणा से देखता हूं। कैसी अच्छी बात हो यदि तू उनको अपनी दोधारी तलवार से मार डाले जिससे वे फिर उससे

शत्रुता न करें, क्योंकि मैं उनका मारा जाना इसलिये पसंद करता हूं जिससे वे तुझ से मिल कर जीते रहें"।

"धर्मग्रन्थों के अन्तर्गत भावों को सेंट आगस्टाइन ने जिस विशद् रीति से वर्णन किया है उसके उदाहरण स्वरूप मैं यह निम्न लिखित वार्ता "कन्फेशन्स" नामक पुस्तक के तेरहवें अध्याय से लिखता हूं। इससे उसका तात्पर्य्य यह दिखलाने का है कि त्रिदेव वाला सिद्धान्त मूनाकृत प्रकृति वर्णन में पाया जाता है। वह लिखता है कि "देखो अब मुझे त्रिदेव सिद्धान्त धुँधले रूप से एक शीशे में देख पड़ता है, जो हे मेरे ईश्वर तू ही है। हे पिता तू ही इस कारण से है कि वह वस्तु तू ही है जिसमें हमारी बुद्धि की आदि है और वह तेरी बुद्धि है जो तुझी से पैदा हुई है, तेरे ही बराबर की है, और तेरे ही समान अनादि है, अर्थात् तूने अपने पुत्र स्वरूप स्वर्ग और पृथ्वी को बनाया हम उस स्वर्गों के स्वर्ग के विषय में बहुत कुछ कह चुके और अदृष्ट और रूपरहित पृथ्वी के विषय में और काले समुद्र के विषय में भी बहुत कुछ कह चुके हैं। उस आकाश की अध्यात्मिक विरूपता के विषय मे भी कहा गया है, यहां तक कि वह उसी में परिवर्तन हो जाता है जहां से उसने अपनी चैतन्यता पाई है, और उसी के प्रकाश से एक मनोहर वस्तु हो गया है, और उस आकाश के विषय में भी बहुत कुछ कहा गया है जो कुछ दिन बाद सांसारिक और आकाशी जलों के बीच में स्थापित हुआ। और ईश्वर के नाम से मैं उसी बाप को मानता हूं जिसने ये सब वस्तुएं बनाई हैं। और प्रारम्भ के नाम से मैं उस पुत्र को मानता हूं, जिसमें उसने ये सब चीजें बनाईं। और मैं अपने ईश्वर ही को त्रिदेव मानता हूं। मैंने उसके पवित्र शब्दो मे और अधिक खोज की, और, देखो। तेरी आत्मा पानी के ऊपर चलती हुई पाई। अब त्रिदेव को देखो। मेरा ईश्वर पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के रूप से सब सृष्टि का कर्ता है"।

इस हेतु से कि मैं सेंट आगस्टाइन के तत्वज्ञान सम्बन्धी लेखों का ठीक तात्पर्य्य अपने पाठकों को समझा सकूं, मैंने यहां पर दिये हुये दो अवतरणों मे, अपने अनुवाद के स्थान मे रेवरेन्ड डाक्टर

कथनों की पुष्टि में दिये जाते हैं। इस प्रकार लैकटेन्टियस पृथ्वी के गोलाकार होने के नास्तीकता-पूर्ण सिद्धान्त की ओर इशारा करके कहता है कि "क्या यह सम्भव है कि मनुष्य ऐसा न्याय रहित हो जावे कि वह विश्वास करने लगे कि पृथ्वी की दूसरी ओर के अनाज के पौधे और पेड़ नीचे को लटका करते हैं, और मनुष्यों के पैर उनके सिरों से ऊंचे की ओर होते हैं? अगर तुम उनसे पूछो कि तुम इन अद्भुत बातों को कैसे प्रमाणित कर सकते हो, पृथ्वी के उस ओर की वस्तुएं क्यों नहीं गिर पड़ती, तो वे उत्तर देते हैं कि वस्तुओ की प्रकृति ही ऐसी है कि भारी २ वस्तुए पहियों के आरों की भांति अपने केन्द्र की ओर खिचतीं हैं और हलकी वस्तुएं जैसे बादल, धुआं और आग केन्द्र से आकाश की ओर खिचती हैं। अब मैं वास्तव में हैरान हूं कि मैं उन मनुष्यों के विषय में क्या कहूं जो एक बार भूल करने पर सदैव अपनी मूर्खता ही पर चले जाते है और एक मिथ्या सम्मति की दूसरी मिथ्या सम्मति से पुष्टि करते हैं"। पृथ्वी के उस ओर के निवासियों के विषय में सेन्ट आगस्टाइन कहता है कि "यह बात असम्भव है कि पृथ्वी की दूसरी ओर मनुष्य बसते हों, क्योंकि आदम के वंशजों मे से किसी का उधर रहना शास्त्र में नहीं लिखा है"। परन्तु कदाचित पृथ्वी की गोलाई के विरुद्ध सब से अधिक अकाट्य तर्क यह थी कि "ईश्वरीय न्याय के दिन पृथ्वी की दूसरी ओर के मनुष्य ईश्वर को आकाश से उतरते हुए नहीं देख सकते"।

यह बात मेरे लिये अनावश्यक है कि मैं संसार में मृत्यु के प्रचार के विषय में, सासारिक घटनाओ में प्रेतात्माओ के लगातार हस्ताक्षेप के विषय में, देवतो और भूतों के कामों के विषय में और पृथ्वी के भविष्य विनाश के विषय में बाबिल नगर के गरगज के विषय में, भाषाओ कीं गड़बड़ के विषय में, मनुष्य जाति के तितर बितर होने के विषय में, ग्रहण और इन्द्रधनुष की सी प्राकृतिक घटनाओ के विवरण के विषय में कुछ कहूं। और सर्वोपर मैं प्राचीन मनुष्यों के ईश्वर विषयक विचारों पर टीका टिप्पणी करने से

अरुचि रखता हूं। वे बहुत ही आकार उपासक हैं और उनमें महानुभावता नहीं है।

परन्तु कदाचित मुझको 'कास्मस इन्डीका पलियसटीज' के उन विचारों का अवतरण देना पड़े जो छठवीं शताब्दी में प्रचलित थे। उसने एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम 'क्रिश्चियन टोपाग्रेफी' है, जिसका मुख्य तात्पर्य्य पृथ्वी के गोलाकार होने की नास्तीक सम्मतियों को काटना, और मूर्ति पूजकों के उस कथन को काटना था कि उष्ण कटिबन्ध के दक्षिण ओर भी एक समशीतोष्ण कटिबन्ध है। वह कहता है कि सच्ची शास्त्रोक्त भूगोलविद्या के अनुसार पृथ्वी एक चौकोर धरातल है, जो पूर्व और पश्चिम को चार सौ मंजिल तक फैली हुई है, और उत्तर दक्षिण को ठीक उसकी आधी है, और ऐसे पहाड़ों से घिरी हुई है जिन पर आकाश रखा हुआ है; और उनमें से एक जो उत्तर दिशा मे है दूसरों से अधिक ऊँचा है जो सूरज की किरणों को रोक कर रात्रि करता है; और पृथ्वी का धरातल सनदिगन्त नहीं है, वरन् उत्तर की ओर से दक्षिण की ओर को कुछ ढलुआ है, इसी कारण फ्रात, टिगरिस और अन्य नदियां जो दक्षिण को वहती हैं शीघ्रगामिनी हैं, परन्तु नील नदी जिसको ऊँचाई की ओर चलना पड़ता है आवश्यकता वश बहुत मंद धारा वाली है।

माननीय 'वीड' सातवीं शताब्दी में लिखता हुआ कहता है कि सृष्टि रचना छ. दिन में पूर्ण हो गई थी और पृथ्वी उसके बीचों बीच में है और उसकी पहिली वस्तु है। आकाश आग्नेय और सूक्ष्म प्रकृति का है, गोला है और छत्रवत् पृथ्वी के केन्द्र से उसका प्रत्येक भाग सम दूरस्थ है। वह प्रति दिन बड़ी शीघ्रता से घूमता है, उसकी गति सात ग्रहो से टकराने से कुछ कम हो जाती है, जिनमे से तीन अर्थात् शनिश्चर, वृहस्पति और मंगल सूर्य से ऊपर हैं, तव सूर्य है और तीन ग्रह अर्थात् शुक्र, बुध और चन्द्रमा सूर्य से नीचे हैं। सितारे अपने नियत मार्गों पर घूमा करते हैं। उतरीय सितारे सब से छोटा वृत्त बनाते हैं। सब से उच्च आकाश की भी उचित सीमा

उसने अरब देश में मूर्ति पूजन जबरदस्ती बन्द करा दिया। और रोम राज्य से लड़ने की तय्यारी की—उसके उत्तराधिकारियों ने सीरिया, मिसिर, एशियामाईनर, और उत्तरीय आफ्रिका विजय कर लिया और फ्रान्स पर चढ़ाई की।

इस झगड़े के प्रतिफल रूप रोम राज्य के बड़े भारी भाग में ईश्वर की अद्वैतता का सिद्धान्त स्थिर हो गया। विज्ञान को लोग फिर पढ़ने लगे और ईसाई धर्म ने अपने बहुत से मुख्य नगर जैसे सिकन्दरिया, कारथेज, और जैरोसेलम खोदिये)

—— o ——

रोम के दरबार की गूढ़नीति ने प्राथमिक ईसाई धर्म को मूर्ति-पूजक धर्म का रूप दिया था, और उसको उसने राज्य में बसने वाले मूर्तिपूजकों में सर्वत्र फैलाया था। इस प्रकार दोनों समूहों का सम्मेलन हो चुका था। अर्थात ईसाई धर्म मूर्तिपूजक धर्म में मिल गया था और मूर्तिपूजक धर्म ईसाई धर्म में। इस प्रकार सम्मिलित धर्म की सीमायें रोम राज्य की सीमाएं ही थीं।

इस बड़े फैलाव के साथ ही साथ ईसाई समूह में राज्य नैतिक प्रभाव और धन भी आ गया था। सरकारी आमदनी में से एक बड़ा भाग धार्मिक कोशों में जाता था। जैसा कि ऐसी दशाओं में बहुधा हुआ करता है, लूट की वस्तुओं के बहुत से लोग दावादार हो गये। वे मनुष्य बहुत बढ़ गये जो बढ़ते हुये धर्म के उत्साह के बहाने से केवल उसके लाभों से आनन्द उठाना चाहते थे।

प्राचीन सम्राटों की अधीनता में विजय प्राप्ति की पराकाष्ठा हो चुकी थी। राज्य पूरा हो चुका था, अब सैनिक जीवन के योग्य वस्तुएं शेष न रही थीं, युद्ध सम्बन्धी अपहरण और प्रान्तों के लूट लेने के दिनों का अन्त हो चुका था। परन्तु उत्साही मनुष्यों के लिये दूसरी वस्तुएं प्रगट हो गई थीं। सफलता सहित धार्मिक जीवन व्यतीत करने से भी ऐसे फल मिलते थे जो प्राचीन समय के सैनिक जीवन से प्राप्त फलों से कम न थे।

उस समय का धार्मिक इतिहास, और जिसे वास्तव में राजनैतिक इतिहास कह सकते हैं तीन बड़े राज्य नगरों के पादरियों के झगड़ों से भरा हुआ है अर्थात कुस्तुनतुनिया, सिकन्दरिया और रोम के विशप अपने अपने बड़प्पन के लिए झगड़ते थे। कुस्तुनतुनिया ने अपना दावा इस बात पर स्थापित किया था कि वह उस समय राज्य नगर था। सिकन्दरिया अपने व्योपारिक होने और विद्वानों की ओर इंगित करता था और रोम अपने आवेदन पत्रों की ओर, परन्तु कुस्तुनतुनिया के पादरी के लिए यह कठिनाई थी कि उसे बहुत अधिक अपनी हानि सह कर भी, सम्राट के अधीन और निरीक्षण में रहना पड़ता था। दूर होने के कारण सिकन्दरिया और रोम के धर्म्माध्यक्ष सुरक्षित थे।

पूर्वीय देशों में धार्मिक झगड़े बहुधा ऐसे ही हुआ करते थे जिनमें ईश्वर के गुणों और स्वभाव के विषय में लोगों की भिन्न भिन्न सम्मतिया हुआ करती थीं। और पश्चिमीय देशों में इन बातों पर धार्मिक झगड़े हुये कि मनुष्य का ईश्वर से क्या सम्बन्ध है और जीवन क्या पदार्थ है। एशिया और यूरोप में ईसाई धर्म में जो जो परिवर्तन हुये उनमें यह विशेषता मुख्य रूप से प्रगट होती रही है; अतएव जिस समय की वार्ता हम कर रहे हैं उस समय रोम राज्य के सब ही पूर्वीय प्रान्त मानसिक अराजकता प्रगट करते थे। त्रिवेद सम्बन्धी सिद्धान्त, सारभूत ईश्वर, ईश्वर पुत्र की स्थिति, पवित्रात्मा का स्वभाव, और कुमारी मरियम के प्रभाव इन विषयों पर बड़े बड़े झगड़े हो रहे थे। कभी कोई समूह चमत्कारिक कार्य्यों का प्रमाण दे कर विजय का डंका बजाता, कभी कोई समूह रक्त पात से अपनी विजय स्थिर करता। परन्तु कभी किसी समूह ने इस बात का उद्योग न किया कि अपनी २ सम्मतियों की न्याययुक्त जांच होने दे। परन्तु सब समूह इस बात को मानते थे कि जिस सरलता से वे पराजित कर दिये गए वह सरलता ही इस बात को प्रमाणित करती है कि धर्म की पुरानी मूर्तिपूजकता नास्तिकता थी। विजयी धार्मिक

माता नहीं वरन् ईसा के मानवी भाग की माता समझना चाहिए, क्योंकि वह मानवी भाग दैवी भाग से अवश्य प्रथक है, जैसे मन्दिर उसमें स्थापित देवता से प्रथक पदार्थ है।

सिकन्दरिया के सन्यासियों से बहकाये जाने पर कुस्तुनतुनिया के सन्यासियों ने ईश्वर की माता (कुमारी मरियम) की ओर से हथियार उठाये। यह झगड़ा इतना बढा कि सम्राट को विवश होकर एफीसस में एक सभा करनी पड़ी। इसी समय में साईरिल ने राज्य-दरबार के विशेष कंचुकी को बहुत सी स्वर्णमुद्रा घूस मे दी थीं और इस द्वारा सम्राट की बहिन पर अपना प्रभाव डाला था। स्वर्गीय दरबार की पवित्र कुमारी ने इस भांति राज्यदरबार की पवित्र कुमारी में अपनी ही जाति की एक सहायका पा ली थी। साईरिल नीच जाति के पुरुष और स्त्रियों का एक समूह लिये हुए शीघ्रता से सभा में पहुंचा। वह तत्कालही सभापति बना और तुमुल कोलाहल के बीच में सीरिया के धर्माध्यक्षों के पहुंचने से पहिले ही राजाज्ञा पढ़ सुनाई। एकही दिन में उसने विजय प्राप्त की। नेस्टर की ओर से मेल कर लेने की सबही बातें कुछ भी न मानी गईं, उसके विवरण पढ़े ही न गये और बिना उसका उत्तर सुनेही उसे दंड दे दिया गया। सीरिया के पादरियों के पहुंचने पर एक विरोध-सभा हुई। सेंट जान के गिरजा में एक दंगा होगया जिस में बहुत रक्तपात हुआ। नेस्टर दरबार से निकाल दिया गया और अन्त में एक मिसिर देश के शाद्वल-स्थान को निकाल दिया गया। उस पर दोष लगाने वालों ने उसे यथा शक्ति हर एक प्रकार से जीवन भर कष्ट दिया, और मरने पर ऐसा मशहूर कर दिया कि उसकी ईश्वर निन्दक जीभ को कीड़ों ने खालिया था और मिसिर देश के मरुस्थल की गर्मी से वह नर्क के अधिक तप्त कष्टों में चला गया।

परन्तु नेस्टर के पराजय और दंड ने उसके विचारों को किसी प्रकार नहीं मिटाया। वह और उसके अनुगामी लोगों ने सेंट मत्ती के पहिले अध्याय के अन्तिम पद्य, और उसी इञ्जील के तेरहवें अध्याय के पचपनवें और छप्पनवें पद्यो पर हठ करते हुये, नवीन स्वर्गीय

रानी (कुमारी मरियम) के सदैवकालीन कुमारीपन को कभी नहीं माना। उनके तत्वज्ञानिक विचार शीघ्रही उनके कार्यों से प्रगट हो गये। जिस समय उनका अगुवा आफ्रिका के एक शार्दूल-स्थान में कष्ट पा रहा था, उन में से बहुत से फ्रात देश को चले गये और कैलडियन धर्म स्थापित किया। उन्ही की रक्षा में एडीसा के बड़े विद्यालय की नीव पड़ी। निसीबिस के बड़े विद्यालय से वे विद्वान लोग निकले जिन्होंने नेस्टर के सिद्धान्तों को शाम, अरब, हिन्दुस्तान, तातार, चीन, और निसिर में फैला दिया। नि.सन्देह नेस्टर के मतावलंबियों ने अरस्तू के तत्वज्ञान को स्वीकार किया था, और उस बड़े लेखक के ग्रंथों का शामी और पारसी भाषा मे अनुवाद किया था। उन्होंने हाल के बने ग्रंथों के भी ऐसे ही अनुवाद किये थे अर्थात प्लाईनी कृत ग्रथों का। यहूदियों से मिलकर उन्होंने जानदेसावोर के वैद्यक विद्यालय की नीव डाली। उनके धर्मोपदेशकों ने नेस्टर–निरूपित ईसाई धर्म को एशिया में इस सीमा तक फैलाया कि उसके मानने वाले अन्त में यूनानी और रोम में प्रचलित ईसाई धर्म के सम्मिलित अनुगामियों से गणना मे अधिक हो गये। विशेष कर यह बात कहने योग्य है कि अरब देश में भी उनका एक धर्माध्यक्ष रहता था।

कुस्तुनतुनिया और सिकन्दरिया के विरोधो ने इस भांति पश्चिमीय एशिया को उन भिन्न पंथानुगामियों से भर दिया, जो क्रोध युक्त एक दूसरे से लड़ा करते थे। और उनको जो दंड दिये गये थे उनके हेतु राज्य शक्ति से अत्यन्त घृणा करते थे। इसका फल यह हुआ कि एक ऐसा धर्म-परिवर्तन हुआ जिसके प्रभाव अब तक अनुभव में आते हैं। उसका प्रभाव सारी दुनिया में पड़ा।

यदि हम अलग अलग उन दो कामों पर विचार करें जिनमें कि यह घटना विभाजित हो सकती है, तो हम इस बड़ी घटना का चित्र स्पष्ट देख सकते हैं। (१) एशिया में प्रचलित ऐसाई धर्म की फारिस देश निवासियों के हाथ से अल्पकालिक पराजय और (२) अरब लोगों की अधीनता मे निश्चयात्मक और अन्तिम सुधार।

खुसरो फ्रात नदी को पार कर गया। सीरिया निवासी भिन्न मतावलम्बियों ने उसकी सेना का आनन्द से स्वागत किया और उसकी सहायता मे ठौर ठौर दगा होने लगे। ऐंटिआक, सीज़रिया, और दमिश्क विजय कर लिये गये। स्वयं जरोसलिम आक्रमण करके ले लिया गया। हजरत ईसा का समाधिस्थान, कुस्तुनतुनिया और हेलीना के गिरजाघर जला दिए गए। ईसा की सूली, विजय चिन्ह की भाति, फारिस देश को भेज दी गई। गिरजाघरों का धन लूट लिया गया। पवित्र स्मारक वस्तुएं जो मिथ्या विश्वास के कारण एकत्र की गई थीं तितर बितर कर दी गईं। मिसिर देश पर चढ़ाई की गई, और विजय करके पारिस राज्य में मिला लिया गया। सिकन्दरिया का मुख्य धर्म्माध्यक्ष साईप्रस द्वीप को भाग गया। त्रिपोली देशस्थ आफ्रिका का समुद्रतट भी छीन लिया गया। उत्तर में एशिया माईनर जीत लिया गया था और दशवर्ष तक फारिस की सेना कुस्तुनतुनिया के सामने वासफोरस के तट पर छावनी डाले पड़ी रही।

अपनी अत्यन्त कष्टावस्थामें, हिरैक्लियस ने शान्ति के लिये विनय की। घमंडी फारिस नरेश ने उत्तर दिया कि मैं रोम सम्राट को शान्ति से न रहने दूंगा जब तक कि वह अपने फांसी पर चढ़ाये गए ईश्वर को मानना शपथ खाकर न छोड़ देगा और सूर्य्य की पूजा न स्वीकार करेगा। परन्तु बहुत दिनों के अनन्तर शर्तें ते हो गईं और एक हजार स्वर्ण मुद्रा, और एक हजार रजतमुद्रा और एक हजार रेशमी पोशाकें, और एक हजार घोड़े, और एक हज़ार कुमारी कन्याएं लेकर रोम राज्य छोड़ दिया गया।

परन्तु हिरैक्लियस केवल थोड़े ही दिनों के लिए अधीन रहा। उसने केवल अपने सब प्रबन्ध फिर ज्यों के त्यों कर लेने ही का उपाय नहीं निकाल लिया, वरन् फारिस राज्य से बदला लेने का भी उपाय निकाल लिया। वे कर्तव्य जिनसे उसने यह फल प्राप्त किया रोम राज्य के अत्यन्त भले समय के योग्य ही थे।

यद्यपि उसकी सैनिक सुख्याति इस भांति फिर प्राप्त हुई, और यद्यपि उसकी भूमि फिर मिल गई, तथापि रोम राज्य की एक ऐसी

वस्तु खो गई जो कभी न मिल सकी अर्थात् धार्मिक विश्वास फिर कभी न मिल सका। संसार को दिखला कर बिथलेहेम, गेत्सेमेन और काल्वरी सरीखे अत्यंत पवित्र स्थानों को अपवित्र करके, ईसा का समाधिस्थल जला करके, गिरजाघरों को लूट और विनष्ट करके, अमूल्य स्मारक अवशिष्ट पदार्थों को तितर बितर करके और ईसा की सूली को उच्चस्वर से हँसते हुए निज देश को लेजा करके, मैगी धर्म ने क्रिश्चियन धर्म की हतक की थी।

किसी समय सीरिया में, मिसिर में, और एशिया माईनर में अद्भुत दैविककर्म बहुतायत से होते थे। कोई ऐसा गिरजाघर न था जो ऐसे कर्मों की एक बड़ी सूची न रखता हो। बहुधा वे अनावश्यक समयों पर और छोटी छोटी बातों में प्रगट होते थे। परन्तु इस कठिन समय में जब ऐसी सहायता की अत्यन्त आवश्यकता थी एक भी दैविक चमत्कार न हुआ।

फारिस निवासियों को अदंडित भाव से ये देवदोष करते हुए देखकर पूर्व देश निवासी ईसाइयों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। उनके मत से तो आकाशों को फट जाना चाहिए था, पृथ्वी को अपने गम्भीर गर्त खोल देने चाहिए थे, सर्वशक्तिमान ईश्वर की तलवार को आकाश में चमकना चाहिए था और जैसा परिणाम सेनाचिरव का हुआ था वैसा ही इन फारिस निवासियों का होना चाहिये था। परन्तु सो न हुआ। दैविक चमत्कारों की भूमि में पहिले आश्चर्य्य फैला, तदनन्तर व्याकुलता फैली, व्याकुलता के अन्त होने पर अविश्वास फैल गया।

(२) परन्तु यद्यपि यह भयंकर बात थी तथापि यह फारिस विजय उस बड़ी घटना की केवल प्रस्तावना मात्र थी जिसकी कथा अभी हमें वर्णन करना है, अर्थात ईसाई धर्म के विरुद्ध दक्षिणी उत्पात। उसका फल यह हुआ कि अपनी भौगोलिक राज्य में से ५/८ भाग खो देना पड़ा, अर्थात सब एशिया, सब अफ्रिका और यूरोप का कुछ भाग।

सन ५८१ ईस्वी के ग्रीष्म ऋतु में बसरा में जो कि दामिश्क के

जीवन में ईसा को कभी ईश्वर का पुत्र न कहता था, वरन् सदैव मरियम का पुत्र कहता रहा। उसका अशिक्षित परन्तु उत्साही मन केवल अपने शिक्षकों के धार्मिक विचारों से ही अंकित न हुआ, वरन् तत्वज्ञानिक विचार भी धारण करने में गम्भीरता सहित अचूक रहा। उसके शिक्षक इस बात का गर्व रखते थे कि वे अरस्तू के विज्ञान के जीवित प्रतिनिधि हैं। उसके जीवन के पर भाग से प्रगट होता है कि किस पूर्णता से उनके धार्मिक विचार उसके मन में बैठ गये थे और उसके पुनः पुनः किये हुए कामों से प्रगट होता है कि कैसे प्रेम से वह उनका आदर करता है। स्वयं अपने जीवन को उसने उनके ईश्वर सम्बन्धी सिद्धान्त के बढ़ाने और फैलाने में लगाया और यह कार्य जब एक वार प्रभाव सहित हो गया तब उसके उत्तराधिकारियों ने उनकी वैज्ञानिक सम्मतियों और उनके द्वारा प्राप्त अरस्तू की सम्मतियों को बड़े उत्साह से स्वीकार किया और उन्हें फैलाया।

जब मुहम्मद युवा अवस्था को पहुंचा तब उसने सीरिया पर और चढ़ाइयां कीं। कदाचित, हम अनुमान कर सकते हैं कि इन घटनाओं के समय वह मठ और उसके अतिथ सेवी निवासी गण मुहम्मद को नहीं भूले। उस देश के लिये उसके चित्त में गूढ़ आदर था। मक्का की एक धनी बिधवा खैडीजा ने उसको अपने शाम देश सम्बन्धी व्योपार का भार दे रखा था। वह उसकी योग्यता और स्वामि भक्ति पर मोहित थी और उसके रूप पर भी मोहित थी, क्योंकि ऐसा कहा जाता है कि वह मर्दाना सुन्दरता में अति उत्तम और व्यवहार में अति विनीत था। सब ही युगों में और सब ही देशों में स्त्री चित्त एक ही सा होता है। उसने एक सेवक से अपने मन की सब बात मुहम्मद के पास कहला भेजी, और मुहम्मद उसके जीवन के शेष २४ वर्ष तक उसका अनुरागी पति बना रहा। ऐसे देश में जहां बहुत से विवाह हो सकते हैं, उसने सवति रख कर उसकी कभी हतक न की। बहुत वर्षों के अनन्तर जब मुहम्मद की शक्ति पराकाष्ठा को पहुंच चुकी थी, आयशा (जो कि अरब देश में

सर्वाधिक सुन्दर स्त्री थी) ने उस से पूंछा था कि "क्या वह (खैडीज़ा) बुड्ढी न थी? क्या ईश्वर ने मेरे रूप से उसके स्थान में तुम्हें एक अधिक अच्छी बीबी नहीं दी?"। मुहम्मद ने सच्ची कृतज्ञता प्रगट करते हुये उत्तर दिया "नहीं, ईश्वर की शपथ करके कहता हूं कि उस से अधिक अच्छी बीबी कोई हो नहीं सकती। वह उस समय मेरा विश्वास करती थी जब सब लोग मुझ से घृणा करते थे, उसने मुझे उस समय सहायता दी जिस समय मैं धनहीन था और सर्व संसार मुझे धोखा दे रहा था।"

खैडीज़ा के साथ उसका विवाह होने से उसकी आर्थिक दशा अच्छी हो गई जिस से उसे वह सुअवसर मिला कि वह धर्म सम्बन्धी बातों के सोचने की प्रबल इच्छा पूरी कर सके। संयोग से ऐसा हुआ कि खैडीज़ा का चचेरा भाई 'वारक' जो यहूदी था क्रिस्तान हो गया। इसी ने पहिले पहिल बाईबिल का अनुवाद अरबी भाषा में किया। इसके धर्म त्याग से मुहम्मद को जो मूर्ति पूजन से घृणा थी वह और पक्की हो गई।

उन ईसाई सन्यासियों की भांति जो कि जंगल में अपनी कुटियों में रहा करते थे मुहम्मद भी हीरा नामक पहाड़ की एक गुफा में जो कि मक्का से कुछ मीलों के अन्तर पर थी चला गया और ध्यान और प्रार्थना में लग गया। इस एकान्त निवास में सर्व शक्तिमान और सनातन ईश्वर के पूजनीय गुणों पर विचार करके उसने अपनी बुद्धि से यह गम्भीर प्रश्न किया कि क्या मुझे वे सिद्धान्त स्वीकार कर लेना चाहिए जो एशिया निवासी क्रिश्चियन लोग मानते हैं अर्थात् ईसा का ईश्वर पुत्र होना और मरियम का कुमारी, माता, और स्वर्ग की रानी होने का चरित्र? और क्या ऐसा मानने से मैं दोष और ईश्वर निन्दा की भय से बच सकूंगा?

गुफा मे एकान्त ध्यान करने से मुहम्मद ने यह निश्चित सिद्धान्त निकाला कि उस समय में फैले हुए मतों और झगड़ों की घनघोर घटा में भी एक बड़ी सत्यता दिखाई पड़ सकती थी, अर्थात् ईश्वर की अद्वैतता। एक खजूर वृक्ष की पींड़ से टिक कर

उसने एक बार एक मनुष्य से जो डरते डरते उसके पास आया था कहा था कि 'तुम किस बात से डरते हो, मैं कोई राजा नहीं हूं, मैं केवल एक अरब निवासी स्त्री का पुत्र हूं जो घाम में सुखाया हुआ मांस खाती थी" ।

वह मरने के लिये मदीने को लौटा। अपने श्रोतागणों से विदा होते समय उसने कहा कि "हर ऐक घटना ईश्वर की इच्छा के अनुसार होती है, और उस घटना का समय नियत होता है, जो कि न तो घट बढ़ सकता है और न टल सकता है। मैं उसी के पास जाता हूं जिसने मुझे भेजा था, और तुम्हारे लिये मेरी अन्तिम आज्ञा यह है कि तुम परस्पर प्रेम रक्खो, आदर करो और सहायता करो, और यह भी आज्ञा है कि तुम परस्पर एक दूसरे को धर्म की ओर उत्साहित करो और अपने विश्वास पर अटल रहो और पवित्र कामों के करने का उत्साह दिलाओ। मेरा जीवन तुम्हारी भलाई ही के लिये था और मृत्यु भी ऐसी ही होगी।"

मृत्यु कष्ट के समय उसका शीश आयशा की गोद में था। बार बार वह अपना हाथ पानी के बरतन में डुबोता और अपने चिहरे को तर करता था। अन्त में उसकी दम टूटी और आकाश की ओर टकटकी लगाए हुए टूटे फूटे शब्दों में उसने कहा", हे ईश्वर मेरे पाप क्षमा कर—एवमस्तु, मैं आता हूं।" क्या हम इस मनुष्य के विषय में निरादर सूचक वार्ता कर सकते हैं? वर्तमान समय में उसके सिद्धान्त एक तिहाई मनुष्य जाति के धार्मिक पथदर्शक हो रहे हैं।

मुहम्मद ने, जिसने अपनी जन्मभूमि की प्राचीन मूर्तिपूजन प्रथा को छोड़ ही दिया था, उन सिद्धान्तों के छोड़ देने की भी तय्यारी कर ली थी जो उसने अपने नेस्टर मतावलम्बी 'गुरुओं से सीखे थे और जो बुद्धि और विवेक के विरुद्ध थे। और यद्यपि कुरान के प्रथम पत्रों में वह उन बातों पर अपना विश्वास होना प्रगट करता है जो मूसा और ईसा की कही हुई थीं, और वह उनका आदर भी करता था, तथापि उसका सर्वशक्तिमान ईश्वर का सर्वोपर आदर सब जगह से प्रगट

होता है। वह ईसा के ईश्वर होने वाले सिद्धान्त पर, कुमारी मरियम को ईश्वर माता की भांति माने जाने वाले सिद्धान्त पर, और मूर्तियों और चित्रों के पूजन वाले सिद्धान्त पर जो उसकी दृष्टि में बहुत ही नीच प्रकार की पूजा थी, भयभीत होकर आश्चर्य्य प्रगट करता है। वह त्रिदेव सिद्धान्त को पूर्णतः अस्वीकार करता है। इस सिद्धान्त के विषय में ऐसा ज्ञात होता है कि उसका विचार ऐसा था कि इस सिद्धान्त का सिवाय इसके कि तीन स्पष्ट ईश्वर मान लिये जाएं और कुछ अर्थ ही नहीं हो सकता।

उसका प्रथम और सर्वग्राही विचार केवल धार्मिक सुधार करने का था—अर्थात् अरब देश से मूर्तिपूजन धर्म निकाल देना और ईसाई धर्म के दुष्ट मतमतान्तरों को मिटा डालना। यह बात कि वह एक नया धर्म चलाना चाहता था एक मिथ्या अभिशाप था जो कि कुस्तुन्तुनियां में उस पर लगाया गया था, जहां के लोग उसे ऐसी घृणा की दृष्टि से देखते थे, जैसे कुछ दिनों बाद रोम निवासी ल्यूथर को देखते थे।

परन्तु यद्यपि उसने उन बातों को क्रोध सहित अस्वीकार किया था जिन बातों से ईश्वर की अद्वैतता के सिद्धान्त की उपेक्षा होती थी, तथापि वह ईश्वर के सगुण रूप सम्बन्धी विचारों से नहीं बच सका। कुरान का ईश्वर पूर्णतः मनुष्यवत है—कायिक और मानसिक दोनों भांति—यदि ऐसे शब्द प्रयोग करना उचित हो। परन्तु बहुत शीघ्र ही मुहम्मद के पंथानुगामियों ने इन नीच विचारों को छोड़ दिया और अधिक अच्छे विचारों तक उन्नति कर गए।

मुसल्मानी धर्म के प्राथमिक लक्षणों का जो यहां पर प्रदर्शन किया गया है उसे बहुत दिनों तक बहुत से योग्य प्रमाणिक पुरुष स्वीकार करते रहे। सर विलियम जोन्स, लाक के मतानुसार, मुसल्मानी धर्म का ईसाई धर्म से इन विशेष बातों में भेद मानता है कि ईसा को ईश्वर का पुत्र न मानना, उसको उस पिता के बराबरी वाला न मानना जिसकी अद्वैतता और जिसके गुणों को मुसल्मान लोग बड़े आदर के विचारों सहित मानते और प्रगट करते हैं। यही सम्मति इटैली में अधिकता से मानी जाती रही है। डैन्टी मुहम्मद को केवल एक मतान्तरकर्ता मानता है और मुसल्मानी धर्म को केवल एक एरि-

ओर उठाये और कहा । "हे ईश्वर यह नीच दुष्ट लोग मूर्तिपूजक शब्दों में प्रार्थना करते हैं और तेरे सिवाय अन्य को भी ईश्वर मानते हैं, परन्तु हम लोग तेरी अद्वैतता को मानते हैं और कहते है कि सिवाय तेरे कोई अन्य ईश्वर नहीं है । हम तुझ से विनय करते है कि तू अपने दूत मुहम्मद के हेतु इन मूर्तिपूजकों से लड़ने में हमारी सहायता कर ।" पूर्वीय मुसलमानों की ओर से सीरिया की विजय बड़ी भयंकर साधुता से की गई थी । सीरिया निवासी ईसाइयों के धर्म ने उनके वैरियों के चित्त में भयंकरता और क्रोध के विचार जाग्रत कर दिये थे । "मैं उस ईश्वर निन्दक मूर्तिपूजक की खोपड़ी चीर डालूंगा जो ऐसा कहता है कि अत्यन्त पवित्र ईश्वर, सर्व शक्ति-मान और सनातन ईश्वर ने पुत्र उत्पन्न किया है ।" खलीफ़ा उमर जिसने जिरोसेलम ले लिया था हिरैक्लियस नामक रोम सम्राट के नाम एक पत्र यों प्रारम्भ करता है । "अत्यन्त कृपालु ईश्वर के नाम से प्रारम्भ करता हूं, ईश्वर प्रशसनीय है, क्योंकि वह दोनों लोकों का मालिक है और न उसके स्त्री है न पुत्र" । पूर्वीय मुसलमान लोग ईसाइयों को सम्मेलक कहा करते थे, क्योंकि वे लोग मरियम और ईसा को सर्वशक्तिमान और अत्यन्त पवित्र ईश्वर में मिला देते थे ।

खलीफा की यह इच्छा नही थी कि वह सेना का मुख्य नायक बने । इस हेतु नाम के लिये तो इस काम का भार अबूउवैदा पर था और वास्तविक भार खलीद पर था । सेना को विदा करते समय खलीफा ने सब सैनिकों को न्याय, दया और अपना अपना बचन पूरा करने की शिक्षा दी थी । उसने उन्हें व्यर्थ बात करने से बचने के लिये और मद्य से बचने के लिये और ठीक समय पर प्रार्थना करने के लिये आज्ञा दी थी और यह भी आज्ञा दी थी कि जिस देश में होकर सेना निकले उस देश के सर्वसाधारण निवासियों पर कृपा करना, परन्तु उनके पुरोहितों पर तनक भी दया न करना ।

जारडन नदी के पूर्व ओर वसरा नगर है । यह एक दृढ़ नगर है जहां मुहम्मद पहिले अपने ईसाई गुरुओं से मिला था । यह नगर रोम राज्य के उन दुर्गो में से एक दुर्ग था जो उस देश में बहुतायत से

थे। इसी नगर के सामने मुसल्मानी सेना ने छावनी जा डाली। वहां की दुर्ग रक्षक सेना बलवान थी, और कोट की दीवारों पर पवित्र सूलियां और पवित्र झंडे गड़े हुए थे। यह दुर्ग बहुत दिनों तक सामना कर सकता था परन्तु उसका शासक रोमेनस अपने धर्म पर दृढ़ न रहा, और आक्रमणकारी सेना के लिये चुपके से फाटक खोल दिए। उसके चरित्र से प्रगट होता है कि सीरिया निवासी जन किस हीन दशा को पहुंच गये थे। पराजित हो जाने पर अपने एक व्याख्यान में, जो उसने अपनी विश्वासाहत प्रजा के सामने दिया था, उसने कहा था कि "मैं तुम्हारी संगति छोड़ता हूं, इस लोक के लिये और भविष्यत लोक के लिये भी। और मैं उसको नहीं मानता जो सूली पर चढ़ाया गया था, और उनको भी नहीं मानता जो उसको पूजते हैं। मैं ईश्वर को अपना मालिक बनाता हूं, इस्लाम को अपना धर्म बनाता हूं, और मक्का को अपना देव मन्दिर, और मुसलमानों को अपना भाई और उसी मुहम्मद को अपना पैग़म्बर मानता हूं जो हमें सीधे रास्ते पर चलाने के लिये, और सम्मेलक लोगों के विरोध करते रहने पर भी सच्चे धर्म को उन्नति देने के लिये, इस लोक में भेजा गया था"। फारिस के आक्रमण के समय से एशिया-माईनर, सीरिया ओर पैलेस्टाइन भी ऐसे दग़ाबाजों और बेईमानों से भरे हुए थे जो मुसलमानों की ओर हो जाने के लिये तत्पर ही रहते थे। रोमेनस उन हजारों मनुष्यों में से केवल एक था जिन्हों ने फारिस देश की विजयों द्वारा अपना धर्म खो दिया था।

बसरा से सीरिया की राजधानी दमिश्क उत्तर की ओर केवल ७२ मील के फासिले पर थी। मुसलमानी सेना ने तुरन्त उस ओर कूच किया। नगर निवासियों को तुरन्त सूचना दी गई कि यातो मुसलमान हो जाओ, या धन दंड दो, या लड़ो। एंटीआक नगर के महल मे, जो कि वहां से उत्तर की ओर डेढ़ सौ मील से अधिक दूरी पर न था, सम्राट हिरैक्लियस ने आक्रमण कारियों के भयंकर आगमन की सूचना पाई। उसने तुरन्त सत्तर हज़ार सेना भेजी। मुसलमानों को नगर का घेरा उठा देने के लिये विवश होना पड़ा। ऐज़नाडिन के

रक्षा की। वह सीरिया देश जिसको सीज़र के सम-तुल्य वाले बड़े पाम्पी ने अब से सात सौ वर्ष पहिले रोम राज्य मे मिला लिया था, वह सीरिया देश, जो ईसाई धर्म का जन्म स्थान था, जो उस धर्म के बहुत से पवित्र और बहु मूल्य स्मारक चिन्हों का दृश्य स्थान था, और जहां से हिरेक्लियस ने स्वय एक बार फारिस के आक्रमण-कारी को निकाल दिया था, इस प्रकार हाथ से जाता रहा कि फिर न मिल सका। स्वधर्म—भ्रष्ट और दग़ाबाज़ लोगों के कारण यह विपत्ति आई थी। सुनते हैं कि जिस जहाज़ पर चढ़ कर वह कुस्तुन-तुनिया को जा रहा था उस जहाज़ ने जब किनारा छोड़ा तब हिरेक्लियस बड़े ध्यान से अदृष्ट होते हुये पहाड़ों पर दृष्टिपात करता था और अत्यन्त शोक के साथ उसने यह कहा था, "हे सीरिया देश मेरा प्रणाम ले और यह प्रणाम सदैव के लिये है"।

मुसलमानों के बिजय की शेष घटनाओं को विदीवार वर्णन करना अनावश्यक जान पड़ता है। त्रिपोली और टायर को विश्वास घातियों ने कैसे छला, सीज़रिया कैसे ले लिया गया; लेबेनस पहाड़ की लकड़ी और फुनेशिया के मल्लाहों से वह मुसलमानी बेड़ा कैसे तय्यार हुआ जिसने रोम के बेड़े को हेलेसपांट में भगा दिया, साईप्रस, रोड्स, साईक्लेडीज़ कैसे तबाह कर दिये गये और वह पीतल की बड़ी मूर्ति जो ससार के आश्चर्य्यों में गिनी जाती थी कैसे एक यहूदी के हाथ बेंच डाली गई जिसने उसका पीतल ९०० ऊंटों पर लादा था, और खलीफा की सेनाएं कृष्ण—सागर तक कैसे बढ़ीं और कुस्तुनतुनिया के सामने पड़ी रहीं—यह सब बातें जेरोसेलिम के पतन के अनन्तर कुछ भी न थीं।

जेरोसेलिम का पतन! ईसाई धर्म की राजधानी का विनाश!! उस समय के लोग ऐसा समझते थे कि दोनों विरोधी धर्मों ने अपना न्याय ईश्वर से कराना चाहा था। मुसलमान धर्म विजयी ठहरा और उसे उसके पुरस्कार में जेरोसेलिम नगर मिला, और कभी २ थोड़े समय के लिये ईसाई धर्मयोद्धाओं के विजयी होने पर भी १००० वर्ष से अधिक दिनों तक उसके हाथ में रहने के अनन्तर

वह आज दिन भी उसी के हाथ में है। रोम राज्य के इतिहासकारों पर जिस मार्ग को ग्रहण करने का दोष लगाया गया है उसके हेतु वे कुछ कारण भी रखते हैं। "उन्होंने पूर्वीय ईसाई धर्म के नष्ट होने का बड़ा विषय बिलकुल ही छोड़ दिया है"। और पश्चिमीय ईसाई धर्म के विषय में, मध्यकाल (अर्थात् धर्म युद्धों का समय) के नीच प्रकृति के पोप लोगों ने इतना क्रोध प्रगट किया है कि उन्होंने विवश हो कर रोम के ईसाई धर्म की राजधानी होने का दावा एक झूंठी मौखिक कथा पर स्थित किया है कि सेंट पीटर किसी समय उस नगर में आया था। और सच्ची राजधानी, अर्थात् वह बड़ा और स्वयं ईसा की उत्पत्ति, उसके जीवन, और उसके मृत्यु का पवित्र स्थान काफिरों के हाथ में था। इस भारी विपत्तिजनक घटना के छिपाने का उद्योग केवल रोम के इतिहासकारों ही ने नहीं किया वरन् यूरोप के सबही ईसाई लेखकों ने भी, जिन्होंने इतिहास, धर्म, विज्ञान और सबही विषयों पर ग्रंथ लिखे हैं, अपने विजयी शत्रुओं के विरुद्ध एक ही सा मार्ग ग्रहण किया है। ऐसा वे सदैव करते रहे हैं कि जिस घटना को वे बहुत बड़ी समझते थे उसे छिपा जाते थे, और जिसको नहीं छिपा सकते थे उसको हलकी कर देते थे।

न तो यहां स्थान ही है और न वास्तव में इस ग्रंथ के तात्पर्य के अनुकूल ही है कि जैसा विदीवार हाल मैंने जेरोसेलिम के पतन का लिखा है वैसाही विदीवार हाल मुसलमानों के अन्य विजयों का वर्णन किया जाय। वे मुसलमानी विजय ऐसी थीं जिन्हों ने अन्त में मुसलमानी राज्य को भौगोलिक प्रमाण से सिकन्दर के राज्य तथा रोम के राज्य से बहुत ही बड़ा कर दिया था। परन्तु संक्षेप में इस विषय में यही कहा जा सकता है कि मैगी धर्म को ईसाई धर्म की अपेक्षा अधिक हानिकारी धक्का लगा। कैडीसिया की लड़ाई में फारिस के भाग्य का निबटारा हो चुका था। टेसीफोन के घेरे जाने पर ख़ज़ाना, सिलहख़ाना और बहुत सा लूट का माल मुसलमानों के हाथ लगा और यही कारण है कि निहावंद की विजय को वे लोग सब विजयों की विजय कहते हैं। एक ओर तो वे कैस्पीयन सागर तक बढ़े और

सकते हैं। उसने जान लिया कि केवल एक मात्र उपाय यही है और वह भी घातक है। उसने कहा कि मैं खलीफा की सौगंद खाकर कहता हूं कि यदि तीसरी बार आक्रमण किया जाय तो मैं सिकन्दरिया को ऐसा बना दूंगा कि वह प्रत्येक मनुष्य के जाने के लिये वैसा ही खुला हुआ हो जैसे एक वेश्या का भवन होता है। उसने अपने कथन से बढ़ कर काम कर दिखलाया, क्योंकि तब से उसने नगर रक्षक कोट के शिरोभाग गिरवा दिये, और उसे रखने के अयोग्य स्थान बना दिया।

खलीफ़ों की यह इच्छा नहीं थी कि वे अपनी विजय को मिसिर देश तक ही सीमाबद्ध रक्खें। सर्व उत्तरीय आफ्रिका समुद्र तट को राज्य में मिला लेने का काम उसमान ने पूरा किया। उसका सेनापति अब्दुल्ला ४०००० सैनिक लेकर मेमूफिस से चल पड़ा और बारका के मरुस्थल से होता हुआ त्रिपोली नगर को आ घेरा, परन्तु सेना में महामारी फैल गई और उसे मिसिर देश को लौट आने के लिये विवश होना पड़ा।

इस समय से बीस वर्ष से अधिक तक सब उद्योग रोक दिये गये। तदनन्तर अकबा ने नील नदी से ऐटलान्टिक समुद्र तक चले जाने का साहस किया। कनारी द्वीप समूह के सामने उसने अपने घोड़े को समुद्र में हिला कर ज़ोर से कहा "हे सर्वोपर ईश्वर! यदि यह समुद्र मेरा रास्ता न रोकता होता तो मैं अब भी पश्चिम की अज्ञात राज्यों में चला ही जाता, तेरे पवित्र नाम की अद्वैतता का उपदेश करता, और उन विद्रोही जातियों को जो तेरे अतिरिक्त अन्य देवताओं को पूजती हैं तलवार के हवाले करता"।

ये मुसलमानी चढ़ाइयां देश के भीतरी भागों में होकर हुआ करती थीं, क्योंकि रोम सम्राट गण उस समय तक भूमध्य–सागर पर अधिकार रखने के कारण समुद्र तट के शहरों पर अपना अधिकार रखते थे। अन्त में खलीफा अब्दुलमलिक ने कारथेज नगर को, जो उस समय सब नगरों से बड़ा था और वास्तव में उत्तरीय आफ्रिका का राज्य नगर था, ले लेने के लिये दृढ संकल्प किया। उसके सेनापति

हसन ने सीढ़ियों द्वारा कोट की दीवार पर चढ़ कर वह नगर ले लिया, परन्तु सिसली और गाथ की सेनाओं की सहायता सहित कुस्तुनतुनिया से कुमक पहुंच जाने पर उसे लौटने के लिये विवश होना पड़ा। परन्तु यह सहायता केवल अल्पकालिक थी। हसन ने कुछ मास व्यतीत होने पर फिर आक्रमण किया। इस में उसे सफलता हुई, और कारथेज नगर को जला कर भस्म कर डाला।

इस भांति जेरोसेलिम, सिकन्दरिया, और कारथेज, पांच में से तीन ईसाई धर्म के बड़े राज्य नगर जीत लिये गये। कुस्तुनतुनिया का पतन भी कुछ समय के अनन्तर हो गया। इसके पतन के अनन्तर केवल रोम नगर शेष रहा।

ईसाई धर्म की उन्नति में कारथेज ने बड़ा काम किया था, उसने यूरोप को अपने धर्म का यूरोपीय रूप दिया था और कुछ बड़े बड़े ईश्वर तत्व वादी जन भी दिये थे। यही नगर सेंट आगस्टाइन का निवासस्थान था।

जगत के इतिहास से जाना जाता है कि ऐसी शीघ्रता और ऐसी अधिकता से किसी भी धर्म का प्रचार नहीं हुआ जैसे मुसलमानी धर्म का। वह इस समय अल्टाई पर्वत से लेकर अटलान्टिक समुद्र तक, और एशिया के मध्य से लेकर आफ्रिका के पच्छिमी किनारे तक अपना अधिकार जमाये हुये था।

तदनन्तर खलीफा अलवलीद ने यूरोप पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। अंडल्यूसिया वा संध्या देश विजय करने का भी अधिकार दिया। उसके सैनापति मूसा ने यहां भी अन्य स्थानों की भांति दो प्रभावशाली सहायक पाये अर्थात् मतभेद और राजद्रोह। टोलेडो का मुख्य धर्माध्यक्ष और गाथिक सेनापति काउंट ज्यूलियन ऐसे ही मनुष्य थे। इन्हीं की अधीनता में जिरक्सीज़ युद्ध के कठिन समय में सेना का बहुत बड़ा भाग आक्रमणकारियों की ओर हो गया। स्पेन नरेश को विवश हो कर युद्ध क्षेत्र से भागना पड़ा, और इसी भागा भागी में वह गाडलकिवर नदी में डूब कर मर गया।

लूट करके देव दोष किया। यदि स्वयं नगर लूट लिया जाता तो उसका धार्मिक प्रभाव इतना बड़ा न होता। सैन्टपीटर के गिरजा घर से उसकी चांदी की वेदिका तोड़ ली गई और आफ्रिका को भेज दी गई। यह पीटर की वेदिका ही रोम के ईसाई धर्म का मुख्य चिन्ह था।

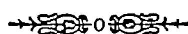
कुस्तुनतुनिया को मुसलमानों ने कई बार घेरा ही था। उसका पतन होने ही वाला था। पर केवल कुछ दिनों के लिये रुका हुआ था। रोम नगर का सर्वाधिक अपमान हुआ था और भारी हानि भी हुई थी। एशियामाईनर के आदरणीय गिरजाघर मिट चुके थे; बिना आज्ञा लिये हुये कोई ईसाई जिरोसेलिम नगर में पैर नही रख सकता था और सुलेमान के मन्दिर के स्थान में खलीफा उमर की बनवाई हुई मसजिद खड़ी थी। सिकन्दरिया नगर के भग्नावशिष्ट भागों मे से "दया की मसजिद" उस स्थान का चिन्ह बतलाती थी जहा मुसलमानी जनरल ने मार काट|से संतुष्ट होकर घृणासूचक दया के साथ मुहम्मद के शत्रुओ के बचे बचाये शेष स्मारक चिन्ह रखवा दिये थे। कारथेज नगर में सिवाय उसके काले काले खंडहर घरों के और कुछ नहीं बचा था। सर्वाधिक शक्तिवान धार्मिक राज्य जो दुनिया में कभी स्थापित किया गया है अकस्मात स्थापित हो गया। वह अटलान्टिक समुद्र से लेकर चीन की दीवार तक, और केस्पीयन समुद्र के किनारों से लेकर हिन्द समुद्र के किनारों तक फैला हुआ था, और तब भी वह एक विचार से अपने अति उच्च शिखर तक नहीं पहुंचा था। अभी वह समय आने को शेष था जब वह सीज़र के उत्तराधिकारियों को उनकी राजधानी से निकाल देता, यूनान प्रायद्वीप को अपनी अधीनता में रखता, और यूरोप के राज्य के लिये उसी महाद्वीप के मध्य मे ईसाई धर्म से झगड़ा करता और आफ्रिकर के अत्यन्त तप्त मरुस्थलों में और भूमध्य सागर और सायन रेखा के बहुत दूर दक्षिण देशों के मध्यस्थ घातक जंगलों के बीच में अपने धार्मिक सिद्धान्त और विश्वास विस्तृत करता।

परन्तु यद्यपि मुसलमान धर्म अपने अत्युच्च शिखर पर नहीं

पहुंचा था तब भी खलीफों का राज्य परमोन्नति को पहुँच चुका था। चार्ल्स मारटेल की तलवार नहीं, वरन् अरब राज्य के आन्तरिक झगड़े यूरोप के बचाव का कारण हुये। यद्यपि उमैया वंश के खलीफा सीरिया में सर्वप्रिय थे, तथापि अन्य देशों में वे अनधिकारप्रवेशी वा राज्यापहारी माने जाते थे। मुहम्मद के निकट सम्बन्धी उसके प्रचलित किये हुये धर्म के सच्चे प्रतिनिधि माने जाते थे। तीन समूहों ने, जो अपने भिन्न रंगों के झंडों से पहिचाने जाते थे, अपने झगड़ों के कारण खलीफों के राज्य के टुकड़े कर डाले; और अपने अत्याचारों से उसे कलंकित किया। उमैया वंश वालों का झंडा श्वेत रंग का था, फातिमा वंश वालों का हरा था, और अब्बासियों का काला था। अन्तोक्त झंडा अब्बास अर्थात् मुहम्मद के चचा का समूह प्रदर्शित करता था। इन झगड़ों का फल यह हुआ कि दशवीं शताब्दी में मुसलमानी राज्य तीन भागों में विभक्त होकर बग़दाद, काहिरा और कारडोआ के राज्य बन गये। मुसलमानों की राज्यनैतिक कामों की एकता का अन्त हो गया, और ईसाई संसार को दैवी सहायता से नहीं वरन् समतुल्य शासकों के झगड़ों के कारण रक्षा का उपाय मिल गया। इन आन्तरिक शत्रुताओं में बाहरी दबाव भी अन्त में आ मिले। और अरबी धर्म, जिसने संसार की मानसिक उन्नति में बहुत कुछ सहायता की थी, उस समय अन्त को पहुंच गया जब तुर्क और बबर लोगों ने शक्ति प्राप्त की थी।

मुसलमान लोग यूरोप के विरोध से पूर्णतः बे परवाह हो गये थे। वे पूर्णरीति से अपने घरू झगड़ों में ही फँसे रहते थे। आकले ने अपने इतिहास में सत्य कहा है कि "मुसलमानों का कोई ऐसा डिपुटी लेफ्टनेन्ट वा जनरल नहीं था जो तमाम यूरोप की सम्मिलित सेनाओं से अपमानित होने पर अपनी बड़ी भारी बे इज़्ज़ती न समझता रहा हो। और यदि कोई यह पूछे कि इन धृष्ट आक्रमण कारियों को सर्वथा निर्मल कर देने के हेतु यूनानियों ने क्यों और अधिक उद्योग न किया, तो उन लोगों के स्वभाव से जानकारी रखने वाले

स्त्रियों की सहायता से शिक्षा विभाग संगठित किया। उन्होने अरबी अंक और अङ्कगणित प्रचलित किये। एक सूची बनाई और ग्रहों के नाम रखाये। उन्होने नवीन ज्योतिष, रसायन और पदार्थ विद्याओं की नीव डाली और कृषी विद्या और हस्त कला कुशलता मे बड़ी उन्नति की)



खलीफ़ा अली ने कहा था कि अपने जीवन में मैं ने बहुधा देखा है कि मनुष्य अपने पिताओं के अनुसार होने की अपेक्षा अधिक तर अपने वर्तमान समय के अनुसार होते है। मुहम्मद के दामाद की यह गम्भीरता मय तत्व विवेचना बहुत सत्य है, क्योंकि यद्यपि मनुष्य के अङ्गों की बनावट उसका कुल प्रगट कर सकती है तथापि उसके मन की बनावट और उसके विचारो का झुकाव उस सगति से जाने जा सकते हैं जिसमें वह रहता है।

जब खलीफा उमर के लेफ्टनेन्ट अमरू ने मिसिर देश को जीत कर मुसलमानी राज्य में मिला लिया था उस समय उसने सिकन्दरिया नगर में एक यूनानी व्याकरणाचार्य्य पाया था जिसका नाम 'जान' था और उपनास फिलोपोनिस वा 'परिश्रम प्रिय' था। उस मित्रता के कारण जो इन देनों में हो गई थी यूनानी व्याकरणाचार्य्य ने उपहार की भाति सिकन्दरिया के बड़े पुस्तकालय की बची बचाई पुस्तकें मांग लीं। ये बची बचाई पुस्तकें वेही थीं जो युद्ध और समय और धर्म आग्रह से भी बच गई थीं। इस कारण अमरू ने इस विषय मे ख़लीफ़ा की समझा जानने के लिये उससे पूंछ भेजा। ख़लीफ़ा ने उत्तर दिया कि "यदि वे पुस्तकें ईश्वर वाक्य कुरान के अनुकूल हैं तो वे व्यर्थ हैं और उनको बचा रखने की आवश्यकता नहीं, और यदि वे क़ुरान के प्रतिकूल हैं तो वे अपकारी हैं उन्हें नष्ट कर देना चाहिये।" इसके अनुसार वे पुस्तकें सिकन्दरिया के हम्मासों को बांट दी गईं, और ऐसा कहा जाता है कि वे पुस्तकें छः महीने तक के समय में भी जलाई नहीं जा सकीं।

यद्यपि इस घटना को कोई कोई नहीं मानते, तथापि कुछ सन्देह नहीं है कि ख़लीफ़ा उमर ने ऐसी आज्ञा दी थी। खलीफ़ा

एक अपढ़ आदमी था और उसकी संगति धर्मोन्मत्त और अज्ञानी पुरुषों की थी। उमर का यह कार्य्य अली के कथन का एक उदाहरण था।

परन्तु ऐसा न मान लेना चाहिये कि वे पुस्तकें जो 'परिश्रम प्रिय' 'जान' लेना चाहता था वे पुस्तकें थीं जो टालेमी नामक राजाओं के बड़े पुस्तकालय में और परगेमस के राजा यूमीनीज़ के पुस्तकालय में थीं। जब से फिलेडेल्फस ने पुस्कें एकत्र करना आरम्भ किया था तब से आज तक लगभग एक हज़ार वर्ष बीत चुके थे। ज्यूलियस सीज़र ने आधी से अधिक पुस्तकें जला दी थीं, और सिकन्दरिया के मुख्य धर्माध्यक्षों ने केवल आज्ञा ही नहीं दी थी, वरन् लगभग सब शेष पुस्तकों को तितर वितर कर देने में प्रबंधक भी बने थे।

ओरोसियस स्पष्ट कहता है कि मैंने सेंटसाईरिल के चाचा थियोफिलस के मरने के बीस वर्ष बाद अलमारियां खाली पाई थीं और सम्राट थियोडोसियस से पुस्तकालय नष्ट कर देने की लिखित राजाज्ञा भी ले ली थी। यदि इस प्राचीन उत्तम पुस्तकालय पर ऐसा अत्याचार न भी किया जाता तो केवल टूटने फूटने और हजारों वर्ष के लूट से ही यह पुस्तकालय बहुत कुछ घट जाता। यद्यपि 'जान' जैसा कि उसका उपनाम प्रगट करता है, अधिक काम पाजाने के कारण हर्ष प्रगट कर सकता है, तथापि हमको निश्चय है कि आधे लाख पुस्तकों के पुस्तकालय की देख रेख करना उसकी भली भांति जांची हुई शक्तियों से भी बाहर था; और उसको स्थित रखने और उसकी रक्षा करने का खर्च, जिसमें टालेमी नामक राजाओं और सीज़र नामक राजाओं का बहुत अधिक धन व्यय होता था, एक व्याकरणी की शक्ति के बाहर है। जितना समय उनके जलाने वा नष्ट करने में लगा उससे भी उस पुस्तक समूह के विस्तार का ठीक अनुमान नहीं होता। क्योंकि जलाने की सब वस्तुओं में से चर्मपत्र तत्यन्त ही खराब वस्तु है। कागज़ और कोमल वस्तुएँ तो अच्छी तरह जलती हैं, परन्तु हमें विश्वास रखना चाहिये कि जब तक वे अन्य वस्तुएं पाते रहे होंगे,

पंथानुगामी बड़े बड़े मुसल्मान कुलों के बच्चों को शिक्षा देरहे थे, और दूसरी ओर वैद्य रूप से यहूदी लोग उनमें मिल गये थे।

इन प्रभावों से मुसल्मानों की भयंकर धर्मोन्मत्तता कम होगई। उनके आचरण सुधर गये, और उनके विचार उन्नत हो गये। उन्होने तत्वज्ञान और विज्ञान के राज्य को इतनी शीघ्रता से झँका डाला जितनी शीघ्रता से उन्होने रोम राज्य के प्रान्तों को झँका डाला था। उन्होने गँवारू मुसल्मान धर्म के भ्रान्त मतों को त्याग दिया और उनके स्थान मे वैज्ञानिक सत्यता ग्रहण करली।

मूर्तिपूजक संसार में मुसल्मानों की तलवार ने ईश्वर की महिमा स्थापित करदी थी। कुरान से उपदिष्ट दैवाधीनता के सिद्धान्त ने इस काम में बड़ी सहायता की थी। "ईश्वर के पूर्वनिर्णीत कार्य को न कोई पहले से जान सकता है न उसे टाल सकता है। ऊचे गरगजों पर भी मृत्यु हमें आ लेगी। आदि से ही ईश्वर ने वह स्थान निश्चित कर दिया है जहां प्रत्येक मनुष्य मरैगा"। अपनी अलंकारिक भाषा में उस अरब निवासी ने कहा है "भागने से कोई मनुष्य होनी से नहीं बच सकता। होनी रात्रि को भी अपने घोड़े पर चलती है। चाहै तू पलंग पर हो, चाहै युद्धघमसान मे, यमराज तुझे ढूंढही लेंगे"। अली ने, जिसकी बुद्धिमानी के विषय में हम कह चुके हैं कहाथा कि "विश्वास है कि मनुष्यों के सब कार्य ईश्वर की आज्ञा से होते हैं, न कि हमारे प्रबध से"। सच्चे मुसल्मान वे लोग हैं जो बिनीत भाव से ईश्वर की इच्छा के अधीन रहते हैं। वे भाग्य को और स्वतंत्र इच्छा को इस भांति मिलाते हैं कि बाह्यरेखा युक्त जीवन-चित्र हमैं दैदिया गया है, हम उस चित्र पर अपनी स्वतंत्र इच्छानुसार रंग भर रहे हैं"। उन्होने कहा है कि "यदि हम प्रकृति के नियमो को जीतना चाहते हैं तो हम को चाहिये कि हम उनका सामना करैं। हमको चाहिये कि हम उनका परस्पर एक दूसरे के विरुद्ध समीकरण करदें।

इस गूढ़ सिद्धान्त ने अपने भक्तों को ऐसे बड़े कामों के करने के लिए तैयार कर दिया जैसे बड़े काम मुसल्मानों ने किये। इस सिद्धान्त ने

निराशा को ईश्वरेच्छा में पलट दिया, और मनुष्यों को आशा से घृणा करना सिखला दिया। वे लोग एक कहावत कहा करते थे कि निराशा एक स्वतंत्र मनुष्य है और आशा एक गुलाम है"।

परन्तु युद्ध की बहुत सी घटनाओं ने स्पष्ट दिखला दिया कि औषधियां कष्ट को घटा सकती हैं, और यह भी दिखला दिया कि चतुरता से घाव बंद किए जा सकते हैं, और यह भी कि जो मनुष्य मर रहे हैं वे भी कब्र से खींच लिये जा सकते हैं। यहूदियों की वैद्यक विद्या एक पेशा हो गई, और कुरान के होतव्यता सिद्धान्त के विरुद्ध एक सर्वमान्य विरोधवाद हो गई। धीरे २ पूर्व निर्णीत होनी की कठिनता कम हो गई, और यह मान लिया गया कि एक मनुष्य के जीवन में स्वतंत्र इच्छा का प्रभाव हो सकता है, और यह भी मान लिया गया कि अपने इच्छित कामों से निश्चित सीमा के भीतर कोई मनुष्य अपने जीवन निर्वाह का मार्ग निश्चय कर सकता है। परन्तु जातियों के विषय में ऐसा है कि चूंकि वे ईश्वर के सामने व्यक्तिक जवाब देही नहीं दे सकतीं, इस हेतु वे एक स्थिर नियम के अधीन रखी गई हैं।

इस विचार से ईसाई और मुसल्मान जातियों की तुलना करने में परस्पर बड़ा अन्तर था। ईसाई लोग विश्वास करते थे कि सांसारिक कामों में बहुधा ईश्वरीय हस्ताक्षेप होता है। वे यह भी विश्वास करते थे कि संसार के शासन में कोई नियम नहीं है। प्रार्थना और विनय करके मनुष्य ईश्वर को कार्य्यों की धारा पलट देने के लिये मना सकता है, अथवा यदि उसमें भी सफलता न हो, तो मनुष्य ईसा के द्वारा सफल मनोरथ हो सकता है, वा कदाचित कुमारी मरियम के द्वारा, वा सिद्ध पुरुषों की सिफारिश द्वारा, वा उनके अवशिष्ट वा हड्डियों के प्रभाव द्वारा भी काम हो सकता है। यदि मनुष्य की प्रार्थनायें निष्फल हो जायें तो वह अपना मनोरथ अपने पुरोहित की सिफारिश द्वारा प्राप्त कर सकता है अथवा ईसाई धर्म के पवित्र मनुष्यों की सिफारिश द्वारा, और विशेष कर यदि बलिदान वा धन का पुरस्कार उसमें बढ़ा दिया जाय तो मनोरथ

पाया गया। इस हिसाब से पृथ्वी का वृत्त आजकल के प्रचलित चौबीस हज़ार मीलों के लगभग ठहरा। यह निश्चय कुछ बहुत असत्य नहीं है परन्तु चूंकि गोली आकृति की ठीक नाप एकही बार नापने से नहीं हो सकती इस लिये खलीफा ने मिसोपोटेमियां में कूफ़ा नगर के निकट एक बार और नाप कराई। उसके ज्योतिषी दो समूहों में बट गये और एकही स्थान से चलकर एक ने उत्तर की ओर दूसरे ने दक्षिण की ओर, हर एक समूह ने पृथ्वी वृत्त के एक अंश को नापा। उसका प्रतिफल हाथों में लिखा गया है। यदि उस समय का हाथ वही हाथ है जो राजकीय हाथ कहलाता था तो पृथ्वी वृत्त के एक अंश की लम्बाई जो उस समय निश्चित की गई उसमें $\frac{1}{3}$ मील से कम की गलती थी। इन्हीं नापों से खलीफा ने यह प्रतिफल निकाल लिया कि पृथ्वी की गोल आकृति प्रमाणित हो गई।

यह बात बड़ी आश्चर्य्य प्रद है कि कितनी शीघ्रता के साथ मुसल्मानों की भयानक धर्मोन्मत्तता मानसिक खोजों की बलवती अभिलाषा में बदल गई। पहिले तो कुरान साहित्य और विज्ञान के लिये एक रोक थी, मुहम्मद ने उसकी ऐसी प्रशंसा की थी कि वह सबही ग्रंथों से बढ़ कर ग्रंथ है और उसकी अनूपम उत्तमता ही को इस बात का प्रमाण माना था कि वह ईश्वर वाक्य है। परन्तु उसके मृत्यु के अनन्तर बीस वर्ष से कुछही अधिक काल में उस अनुभव ने जो सीरिया, फारिस, एशियामाईनर और मिसिर में हुआ था, बड़ा प्रभाव डाला था और उस समय का खलीफा 'अली' खुल्लम खुल्ला सब प्रकार की विद्योन्नति को उत्तेजना देता था। उमैया वंश के स्थापक मुवैया ने, जो ६६१ ईस्वी में खलीफा हुआ, राज्य प्रबन्ध ही में बड़ा उलट फेर कर डाला। पहिले खलीफा चुने जाते थे, उसने इस प्रथा को वंश परम्परागत कर दिया। उसने मदीना से राजधानी उठाकर अधिक केन्द्रस्थ स्थान दमिश्क में स्थापित की। और बड़ी शान शौकत और बड़े भोग विलासों से जीवन व्यतीत करने लगा। उसने कठिन धर्मोन्मत्तता के बंधनों को तोड़ डाला और अपने को विद्याओं का सहायक, रक्षक, और प्रचारक प्रसिद्ध किया। ३० वर्ष

में बड़ा भारी परिवर्तन होगया। एक फारिस के सूबेदार ने जो खलीफा उमर (दूसरा खलीफा) के दर्शनों को आया करता था ख़लीफ़ा को फ़क़ीरों के बीच मदीना की मसजिद की सीढ़ियों पर सोता हुआ पाया था। परन्तु जो विदेशी राजदूत छठवें खलीफा मुवैया से मिलने आते थे वे उसके सामने एक बड़े वैभवशाली महल में पेश किये जाते थे जो अत्यन्त सुन्दर अरबी वस्तुओं से सजाया हुआ होता था, और गजरों और फौव्वारों से सुसज्जित किया जाता था।

मुहम्मद की मृत्यु के अनन्तर एक शताब्दी से कमही में खास २ यूनानी तत्वज्ञानी लेखकों के ग्रंथों के अनुवाद अरबी भाषा में हो गये। ईलियड और आडिसी नामक काव्य ग्रंथ भी जो अपनी पौराणिक कथा सम्बन्धों के कारण अधार्मिक ग्रंथ माने जाते थे, विद्वानों की उत्सुकता शांत करने के लिये सीरिया की भाषा में अनुवादित हुये। अल्मंसूर ने अपने राज्य समय मे (७५३—७७५ ई०) राजधानी दमिश्क से बग़दाद को बदल दी और उस नगर को उसने बड़ा वैभवशाली राज्यनगर बनाया। वह ज्योतिष विद्या की उन्नति और उसके अध्ययन में बहुत समय लगाता था और वैद्यक और क़ानून के विद्यालय स्थापित किये थे। उसके पौत्र हारूंरशीद (७८६ ई०) ने भी उसी का अनुकरण किया और आज्ञा दी कि उसके राज्य भर में प्रत्येक मसजिद में एक पाठशाला होना चाहिये। परन्तु एशियाई विद्याओं का सर्वोत्तम समय अल्मामूं का राज्य-समय था (८१३—८३२ ई०)। उसने बग़दाद को विज्ञान का केंद्रस्थल बना दिया, बड़े २ पुस्तकालय इकट्ठे किये, और विद्वान मनुष्यों को अपने पास रखने लगा।

इस भांति बढ़ी हुई विद्या की उच्च अभिलाषा मुसल्मानी राज्य के तीन विभाग हो जाने के अनन्तर भी बनी रही। एशिया में अब्बासी वंश, मिस्रि में फातिमा वंश, और स्पेन में उमैया वंश वाले परस्पर एक दूसरे से केवल राज्यनैतिक बातों ही में नही वरन् विज्ञान और अन्य विद्याओं में भी बढ़ जाने की चेष्टा करने लगे।

बगदाद में एक इसी भांति की संस्था थी (सन् ८५० ई०)। उसने अरस्तू, अफलातून, गेलिन, और हिपाक्रेटोज़ इत्यादि के ग्रंथों के अनुवाद प्रकाशित किये थे। मूल ग्रंथों के विषय में यह बात थी कि बड़े विद्यालयों के कार्याध्यक्षों की यह रीति थी कि वे अपने अध्यापकों से नियत विषयों पर ग्रन्थ बनवाया करते थे। प्रत्येक खलीफा का एक निज का इतिहास कर्त्ता रहा करता था। किस्सा कहानियों की पुस्तकें जैसे सहस्त्ररजनीचरित्र इत्यादि मुसल्मानों की उत्पादक प्रतिभा की साक्षी देती हैं। इनके अतिरिक्त सब प्रकार के विषयों पर ग्रन्थ थे—अर्थात् इतिहास, स्मृतिशास्त्र, राजनीति, तत्वज्ञान और जीवन चरित्र। ये जीवन चरित्र केवल प्रख्यात मनुष्यों के ही नहीं थे, वरन् प्रख्यात घोड़ों और ऊटों के भी जीवन चरित्र थे। ये पुस्तकें बिना किसी भांति की निन्दा वा रोक के प्रकाशित हुई थीं। यद्यपि कालान्तर में अध्यात्मविद्या के ग्रंथो के प्रकाशन के लिये राजाज्ञा लेना पड़ती थी। भौगोलिक, देशदशा विषयक, वैद्यक विषयक, इतिहासिक और कोश सम्बन्धी संदेह निवारक ग्रन्थ बहुत से थे और उनके संक्षेप और घनीभूतसंग्रह (जैसे मुहम्मद अबू अब्दुल्ला का बनाया हुआ विश्व कोश) भी थे। कागज़ की सफेदी और पवित्रता का, और विविध रंगों की सियाहियों की, वा चतुर मिलावट का, और सोना चढ़ाकर अन्य प्रकार से शृङ्गार करके पुस्तकों के नामाक्षरों को प्रकाशित करने का लोग बड़ा गर्व करते थे।

मुसल्मानी राज्य में जहां तहां बहुत से विद्यालय थे। वे मंगोलिया, तातार, फारिस, मिसोपोटेमिया, सीरिया, मिसिर, उत्तरीय आफ्रिका, मुरक्को, फ़ीज़ और स्पेन में स्थापित थे। इस बड़े राज्य के एक ओर जो रोमराज्य से भी भौगोलिक विस्तार में बहुत बड़ा था, समरकंद का विद्यालय और ज्योतिष सम्बन्धी वेधशाला थे, और दूसरी ओर स्पेन में 'जिरेल्हा' था। गिबन महाशय विद्या के इस सरक्षण की ओर इङ्गित करके कहते हैं कि "भिन्न प्रान्तों के स्वतंत्र अमीर लोग भी इसी भांति के राजकीय अधिकार का दावा करते थे, और उनकी उत्तेजना से विद्या और विज्ञान का व्यसन समरकन्द

और बुखारा से लेकर फीज़ और कारडोआ तक फैल गया। एक सुल-तान के वज़ीर ने बगदाद में एक विद्यालय स्थापित करने के लिये दो लाख अशर्फी अर्पण की थीं और उस विद्यालय को एक जागीर लगादी थी जिसकी वार्षिक आय १५००० दीनार थी। इस शिक्षा का फल कदाचित् भिन्न भिन्न समयों पर प्रत्येक श्रेणी के छः हज़ार विद्यार्थियों को मिला, जिनमें कुलीनों के पुत्रों से लगा कर मजूरों के पुत्र तक सम्मिलित थे। देशी विद्यार्थियों के हेतु अलग् मासिक वृत्ति का प्रबंध था और अध्यापकों की योग्यता और परिश्रम का उचित वेतन से बदला दिया जाता था। प्रत्येक नगर में अरबी साहित्य के नवीन ग्रंथ विद्याव्यसनी और धनवान मनुष्यों की ओर से नकल कराये और एकत्रित किये जाते थे।" इन पाठशालाओं का प्रबन्ध और निरीक्षण बड़ी उदारता के साथ कभी नेस्टर मतावल-म्बियों को और कभी यहूदियों को दिया जाता था। इसकी कुछ परवाह न की जाती थी कि वह मनुष्य कहां का पैदा हुआ है, वा उसके धार्मिक विचार कैसे हैं, केवल उसकी विद्या का विचार किया जाता था। बड़े खलीफा अलमामूं ने कह दिया था कि "विद्वान लोग ईश्वर के चुने हुये लोग हैं, वे उसके अति उत्तम और अति उपयोगी सेवक हैं, जिनके जीवन बुद्धि सम्बन्धी शक्तियों की उन्नति में व्यतीत होते हैं। और यह भी कह दिया था कि बुद्धि सिखाने वाले लोग इस संसार के सच्चे प्रकाशक और नियम निर्धारक जन हैं, जिनकी सहायता के बिना यह संसार फिर से अज्ञान और उजड्डपन में डूब जायगा।"

क़ाहिरा के वैद्यक विद्यालय की भांति दूसरे वैद्यक विद्यालय भी अपने विद्यार्थियों की कठिन परीक्षा करते थे। तदनन्तर कार्य्याभि-लाषियों को अपने पेशे का काम करने का अधिकार मिलता था। यूरोप में स्थापित किया हुआ पहिला वैद्यक विद्यालय वह था जो इटली प्रदेश के सैलर्नो नगर में मुसल्मानों ने स्थापित किया था। और पहिली ज्योतिष सम्बन्धी वेधशाला वह थी जो उन्होंने स्पेन में सिवाईल नगर में बनवाई थी।

न्द्रमा को उदय होने से पहिले और अस्त होने के बाद तक ो देखते हैं ।

इस वैज्ञानिक उद्योग के प्रतिफल स्पष्ट रीति से उन बड़ी न्नतियों में देखे जाते है जो उस समय औद्योगिक कला कुशलता हुई । कृषि विभाग, उसको सींचने के अधिक उत्तम ढंगों, खादों को तुराई से काम में लाने, अधिक अच्छे पशु उत्पन्न करने, किसानों लिये अच्छे नियमों के बनने, और धान की और ऊख और कहवा ों खेती के प्रचार होने के द्वारा प्रगट करता है । शिल्पकर्म उसको शम, रूई, और ऊन के कारखानो की अधिकता द्वारा प्रगट करता है। ारडोआ और मराको के चमड़े और क़ागज़ की बनावट; खान खोदने, ातु ढालने, और विविध भांति के धातु के कामों, और टोलेडो की त्तम तलवार की बनावट से भी वह वैज्ञानिक उद्योग प्रगटहोता है।

कविता और गान विद्या के अनुरागी प्रेमी होने के कारण वे ाग अपने अवकाश का बहुत सा समय इन सुन्दर कामो मे लगाते । उन्होंने यूरोप को शतरंज का खेल सिखाया, और उसे किस्सा हानियों और उपन्यासों का चसका लगाया । साहित्य के गंभीर ाषयों में भी उनको आनन्द आता था । उनके पास मानवी गौरव की ास्थिरता के विषय पर बहुत से उत्तम ग्रंथ थे । अधार्मिक होने के फलों ौर भाग्य के उलट फेर, संसार की उत्पत्ति, स्थिति, और लय इन ाषयों पर भी उनके पास ग्रंथ थे । बड़े आश्चर्य के साथ कभी कभी न ग्रथों में वे विचार मिल जाते हैं जिनके विषय मे हम घमंड रते हैं कि वे हमारे समय में उत्पन्न हुये हैं । इस प्रकार वर्तमान मय के विकाश और विस्तार सिद्धान्त उनके पाठशालाओं में सिखाये ाते थे । वास्तव में उन्होंने उनकी इतनी उन्नति की थी जितनी हम रना नहीं चाहते-अर्थात उन्होंने उन सिद्धान्तो को जड़ पदार्थों और निज़ पदार्थों तक विस्तृत किया था । रसायन विद्या का मूलसिद्धान्त ातव वस्तुओं की उन्नति की प्राकृतिक क्रिया ही थी । बारहवीं शताब्दी ं लिखते हुये अलख़ज़ीनी कहता है कि "जब सर्व साधारण जन प्राकृ-तिक तत्व ज्ञानियों को यह कहते हुये सुनते हैं कि सोना एक ऐसा पदार्थ

है जो पूर्णता को पहुंच गया है, तब वे दृढ़ विश्वास करते हैं कि वह कोई ऐसी वस्तु है जो धीरे धीरे अन्य सब धातुओं के रूप में होता हुआ स्वर्णता को पहुंचा है। अर्थात उसकी स्वर्ण प्रकृति उत्पत्ति में सीसा थी, तदनन्तर लोहा हुई, फिर पीतल, फिर चांदी और अन्त में उन्नति करते करते सोना हो गई। वे यह नहीं जानते कि इस बात के कहने में प्राकृतिक तत्व ज्ञानियों का केवल वैसाही अभिप्राय है जैसा कि उस समय होता है जब वे मनुष्य के विषय में, उसके गुणों की पूर्णता और उसकी प्रकृति और बनावट की समतुल्यता के विषय में कुछ कहते हैं। उनका यह तात्पर्य्य नही होता कि मनुष्य प्रहिले बैल था, फिर बदल कर गदहा हो गया, तदनन्तर घोड़ा हुआ, और उसके बाद बंदर होकर अन्त में मनुष्य हो गया।

—— o ——

पांचवां अध्याय।

आत्मा के तत्व के विषय में झगड़ा—उत्पत्ति और लय का सिद्धान्त।

(आत्मा के विषय में यूरोप निवासियों के विचार—आत्मा का रूप शरीर के अनुहार है। एशिया निवासियों के अध्यात्मिक विचार—वेदवर्णित अध्यात्म विद्या, और बौद्ध धर्म, उत्पत्ति और प्रलय का सिद्धान्त प्रतिपादन करते हैं। अरस्तू ने भी इसका समर्थन किया है, अरस्तू ही का अनुकरण सिकन्दरिया के विद्वानों ने किया है, और तदनन्तर यहूदियों और अरब निवासियों ने अनुकरण किया है। यह सिद्धान्त एरीजीना के ग्रंथों में भी पाया जाता है।

शक्ति के रक्षक और पारस्परिक सम्बन्ध की कल्पना का इस सिद्धान्त से सम्बन्ध। शरीर और आत्मा की उत्पत्ति और भवतव्यता की समता। भेद प्रदर्शक मनो विज्ञान के मूलाधार पर मनुष्य के बनाये जाने की आवश्यकता।

अवरोज़ का मत, जिसकी नीव इन्ही बातों पर है, स्पेन और सिसिली होकर ईसाई संसार में लाया गया है।

इन सम्मतियों को दबाने मे सफलता प्राप्त की, परन्तु उनका कभी सर्वथा अभाव न हुआ। हमारे समय में भी वे इतने चुपके चुपके और विस्तृत भाव से यूरोप में फैलती रहीं कि यह उचित समझा गया कि वे एक बहुत ही खुल्लम खुल्ला रीति से पोप लोगों के कर्तव्य नियमावली में लिखकर प्रगट की जायें।

और वेटिका की सभा ने उनका हानि कारक स्वभाव और चुपके चुपके फैलना मान कर अपनी पहिली व्यवस्थाओं में उसी भांति प्रगट और स्पष्ट रीति से उनके मानने वालो को धर्मच्युत करने की आज्ञा दी है। "वह मनुष्य धर्मच्युत समझा जाय जो यह कहता है कि आत्माएं दैवी पदार्थ से उत्पन्न हुई हैं, वा ऐसा कहता है कि ईश्वरीय तत्व प्रकाशन और उन्नति से सब कुछ हो जाता है"। उचित अधिकारियों के इस काम पर दृष्टि रख कर यह आवश्यक ज्ञान पड़ता है कि हम अब इन सम्मतियों के लक्षण और इतिहास पर विचार करें।

ईश्वर तत्व विषयक विचार अवश्य ही आत्मा तत्व विषयक विचारों पर प्रभाव डालते हैं। पूर्वीय एशिया निवासी लोगों ने ईश्वर को निराकार माना था और इसका आवश्यक फल यह हुआ कि आत्मा को उसी ईश्वर से निकली हुई और उसी में समाजाने वाली मानना पड़ा।

इस भांति वेद की अध्यात्म विद्या की नीव इस बात के मान लेने पर स्थित है कि एक सर्वत्र व्यापी आत्मा सब ही वस्तुओं में व्याप्त है। "वास्तव में केवल एक ही ईश्वर है जो सर्वोत्तम आत्मा है। उसकी और मनुष्य की आत्मा का एकही तत्व है"। वेद और मनुस्मृति कहते हैं कि मनुष्य की आत्मा एक सर्वत्र व्यापी 'बुद्धि' से उत्पन्न हुई वस्तु है और अवश्यही उसको उसी मे लय होना पड़ेगा। वे उस आत्मा को निराकार मानते हैं और यह भी मानते हैं कि यह दृष्टिगत प्रकृति अपनी सुन्दरताओं और रम्यताओं सहित केवल ईश्वर की छाया मात्र है।

वेद मत होते होते बौद्धमत हो गया जो अब मनुष्य जाति के एक बड़े भाग का धर्म हो गया है। यह धर्म यह बात मानता है कि

कोई एक सर्वोच्च शक्ति है, परन्तु इस बात को नहीं मानता कि कोई एक सर्वोत्तम व्यक्ति है। यह धर्म एक ऐसी शक्ति का होना मानता है जो अपने प्रकाशन की भांति पदार्थ को पैदा करती है। यह धर्म उत्पत्ति और लय का सिद्धान्त स्वीकार करता है। दिया की लौ में वह मनुष्य की मूर्ति देखता है और उसी में शक्ति के विस्तार और पदार्थ का एक रूप मानता है। यदि हम उससे आत्मा के अन्तिम परिणाम के विषय में पूछते हैं तो वह हम से प्रश्न करता है कि दिया बुझादेने पर दिया की लौ कहां गई और बत्ती जलाने से पहिले वह लौ किस दशा में थी। क्या उसका अभाव था ? क्या वह सर्वथा विनाश हो गई ?। वह मानता है कि व्यक्ति के अस्तित्व का विचार जो जीवन भर हमको धोखे में डाले रहा है मरने के साथ ही एक दम नहीं मिट सकता, वरन् धीरे धीरे विनष्ट हो सकता है। इसी बात पर पुनर्जीवन का सिद्धान्त स्थित है। परन्तु अन्त में सर्वव्यापी बुद्धि के साथ पुनर्मिलन होता है, निर्वाण प्राप्त होता है, विस्मृति दशा हो जाती है। यह एक ऐसी दशा है जो पदार्थ, अन्तरिक्ष वा समय से कुछ सम्बन्ध नही रखती। यह वही दशा है जिस दशा को उस बुझे हुये दिया की लौ प्राप्त हुई है। यह वही दशा है जिस में हम पैदा होने से पहिले थे। इसी परिणाम की हमें आशा करनी चाहिए। यही सर्वव्यापी शक्ति में लय हो जाना है, यही परम मोक्ष है, यही सदैव कालीन विश्राम है।

ये सिद्धान्त पहिले पहिल अरस्तू द्वारा पूर्वीय यूरोप में प्रचलित हुये थे, और वास्तव में, जैसा कि हम वर्णन करेंगे, वह इनका उत्पादक समझा गया। कालान्तर में सिकन्दरिया के विद्वानों पर इन विचारों ने बड़ा प्रभाव डाला। फाईलो नामक यहूदी ने, जो कैलीगुला के समय में वर्तमान था, अपने तत्वज्ञान की नीव इसी उत्पत्ति सिद्धान्त पर स्थित की थी। प्लोटिनस ने इस सिद्धान्त को मनुष्य की आत्मा के लिये चरितार्थ होने वाला ही नहीं माना वरन् ऐसा भी माना है कि यह सिद्धान्त निर्देव विषयक सिद्धान्त के स्वरूप का उदाहरण है। क्योंकि जैसे सूर्य से प्रकाश की एक किरण निकलती है

जो कुछ हम मनुष्य की बुद्धि में देखते हैं उस पर भी खूब विचार करना चाहिये। यदि वह युक्त्यात्मक मनोविज्ञान के प्रखर प्रकाशों से प्रकाशित न होता तो मानवी मनोविज्ञान की क्या स्थिति होती ?

"ब्राडी" घटनाओं पर बहुत बड़ा विचार करने के अनन्तर कहता है कि पशुओं का मन उसी तत्व का बना हुआ है जिस तत्व का मनुष्यों का मन है। प्रत्येक मनुष्य जो एक कुत्ते के स्वभावों को भली भांति जानता है इस बात को मानेगा कि वह पशु भलाई बुराई के भेद को जानता है, और जब उससे कोई चूक हो जाती है तब उस चूक को समझता हुआ जान पड़ता है। बहुत से पालतू पशुओं में सोच विचार करने की शक्तियां होती हैं, और वे अपने इच्छित तात्पर्यों को प्राप्त करने के लिये उचित उपाय काम में लाते हैं। हाथी और पुच्छ विहीन बन्दर के इच्छित कामों की बहुत अधिक कथायें वर्णित हैं। यह प्रत्यक्ष बुद्धि अनुकरण पर निर्भर नहीं है, और न इस बात पर कि वे मनुष्यों के संग रहते हैं, क्योंकि यही जानवर जब जंगल में रहते हैं और मनुष्य से ऐसा सम्बन्ध नही रखते, तब भी वे वैसे ही गुण प्रगट करते हैं। भिन्न जातियों में यह योग्यता और स्वभाव बहुत भिन्न भिन्न होता है। इस भांति कुत्ते में केवल अधिक बुद्धि ही नहीं होती वरन् उसमें सामाजिक और सुसभ्य गुण भी ऐसे होते हैं जो बिल्लीमें नहीं होते, कुत्ता अपने मालिक से प्रेम रखता है और बिल्ली अपने रहने के स्थान से।

'डू ब्वाय रेमण्ड' निम्नलिखित आश्चर्य्यप्रद विवरण देता है। "प्रकृति को जानने की इच्छा रखनेवाले को मज्जातन्तुगत पदार्थ के उस सूक्ष्म कण को बड़े आदर और आश्चर्य्य से देखना चाहिये जो एक चींटी की परिश्रमी, निरमात्री, व्यवस्थित, स्वामिभक्त और निडर आत्मा के रहने का स्थान है। वह कण अगणित पीढ़ियों से उन्नति करते २ इस वर्तमान दशा तक पहुंचा है"। 'ल्यूबर' के वर्णन से, जिसने इस विषय में बहुत ही अच्छा लिखा है, हम कैसा प्रभावजनक अनुमान निकाल सकते हैं। वह लिखता है कि "यदि तुम काम करती हुई चींटी को ध्यान से देखो तो तुम कह सकोगे

प्रकार शब्द उसी वायु में फिर लौट जाते हैं जहां से वे पैदा हुए थे, और जिसके कारण वे संस्थित थे, और फिर वे सुनाई नहीं देते। कोई नहीं जानता कि उनका क्या हुआ। उस अन्तिम लय में जो समयान्तर में अवश्य ही होने वाली है ईश्वर ही सर्वस्व होगा और सिवाय उसके कोई वस्तु अस्ति न होगी"। "मैं उसको सब वस्तुओं की आदि और सब वस्तुओं का कारण समझता हूं। सब वस्तुएं जो इस समय वर्तमान हैं और जो किसी समय रही हैं पर इस समय नहीं हैं, उसी से निकली थीं, उसी से और उसी में बनाई गई थीं। मैं उसको सब वस्तुओं का अटल अन्त भी मानता हूं। इस सर्वव्यापी प्रकृति के विषय में चार प्रकार का विचार है अर्थात् आदि और अन्त के नाम से ईश्वरीय प्रकृति के दो विचार, और दो विचार देहधारी प्रकृति के अर्थात् कारण और कार्य्य। सिवाय ईश्वर के कोई वस्तु अनादि अनन्त नहीं है"।

इसी आत्मा के, सर्वत्र व्याप्त बुद्धि तक लौट जाने को एरीजीना थियोसिस वा सायुज्य मुक्ति कहता है। उस अन्तिम लय में गत सब बातों का स्मरण भूल जाता है। आत्मा उस दशा को पहुँच जाती है जिस दशा में वह शरीर को चेतन्य करने से पहिले थी। इसी लिये एरीजीना अवश्य पादरियों का कोप भाजन हो गया।

पहिले पहिल हिन्दुस्तान में यह बात मानी गई थी कि शक्ति अविनाशी और अनादि अनन्त है। इस बात से उन विचारों का कुछ २ स्पष्ट आभास मिलता है जिनको अब हम "परस्पर सम्बन्ध और संरक्षण" कहते हैं। जगत की स्थिति से सम्बन्ध रखनेवाले विचार इस विचार को पुष्ट करते हैं, क्योंकि यह स्पष्ट है कि यदि शक्ति की अधिकता वा कमी होगी तो संसार का क्रम विनष्ट हो जायगा। इस हेतु संसार में शक्ति की एक नियत और अपरिवर्तनीय मात्रा होना अवश्य एक वैज्ञानिक बात मानना चाहिये। जो परिवर्तन हम प्रत्यक्ष देखते हैं वे उसके विभाग कल्पना के हैं।

परन्तु इस कारण से कि आत्मा को एक उद्योगी बीज मानना ही चाहिये। इस लिये एक नये पदार्थ का अनस्तित्व से अस्तित्व

और तदनन्तर उस धातु पर एक फूंक मारी जाय और जब फूंक की भाफ विलीन हो जाय और टिकुली गिरा दीजाय, तब यद्यपि बहुत तेज़ दृष्टि से देखने पर भी उस चिकने धरातल पर किसी रूप का कोई चिन्ह न पाया जायगा, तथापि यदि हम उसपर फिर फूंक मारें तो उस टिकुली की छाया की प्रतिआकृत स्पष्ट देख पड़ेगी और यह बात बार बार की जा सकती है। इतना ही नहीं वरन् कुछ और अधिक भी अर्थात यदि वह चिकनी धातु युक्ति सहित एकान्त स्थान में रखदी जाय, जहां उसके तल को कोई हानि न पहुंचे, और इस भांति वह महीनों रक्खी रहै तो फिर उस पर फूंक मारने से वह छाया आकृति प्रगट हो जायगी।

ऐसे उदाहरण से यह बात प्रगट होती है कि एक बहुत ही तुच्छ चिन्ह कैसे इस भांति लिख लिया जा सकता है, और सुरक्षित रक्खा जा सकता है। परन्तु यदि ऐसे निर्जीवित तल पर कोई चिन्ह इस प्रकार अमिट रूप से बन जा सकता है तो वह चिन्ह कितना अधिक अमिट न होगा जो विशेष कर इसी काम के लिये बनाये हुये नसजाल पर हो। किसी दीवार पर कोई छाया ऐसी नहीं पड़ती कि वह सदैव काल के लिये कोई अपना चिन्ह वहां न छोड़े। यह चिन्ह उचित उपाय करने पर प्रगट किया जा सकता है। फोटोग्राफ़ी के काम ऐसे ही काम हैं। हमारे मित्रों के चित्र अथवा प्राकृतिक दृश्यों के चित्र छाया ग्राही तलों पर मानवी नेत्रों से छिपे रह सकते हैं, परन्तु ज्योंही उचित विकाशक उपाय किये जायेंगे त्योंही वे प्रगट हो जायेंगे। चांदी वा शीशा के तल पर एक छायाकृति तब तक छिपी रहती है जब तक हम अपनी मंत्र शक्ति से संसार में प्रगट नहीं करते। बहुत ही गुप्त कोठरियों की दीवालों पर जहां हम विचारते हैं कि किसी की दृष्टि नहीं पड़ती और हमारे एकान्त निवास को कोई अपवित्र नहीं कर सकता हमारे कामों के चिन्ह बने रहते हैं अर्थात उन कामों के चिन्ह जो हमने उस स्थान में किये हैं।

कि वह उस काम के अनन्तर कौन सा काम करेगी" वह उस विषय को सोच रही है और तुम्हारे ही समान विचार कर रही है। सत्यवादी और निश्छल ह्यूबर कथित बहुत सी कथाओं में से एक कथा सुनो "जब एक निरीक्षक चींटी काम देखने के लिये उस समय आई जिस समय मजदूर चींटियों ने नियत समय से पहिले ही छत बनाने का लग्गा लगा दिया था, तब उसने उस काम को देखा और दीवारें ठीक ऊंचाई तक उठजाने पर भी उसने उस छत को गिरवा दिया और उसी पुरानी छत के टुकड़ों से नई छत बनवाई"। ये चींटियां वास्तव में स्वयंवाही यंत्र नहीं हैं, वरन् वे इच्छा शक्ति प्रगट करती हैं। वे अपने प्राचीन साथियों को पहिचानती हैं जो बहुत महीनों तक उनसे पृथक रहे हैं, और उनके लौट आने पर हर्ष का विचार प्रगट करती हैं। उनकी साम्पार्किक भाषा बहुत प्रकार के भाव प्रगट करने योग्य है। वह उनके घर के भीतरी भाग के लिये जहां बिलकुल अंधेरा ही रहता है बहुत उचित भाषा है।

अकेले रहने वाले कीड़े अपनी सन्तान बढ़ाने के लिये अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहते, और समूह बांध कर रहने वाले कीड़े अधिक दिनों तक जीवित रहते हैं। वे सभ्य प्रेम भी प्रगट करते हैं और अपने बच्चों को शिक्षा देते हैं, धीर्य और कारीगरी के नमूना की भांति इन छोटे कीड़ों में से कई एक कीड़े प्रति दिन सोलह वा अठारह घंटे तक काम करते हैं। थोड़े ही मनुष्य ऐसे हैं जो चार या पांच घंटे से अधिक समय तक लगा तार मानसिक काम करने योग्य हैं।

प्रतिफलों की एक प्रकारता कारणों की एक प्रकारता प्रगट करती है। और कामों की एक प्रकारता अङ्गों की एक प्रकारता चाहती है। मैं इस पुस्तक के पढ़ने वाले को, जो पशुओं के स्वभावों से जानकारी रखता है और विशेष कर उस अजीब कीड़े के जातीय सम्बन्धों से जानकारी रखता है जिसका वर्णन हो चुका है फिर से निजकृत "इन्टे-लेक्चुअल डिवलपमेन्ट आफ यूरोप" नामक पुस्तक का उन्नीसवां अध्याय पढ़ने के लिये अनुरोध करता हूं, जिसमें उसे पेरू के 'इनका' नामक

जाय) वह विगत समय के अनुभवों के चिन्हों से, आश्चर्यप्रद रीति से, भविष्य की सत्यताओं के विषय में बहुत से प्रमाण निकाल लेता है; और इस प्रकार प्रगट में अत्यंत असम्भव कारण द्वारा अपनी शक्ति इकट्ठा करके अज्ञात रूप से (चाहे हम कोई हों वा कहीं हों) उन छाया चित्रों से लेकर, जो स्पष्ट होते ही मिट जाते हैं, उस वस्तु के गम्भीर विश्वास तक ले जाता है जो अमर और अविनाशी है अर्थात् आत्मा।

एक कीड़ा स्वयम्बाही यंत्र से इस बात में भिन्न है कि उस पर पुराने और अंकित अनुभवों का प्रभाव पड़ता है। जीवधारियों के अधिकाधिक ऊंची श्रेणियों में वह चित्रांकण अधिकाधिक पूर्ण होता जाता है और स्मरण शक्ति अधिक सम्पूर्ण होती जाती है। बाहरी रूप और उसके नम्र जालिक अनुभव में कोई आवश्यक एक-रूपता नहीं है; जैसे तार घर में दिये हुये संदेश-शब्दों और दूरस्थ स्थान तक पहुंचाई हुई तार की खबर के चिन्हों में अनुरूपता नहीं होती, और जैसे पुस्तक पर छपे हुये अक्षरों और उन अक्षरों में वर्णित कामों वा दृश्यों में अनुरूपता नही होती, परन्तु वे अक्षर पढ़ने वाले के मन में उन घटनाओं और दृश्यों का स्पष्ट ज्ञान पहुँचा देते हैं।

यदि किसी जन्तु में अनुभवों को ग्रहण करने वाला कोई यंत्र न हो, तो वह अवश्य एक निपट स्वयम्बाही यंत्र हो सकता है, अर्थात उसमें स्मरण शक्ति नहीं हो सकती। छोटे छोटे और अनिश्चित प्रारम्भों से यह मानसिक यंत्र धीरे धीरे विकाश करता जाता है, और ज्यों ज्यों उसकी उन्नति होती जाती है त्यों त्यों मानसिक योग्यता बढ़ती जाती है। मनुष्य में यह ग्रहण वा अंकण शक्ति पूर्णता को पहुँच जाती है। वह गत और वर्तमान अनुभवों के अनुसार चलता है। उस पर अनुभव का प्रभाव पड़ता है, और उसका आचार व्यवहार बुद्धि से निश्चित होता है।

बहुत भारी उन्नति उस समय कहलाती है जब कोई जंतु ऐसी योग्यता प्राप्त कर लेता है कि अपने मन में एकत्र किये हुये अनुभवों के ज्ञान को अपनेही जाति के अन्य व्यक्तियों को दे सकता है। यही

थोड़ी देर तक आंखे बंद रखने के बाद यदि हम, जैसे सबेरे सो कर जगते हैं, एकाएक और बड़े ध्यान से एक अति प्रकाशमय वस्तु को देखें और तदन्तर तुरन्त ही फिर आखें बंद करलें तो हमारे सामने वाले अनन्त अंधेरे में एक आभास चित्र दिखलाई पड़ता है। हम को भली भांति जान लेना चाहिये कि यह छायाचित्र एक कल्पित वस्तु नहीं है वरन् वास्तविक वस्तु है। क्योंकि बहुत सी विदीवार बातों को जिनको हम क्षणिक दृष्टि से नहीं पहिचान सकते, हम अवकाश के समय इस छायाचित्र में ध्यान कर सकते हैं। इस भांति हम ऐसी वस्तु के नमूने देख सकते हैं जैसे खिड़की से लटकता हुआ एक ज़रदोज़ी का परदा या सामने वाले एक दरख़ की शाखाएं। धीरे धीरे वह चित्र धुँधला होता जाता है और एक या दो मिनट में बिलकुल ग़ायब हो जाता है। ऐसा जान पड़ता है कि उस चित्र में हमारे सामने वाले अन्तरिक्ष में तैरने का स्वभाव होता है। यदि आंख के गटे को हिलाते हुये हम उस चित्रका पीछा करें तो वह अकस्मात विलीन हो जाता है।

आंख के पर्दे पर चिन्हों का इतनी देर तक ठहराव प्रमाणित करता है कि नस कोषों पर बाहरी वस्तुओं का प्रभाव क्षणिक ही नहीं होता है। इस घटना में और फोटो तय्यार करने वाले कांच के चिन्हों की स्थिरता, विकाश और बिनाश में एक प्रकार की सादृश्यता है।

इस भांति मैंने उन दृश्यों और मकानों के चित्र देखे हैं जिनका फोटो मेक्सिको में लिया गया था और कारीगरों के कथनानुसार महीनों के अनंतर न्यूयार्क में विकाशित किये गये। इतना बड़ा सफर करने के बाद भी वे चित्र ठीक ठीक प्रकाशित हो गये। उनके ज्यों के त्यों रूप और उनके अंधेरे उजेरे अङ्गों की विभिन्नता कुछ भी नहीं विगड़ी। वह चित्रांकरण कांच कुछ भी नहीं भूला। उसमें सदैव कालीन पहाड़ों के आकार और लुटेरों की आगके क्षणिक धुएं का आकार एक ही भांति सुरक्षित रहा।

ईश्वर है और आत्मा उसी से निकलती है और उसी तक लौट जाती है। और व्यक्तिक वस्तुओं की उत्पत्ति के विषय में दो विरोधी सम्मतियां हैं। प्रथम यह कि वे नास्ति से पैदा की गईं। दूसरी यह कि वे प्रथमस्थित रूपों से बिकाश करते हुये निकली हैं। उत्पत्ति का सिद्धान्त उपरोक्त कल्पनाओं में से प्रथमोक्त कल्पना का है और विकाश सिद्धान्त दूसरी कल्पना का है।

इस भांति अरब निवासियों के तत्व ज्ञान ने वही मार्ग धारण किया जो उसने चीन, हिन्दुस्तान, और सब ही पूर्वीय देशों में धारण किया था। उस सिद्धान्त का सर्वथा तात्पर्य्य यह था कि "पदार्थ" और "शक्ति" अविनाशी हैं। उसने मानवी शरीर के पदार्थ का प्रकृति के पदार्थिक ढेर से लिये जाने और अन्त में उसके उसी में मिल जाने में, और सर्वत्र व्यापी बुद्धि अर्थात ईश्वर से मानवी आत्मा के निकलने और फिर अन्त में उसी में लय हो जाने में एक समता पाईथी।

इस प्रकार अलम् विस्तार से उत्पत्ति और लय के सिद्धान्त के तत्वज्ञानिक लक्षणों को वर्णन करके अब मुझे उसका इतिहास वर्णन करना है। यूरोप में स्पेन निवासी अरबों ने उसका प्रचार किया। स्पेन ही वह केन्द्रस्थल था जहां से निकल निकल कर उसने तमाम यूरोप भर के बुद्धिमान और व्यवहारचतुर लोगों पर प्रभाव डाला और स्पेन में उसका बुरी भांति से अन्त हो गया।

स्पेन का खलीफ़ा पूर्वीय जीवन के भोग विलासों में पड़ गये थे। उनके बड़े बड़े महल, मनोहर उद्यान और रूपवती स्त्रियों से भरे हुये अन्तःपुर थे। यूरोप आज भी उससे अधिक रुचि, अधिक नफ़ासत, अधिक सुन्दरता नहीं प्रगट करता जितनी कि उस समय स्पेन निवासी अरबों के राज्य नगरों में देखी जा सकती थी जिस समय का हम वर्णन कर रहे हैं। उनकी गलियां प्रकाशित और पक्की खरंजेदार थीं, और निवासस्थान चित्रित और फ़र्शदार थे। जो जाड़े में अगीठियों से गर्म रक्खे जाते थे और गर्मी में उस सुगंधित वायु से ठंढे रक्खे जाते थे जो फूलों की क्यारियों से भूगर्भस्थित नलों द्वारा लाई जाती थी। उनके यहां स्नानागार, पुस्तकालय,

बात उस व्यक्ति के जातीय जीवन के प्रसार का चिन्ह है और वास्तव में यह उसके लिये आवश्यक है। उच्च कोटि के कीड़ों में यह काम सम्पर्क शक्ति द्वारा किया जाता है और मनुष्यों में भाषा द्वारा। मनुष्य जाति अपनी प्राचीन जंगली दशाओं में इस विषय में सीमा-बद्ध थे। एक व्यक्ति का ज्ञान वार्तालापही द्वारा दूसरे तक पहुँचता था। एक पीढ़ी के काम और विचार दूसरी पीढ़ी को दिये जा सकते थे और इस प्रकार उस पीढ़ी के काम और विचारों पर प्रभाव डाला जा सकता था। परन्तु इन मौखिक कथाओं की भी सीमा है, वाक्य शक्ति द्वारा एक जातीयता होना सम्भव है, पर इससे अधिक और कुछ नहीं।

बड़े आनन्द के साथ हम इस काम की उन्नति के विस्तार का वर्णन करते हैं। लेखन गुण के अन्वेषण ने अनुभवों के अंकुर को प्रसार और स्थिरता दी। वे अनुभव जो अबतक एक आदमी के मन में एकत्रित थे सब मनुष्य जाति भर को दिये जा सकते हैं, और सदैव काल स्थित रक्खे जा सकते हैं। सभ्यता की संभावना हुई। क्योंकि बिना लेखन गुण जाने हुये, चाहे किसी रूप में वह लेखन हो, सभ्यता ठहर नहीं सकती।

इस मनोवैज्ञानिक विचार में हम छापा के अन्वेषण का ठीक गुण समझ सकते हैं जो लेखन गुण का एक प्रकार का प्रसार ही है; और जो विचारों के फैलाव की तेज़ी को बढ़ा कर और उनकी स्थिरता को निश्चित कर के सभ्यता को बढ़ाता है और मनुष्य जाति को एक बनाता है।

मनुष्य के मनोभावों को वैज्ञानिक रीति से जानने का केवल एक मात्र उपाय यह है कि उसे भेद प्रदर्शक मनोविज्ञान द्वारा जानें। यह एक बड़ा लम्बा और थका देने वाला रास्ता है, परन्तु सत्यता तक पहुँचा देता है।

तब क्या जैसे यह सब संसार पदार्थ मय है वैसेही कोई बड़ी आत्मा इस संसार भर में व्याप्त है? क्या वह ऐसी आत्मा है जिसके विषय में एक बड़े जर्मन लेखक ने कहा है कि "वह पत्थर में निद्रा-

फरडीनेंड और इज़्ज़ाविला के शस्त्रों ने स्पेन की मुसल्मानी राज्य को पराजित भी न कर पाया था कि ईसाई पोपों ने उन सम्मतियों को विनष्ट करने के उपाय किये, जो उनके विश्वास से यूरोपस्थ ईसाई मत की जड़ें काट रहीं थीं।

पोप चौथे इनोसेंट के समय तक (सन् १२४३ ई०) विशप लोगों के न्यायालयों से प्रथक नास्तिकों को दंड देने के लिये कोई विशेष न्यायालय न था। तदनन्तर जो धर्म परीक्षक सभा स्थापित की गई वही समयानुसार एक सार्वजनिक और पोपों का न्यायालय माना गया जिसने सब प्राचीन स्थानिक न्यायालयों को उठा दिया। इस लिये विशप लोग अपने अधिकारों को बाधक समझ कर नवीन सम्प्रदाय से बड़ी घृणा करने लगे। ऐसी सभायें इटैली, स्पेन, जर्मनी और फ्रान्स के दक्षिणीय प्रान्त में स्थापित की गईं।

उस समय के राजा लोग भी, इस शक्तिवान न्यायालय को अपने राजनैतिक कार्य साधन में काम में लाने के लिये बड़े उत्सुक थे। पोप लोगों ने इस बात का बड़ा विरोध किया। वे नहीं चाहते थे कि ऐसे न्यायालयों का प्रयोग पादरियों के हाथ के अतिरिक्त अन्य लोगों के हाथों में चला जाय।

इस धर्म परीक्षक सभा की परीक्षा दक्षिणीय फ्रान्स में होही चुकी थी और वहां वह नास्तिकता को दबाने में बड़ी काम की वस्तु प्रमाणित हो चुकी थी। वह अरेगान में भी प्रचलित हो चुकी थी। अब उसे यहूदियों से वर्त्ताव करने का भी अधिकार मिल गया था।

प्राचीन समय में विसीगोथियों के राज्य काल में ये यहूदी लोग बड़ी अच्छी दशा में थे, पर उनके साथ जो रिआयतें की गई थीं उसके कारण जब विसीगोथों ने एरियन धर्म को छोड़ा और शास्त्र पंथानुगामी हुये तब उन पर अत्याचार होने लगे। उनके विरुद्ध अत्यंत अमानुषीय नियम प्रचलित किये गये। एक क़ानून बनाया गया जिसके अनुसार उन सब को गुलाम बनने को कहा गया। इस पर आश्चर्य न करना चाहिये कि जिस समय मुसल्मानी आक्रमण हुआ उस समय यहूदियों ने जितना उनसे हो सका उस आक्रमण

भोजनालय और पारा और पानी के फौवारे भी थे। नगर और देहात सब आनन्दी जीवों से भरे थे, और बीणा और मेन्डोलिन बजा कर नाचते गाते थे। अपने उत्तरीय पड़ोसियों के मद्यपी और अति भोजन युक्त नाट्य सम्बन्धी रतजगों के स्थान में मुसलमानों के भोजोत्सव मद्यभाव से विशिष्ट होते थे। मद्पान की मनाही थी। ऐंडल्यूसिया की चन्द्रछटा युक्त मनोहर रातियां मूर लोग एकान्त-स्थान में, मनोहर उद्यानों में अथवा नारंगियों के कुंजों में कल्पित कहानियों को सुनते हुये तत्व ज्ञानिक व्याख्यानों में लगे हुये बिताते थे। वे इस जीवन की निराशाओं से, ऐसा विचार कर अपने को धीरज देते थे कि यदि इस संसार में नेकी का फल नहीं मिलता तो हमें परलोक में आशायें न करना पड़ेंगी। और अपने दैनिक कठिन कार्य्यों में इस आशा से धीर युक्त रहते थे कि हम मरणोपरान्त एक ऐसा विश्राम पायेंगे जिसके अनन्तर परिश्रम करना ही नहीं पड़ता।

दशवीं शताब्दी में दूसरे 'हाकिम' नामक खलीफा ने सुन्दर ऐंडल्यूसिया को पृथ्वी पर का स्वर्ग बना दिया था। ईसाई, मुसल्मान और यहूदी बिना किसी प्रकार की रोक टोक के मिल जुल कर रहते थे। बहुत से प्रसिद्ध मनुष्यों में से जिनके नाम अब तक प्रसिद्ध हैं, 'जरबर्ट' जो कुछ कालोपरान्त पोप हो गया, वहीं रहता था। आदरणीय पीटर और बहुत से ईसाई पादरी लोग भी वहीं के थे। पीटर कहता है कि मैं ने वहां ऐसे विद्वान भी पाये जो ज्योतिष सीखने को बरतानिया देश से आये थे। वहां सब ही विद्वान पुरुषों का आदर सहित स्वागत होता था चाहे वे किसी देश से आये हों या चाहे जिस मत के अवलम्बी हों। खलीफा के महलों में पुस्तक बनाने वालों, लेखकों, जिल्दसाजों और जिल्द पर स्वर्णाक्षरों से चित्रकारी करने वालों का एक कारख़ाना ही था। उसकी ओर से एशिया और आफ्रिका के सबही बड़े बड़े नगरों में पुस्तक खरीदने वाले नियत थे। उसके पुस्तकालय में चार लाख पुस्तकें थीं जिनकी बहुत अच्छी जिल्दें बँधी थीं और वे जिल्दें स्वर्णाक्षरों से भूषित थीं।

कर दिया। कुछ लोग रूम पहुंचे और कुछ थोड़े से इंगलैंड गये। हज़ारों मनुष्य, और विशेष कर दूध पीते बच्चों की मातायें, दुधमुख बच्चे, और वृद्ध जन मार्गही में मृत्यु को प्राप्त हुये, और बहुत से प्यास के मारे मर गये।

यहूदियों के साथ ऐसा काम होने के अनन्तर मूर लोगों के साथ भी ऐसाही हुआ। सिवाइल नगर से फरवरी सन् १५०२ ई० में एक जुल्मी आज्ञापत्र जारी हुआ, जिसमें क्रस्टीलियन लोगों को यह आज्ञा दी गई थी कि वे लोग उस देश से ईश्वर के शत्रुओं को निकाल बाहर करें। और यह भी आज्ञा दी गई थी कि सब मूर जो ईसाई नहीं हैं और केस्टाइल और लियन के राज्य में रहते हैं और जो दुधमुख बच्चों की अवस्था से अधिक अवस्था के हैं उन्हें अप्रैल मास के अन्त तक यह देश छोड़ देना चाहिये, वे अपनी जायदाद बेंच सकते थे पर उसका मूल्य सोने चांदी के रूप में नहीं ले जा सकते थे। उन्हें मुसल्मानी राज्य में भी जा बसने की मनाही थी, और यह आज्ञा न मानने वाले के लिये मृत्यु दण्ड था। इस भांति इन मूर लोगों की दशा उन यहूदियों से भी अधिक बुरी थी जिनको यह आज्ञा थी कि वे जहां चाहें तहां जायें। स्पेन निवासियों की यह असहनशीलता ऐसी राक्षसी थी कि वे लोग इस बात को समर्थन करते थे कि राजा को न्याययुक्त यह अधिकार है कि वह लज्जास्पद नास्तिकता के हेतु सब मूरों के प्राण ले सकता है।

हा! यह बात उस सहनशीलता के बदले में जो मूर लोगों ने अपनी बढ़ती के समय में ईसाइयों को दिखलाई थी कैसी बड़ी कृतघ्नता है। इन दोषियों के साथ कोई वचन पूरा नहीं किया जाता था। ग्रानाडा निवासियों ने धार्मिक सौगन्द के भरोसे पर अपनी नागरिक और धार्मिक स्वतंत्रता त्याग दी थी। कार्डिनल ज़िमिनीज़ के बहकाने से यह प्रतिज्ञा तोड़ दी गई, और आठ शताब्दियों तक निवास करने के अनन्तर मुसल्मान लोग उस देश से निकाल दिये गये।

एंडल्यूसिया में तीन धर्मों के एक सामाजिक अस्तित्व से (अर्थात् ईसाई धर्म, मुसल्मानी धर्म, और मूसा धर्म) अवरोज़ के मत

की सफलता को बढ़ाने के लिये उद्योग किया। वे भी अरबों के समान पूर्व के निवासी थे, दोनों जातियां अपने को इब्राहीम की सन्तान मानतीं थीं, दोनों ईश्वर की एकता पर विश्वास रखती थीं। इसी नियम के प्रतिपादन के कारण ही उनके विरोगोथी नास्तिक उनसे घृणा करने लगे थे।

मुसलमानी राज्य काल में उनके साथ बड़ा आदरणीय बर्त्ताव किया गया। वे अपने धन और अपनी विद्या के कारण मुख्य गिने जाने लगे। उनमें से अधिकतर लोग अरस्तू के मतावलम्बी थे। उन्होंने बहुत से पाठशालाओं और विद्यालयों की नींव डाली। व्योपार में स्वार्थ लेने के कारण उन्हें संसार भर में पर्य्यटन करना पड़ा। उन्होंने विशेष कर वैद्यक विद्या सीखी। मध्य काल के समय भर में (Middle ages) यही लोग यूरोप के वैद्य और महाजन थे। सब मनुष्यों में से इन्हीं लोगों ने मनुष्य सम्बन्धी घटनाओं के प्रवाह को बड़े उच्च विचारों से देखा। विशेष विद्याओं में से यह लोग गणित विद्या और ज्योतिष विद्या में बहुत प्रवीण हो गये। उन्होंने अल्फान्सो की सारणियां बनाईं और इसप्रकार 'डीगामा' के समुद्रीय यात्रा का कारण हुये। उन्होंने सुगम साहित्य में बड़ी प्रख्याति प्राप्त की। दशवीं शताब्दी से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक यूरोप में उन्हीं का साहित्य प्रथम श्रेणी का था। वेही लोग राजाओं के दरबार में वैद्यों की भांति वा कोशाध्यक्षों की भांति सरकारी आय का प्रबंध करते हुये पाये जाते थे।

नेवर के धर्म परायण पादरियों ने सर्व साधारण लोगों में उनके विरुद्ध अविचार बुद्धि फैलादी। इन अत्याचारों से बचने के लिये उनमें से बहुतों ने ईसाई हो जाने का बहाना किया और इनमें से बहुतों ने अपने प्राचीन धर्म को फिर से ग्रहण किया। केस्टाइल के दरबार में रहने वाले धर्म दूत ने धर्मपरीक्षक सभा स्थापित होने के लिये चिल्लाहट मचाई। ग़रीब यहूदियों पर यह दोष लगाया गया कि वे पैसोवर पर ईसा की सूली का ठट्ठा उड़ाने की भांति ईसाई बालकों का बलिदान करते हैं। और धनी यहूदियों को अव-

में वह पराजित हुआ, और उसी के साथ से नास्तिक विचार भी विनष्ट हो गये।

परन्तु उत्तरीय इटेली में अवरोज का मत बहुत दिनों तक स्थायी रहा। वह वेनिस की उच्च समाजों में इतना अधिक प्रचलित था कि प्रत्येक सभ्य मनुष्य को विवश होकर उसी मत का अनुगामी होना पड़ता था। अन्तमें धर्म गुरुओं ने उसके विरुद्ध निश्चित रूप से कार्य करना आरंभ किया। सन् १५१२ में लैटिरन की सभा ने इन घृणित सिद्धान्तों की और उत्तेजकों को नास्तिक और धर्म रहित जन माने जाने का मन्तव्य प्रकाश किया। जैसा कि हम देख चुके हैं, हाल वाली वैटिका की सभा ने उनको धर्मच्युत किया था। इतना कलंक होने पर भी यह बात स्मरण रखने योग्य है कि मनुष्य जाति का बड़ा भारी भाग इन सम्मतियों को सत्य मानता है।

——:o:——

छठवां अध्याय।

इस विषय का झगड़ा कि जगत की आकृति कैसी है।

(जगत के विषय में शास्त्रोक्त सम्मति। पृथ्वी एक चौरस धरातल है। स्वर्ग और नर्क का स्थान।

वैज्ञानिक सम्मति—पृथ्वी गोल है, इसका डीलडौल निश्चित किया गया, सूर्य्य सम्प्रदाय में उसका स्थान और सम्बन्ध—तीन बड़ी समुद्र यात्राएं—अर्थात् कोलम्बस, डीगामा और मजेल्लां की— पृथ्वी के चारों ओर जहाजों का परिक्रमा—एक अंश को नाप कर पृथ्वी की गोलाई का अनुमान करना और लंगर से भी पृथ्वी की गोलाई का अनुमान करना।

कोपरनिकस की खोजें—दूरबीन का अन्वेषण गेलीलियो धर्म परीक्षक सभा के सामने लाया गया-उसका दंडित होना-धर्म गुरुओं पर विजय।

सूर्य सम्प्रदाय के विस्तार को निश्चित करने के उद्योग। शुक्र क्रान्ति द्वारा सूर्य का स्थान भेद निश्चित करना। पृथ्वी और मनुष्य की लघुता।

को प्रकाश होने का सुअवसर मिल गया। यह बात मानो उस बात का पुनर्घटन था जो रोम देश में उस समय घटित हुई थी जब सब पराजित देशों के देवता राजधानी में इकट्ठा किये गये थे और उन पर से सब का विश्वास दूर होगया था। स्वयं अवरोज पर यह दोष लगाया गया था कि वह पहिले मुसल्मान था, फिर ईसाई हुआ, तदनन्तर यहूदी हुआ, और अन्त में काफिर हो गया। ऐसा कहा जाता था कि वह एक रहस्यपूर्ण पुस्तक का कर्त्ता था जिसका नाम "डी ट्राईबस इम्पास्टोरीबस" था।

मध्य समय (Middle ages) में दो प्रख्यात नास्तिक पुस्तकें थीं। एक का नाम "दी एवरलास्टिंग गास्पेल" और दूसरी का "डी ट्राई-बस इम्पास्टोरीबस" था। दूसरी पुस्तक का कर्त्ता कोई पोप जरवर्ट को मानते थे, कोई दूसरे फ्रेडरिक को और कोई अवरोज को। डामेनीकन लोग अपनी कठोर घृणा के कारण उस समय में प्रचलित ईश्वर निन्दा के कामों का सब दोष अवरोज़ पर लगाते थे। वे लोग उस प्रख्यात और अत्याचारी देवनिन्दा के खंडन करने में कभी न थकते थे जो ईसा के मृत्यु स्मारक भोज के विषयों में की गई थी। तेरहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में माईकेल स्काट के अनुवाद द्वारा ईसाई यूरोप को पहिले पहिल उसके ग्रंथों का पता लगा था, परन्तु उसके समय से बहुत पहिले ही, पश्चिमीय देशों का साहित्य एशिया के साहित्य के समान, ऐसे विचारों से परिपूर्ण था। हम देख चुके हैं कि एरीजीना ने कैसे विस्तार से उनको प्रकाशित किया था। अरब लोगों पर भी उन विचारों का प्रभाव उस समय से पड़ता था जब से उन्होंने पहिले पहिल तत्वज्ञान का प्रचार किया था। वे विचार तीनों मुसल्मानी राज्यों के सबही विद्यालयों में प्रचलित थे। लोग ऐसा नहीं मानते थे कि वे ऐसे विचार हैं जिनका ढंगही ऐसा होता है कि वे मानसिक उन्नति की एक विशेष अवस्था में सबही मनुष्यों के हृदय में स्वयं ही उदय होते हैं, वरन् ऐसा मानते थे कि उनका उत्पादक अरस्तू है। इसी हेतु वे विचार सदैव बड़े बड़े विद्वानों के सन्निकट आदर पाते रहे। हम रावर्ट ग्रास्टीट, रोजर बेकन, और

न्दरिया के बीच में एक-अंश नापने का उद्योग किया क्योंकि 'सैनी' ठीक कर्क रेखा के नीचे माना जाता था। परन्तु दोनों स्थान एक ही याम्योत्तर रेखा में नहीं हैं, और उन स्थानों के बीच की दूरी नापी न गई थी वरन अनुमान करली गई थी। दो शताब्दी के बाद पोसीडोनियस ने सिकन्दरिया और रोड्स के बीच में नाप करने का दूसरा उद्योग किया। अगस्त नामक चमकीला सितारा रोड्स नामक स्थान से देखने से ठीक क्षितिज को छूता हुआ देख पड़ता था, और सिकन्दरिया से साढ़े सात अंश ऊंचा दिखाई पड़ता था। इस अवस्था में भी सामने समुद्र पड़ने के कारण फासिला नापा नहीं गया था वरन अनुमानही किया गया था। आखिरकार जैसा कि अभी हमने वर्णन किया है, खलीफा अलमामूं ने दो प्रकार से नाप कराई; एक लाल सगर के किनारे और दूसरी मेसोपोटेमिया में कूफा नगर के निकट। इन विविध भांति के निरीक्षणों से यह प्रतिफल हुआ कि पृथ्वी का व्यास सात और आठ हज़ार मील के बीच में निकाला गया।

पृथ्वी के डील डौल के इस अनुमानिक निश्चय ने उसको उसके उच्चस्थान से गिरा दिया और ईश्वर विद्या सम्बन्धी बड़े गम्भीर फल पैदा कर दिये। सैमास निवासी अरिस्टारकस (सिकन्दरिया का एक विद्वान जो सन ईसवी से २८० वर्ष पहिले हो गया है) के पुराने खोजों ने इस बात में बड़ी सहायता पहुँचाई। उसने जो ग्रन्थ सूर्य और चन्द्रमा के डीलडौल और दूरियों पर लिखा है उसमें वह उस चतुर, यद्यपि अपूर्ण, ढंग को वर्णन करता है जो उसने इस सिद्धान्त के साधन करने के लिये स्वीकार किया था। इस समय से बहुत पहिले फीसागोरस हिन्दुस्तान से एक विचार यूरोप में लाया था। उस विचार के अनुसार इस सम्प्रदाय का केन्द्र सूर्य्य प्रगट किया गया था। और उसके चारों ओर ग्रहगण गोल मारगों में घूमते हुये माने गये थे, और उनके स्थिति का क्रम यों था कि पहिले बुध, तदनन्तर शुक्र, तदनन्तर, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, और शनि। इनमें से प्रत्येक ग्रह सूर्य के इर्द गिर्द घूमते हुये स्वयं अपनी धुरी पर भी घूमते हुये माना गया था। सिसरो का कथन है निसटास ने यह बात सुझाई थी कि

विश्व विस्तार विषयक विचार–ग्रहों का स्थान भेद–'ब्रनो' का प्रमाणित करना कि बहुत से जगत हैं–धर्म रक्षक सभा ने उसे क़ैद किया और मरवा डाला।)



अब मुझे वे वादविवाद दिखलाना है जो तीसरे बड़े दार्शनिक सिद्धान्त (अर्थात् जगत की प्रकृति) के विषय में हुये।

प्रकृति के रूप का साधारण दर्शन हमें यह निश्चय दिलाता है कि पृथ्वी एक विस्तृत चौरस तल है जिसके ऊपर अन्तरिक्ष का गुम्बज़ ठहरा हुआ है, और यह ठोस गगन गुम्बज़ के नीचे के जलों को ऊपर के जलों से अलग करता है, और यह भी निश्चय दिलाता है कि आकाशस्थित ग्रहगण (सूर्य, चन्द्र और अन्य ग्रह) पूर्व से पश्चिम को चलते हैं, और उनके छोटे छोटे शरीर और उनका अचल पृथ्वी के चारों ओर घूमना यह प्रदर्शित करता है कि वे पृथ्वी से छोटे हैं। मनुष्य के चारों ओर जितने शरीर धारी हैं उनमें से कोई भी मनुष्य की समता नहीं कर सकता। इसलिये जान पड़ता है कि मनुष्य को यह प्रतिफल निकालने का अधिकार है कि प्रत्येक वस्तु उसी के काम के लिये बनाई गई है, अर्थात् सूर्य इस हेतु बनाया गया है कि वह मनुष्य को दिन में प्रकाश दे, और चंद्रमा और अन्य ग्रह रात में प्रकाश दें।

तारतम्यात्मक ईश्वर विद्या यह प्रगट करती है कि प्राचीन समय के बुद्धिमान लोगों ने सर्वसम्मति से प्रकृति का ऐसाही रूप मान लिया था। सभ्यता के आरम्भ में जगत के सब भागों में सब जातियों का यही विश्वास होता है। अर्थात् पृथ्वी को विश्व भर का केन्द्र मानना, और मनुष्य को पृथ्वी भर की वस्तुओं का केन्द्र मानना। जगत को साधारण दृष्टि से देखने से अकस्मात केवल यह विचार पैदा ही नहीं होता, वरन यही विचार उन भिन्न भिन्न धार्मिक श्रुतियों का दार्शनिक मूलाधार हो जाता है, जो समय समय पर कृपा करके मनुष्य को मिली हैं परन्तु ये श्रुतियां मनुष्य को बतलाती हैं कि

ये सब बातें उन सेवाओं का केवल एक अल्प भाग प्रगट करती हैं जो अरबी ज्योतिषियों ने जगत की प्रकृति के सिद्धान्त के साधन के हेतु की थीं। इसी समय में ईसाई संसार की ऐसी अज्ञान मय दशा थी, ऐसा खेद जनक अज्ञान था कि उसने इस विषय की कुछ परवाह ही न की। उस ईसाई संसार का ध्यान केवल मूर्ति पूजन और क्राइस्ट-मृत्यु-स्मरणार्थक-भोज, साधु महात्मों की योग्यता, धार्मिक चमत्कार और तीर्थस्थानों की रोगनिवारण प्रथा में ही निमग्न रहा।

यह उदासीनता पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त तक ज्यों की त्यों बनी रही। और उस समय भी कोई वैज्ञानिक उत्तेजना न थी। उत्तेजक विचार दूसरी ही भांति के थे जो व्योपारिक स्पर्धा से उत्पन्न हुये थे, और पृथ्वी के डीलडौल का प्रश्न अन्त में तीन जहाजियों अर्थात कोलम्बस, डीगामा और सर्वोपरि फरडीनेंड मजिल्लां द्वारा निपटाया गया।

पूर्वीय एशिया का व्योपार सदैव उन पश्चिमीय जातियों के लिये अनन्त धन प्राप्ति का द्वारा रहा है जो क्रमशः उसे करती रही हैं। मध्य काल में उसका केन्द्रस्थल उत्तरीय इटेली में था। वह व्यापार दो भागों से होता था, एक उत्तरीय अर्थात श्यामसागर और केस्पीयन सागर के रास्ते, और उसके आगे ऊंटों के टांड़ों द्वारा, जिसका सदर मुकाम जिनोवा था; और दूसरा दक्षिणीय अर्थात् सीरिया और मिसिर देश के पोतस्थलों और अरब सागर द्वारा जिसका सदर मुकाम वेनिस था उन व्यापारी लोगों ने जो दूसरे मार्ग से व्यापार करने में लगे थे धर्म युद्धों का सामान लाने लेजाने से भी बहुत बड़ा लाभ उठाया था।

वेनिस निवासियों ने सीरिया और मिसिर के मुसलमानी राज्यों से प्रेम नेम बनाये रखा था। उनको सिकन्दरिया और दमिश्क में अपने अपने व्यापार-दूत-कार्य्यालय रखने की आज्ञा थी और बहुत से सैनिक विप्लव होने पर भी, जो कि उन देशों में बहुत से हुये थे, उनका व्यापार अब तक भी अन्य स्थानों की अपेक्षा अच्छी दशा में चला जाता था। परन्तु उत्तरीय मार्ग अथवा जिनोवा वाला मार्ग तातारियों

यदि पृथ्वी भी अपनी धुरी पर घूमती हुई मानली जाय, तो वह कठिनता जो आकाश को बड़ी तेजी से घूमता हुआ मानने में पड़ती है न पड़ेगी।

ऐसा विश्वास करने का कारण है कि अरिस्टारकस के ग्रंथ जो सिकन्दरिया के पुस्तकालय में थे उस समय जल गये थे जब सीज़र ने आग लगाई थी। उसका केवल एक मात्र ग्रंथ जो अब तक पाया जाता है वही उपरोक्त ग्रंथ है जिसमें सूर्य और चन्द्रमा के डील डौल और दूरी का वर्णन है।

अरिस्टारकस ने फीसागोरिस की विचार शैली को सत्य घटना प्रद मान कर अंगीकार कर लिया था। यह बात सूर्य की बहुत अधिक दूरी और उसके बहुत बड़े डील डौल वाला मान लेने का फल था। सूर्य को सम्प्रदाय का केन्द्र माननेवाली इस शैली ने पृथ्वी को बहुत नीचे स्थान तक उतार दिया, अर्थात् छः इर्द गिर्द घूमने वाले ग्रहों में से एक मानी गई।

परन्तु अरिस्टारकस ने ज्योतिष विद्या पर केवल यही एक ग्रंथ नहीं लिखा, क्योंकि यह विचार कर कि पृथ्वी की चाल से अन्य ग्रहों की स्थिति में प्रत्यक्ष कोई प्रभाव नहीं पड़ता उसने यह अनुमान निकाला था कि वे ग्रह सूर्य से जितनी दूरी पर हैं उससे अधिक दूरी पर हम से हैं। इसलिये "लैपलेस" के कथनानुसार, सब प्राचीन विद्वानों में से संसार की बड़ाई के विषय में इस के विचार सब से अधिक शुद्ध थे। उसने जान लिया था कि पृथ्वी नक्षत्रान्तरों के मिलान के विचार से बहुत ही छोटी है। उसने यह भी जान लिया था कि ऊपर की ओर सिवाय अन्तरिक्ष और सितारों के और कुछ भी नहीं है।

परन्तु अरिस्टारकस के विचार जो ग्रहों के स्थानों के विषय में थे वे प्राचीन समय के लोगों ने स्वीकार न किये थे। टालेमी की सुझाई हुई शैली को जिसका वर्णन उसके सिंटैक्सिस नामक ग्रंथ में है सर्वजन अधिक पसंद करते थे। उस समय का पदार्थिक विज्ञान बहुत ही अपूर्ण था। फीसागोरिस की विचार शैली के विषय में टालेमी

पोप के आज्ञा पत्र के अनुसार इस पूर्वीय समुद्र यात्रा ने पुर्तगाल वालों को हिन्दुस्तान के साथ व्योपार करने का अधिकार प्रदान किया।

जब तक अन्तरीप नहीं लांघी गई थी तब तक डीगामा के जहाज़ो की चाल साधारणतः दक्षिण ओर को थी। तदनन्तर बहुत शीघ्र ही यह बात देखी गई कि क्षितिज के ऊपर ध्रुवीय किनारे की उँचाई कम होती जाती है और भूमध्य रेखा पार करने के बाद शीघ्रही वह सितारा न देख पड़ने लगा। इसी बीच में अन्य सितारे जिन में से कई एक बड़े बड़े नक्षत्र समूह थे, देख पड़ने लगे थे अर्थात वे दक्षिणीय गोलार्द्ध के सितारे थे। यह सब बातें उन सिद्धान्तक विचारों से मिलती थीं जिनके अनुसार यह बात मानी गई थी कि पृथ्वी का आकार गोल है।

इसके अनन्तर तुरन्तही जो राजनैतिक प्रतिफल हुये उन्होंने पोप के शासन को बड़ी हैरानी में डाल दिया। पोप शासन की मौखिक कथायें और नीति इस बात को मना करती थी कि पृथ्वी का आकार सिवाय एक चौरस आकार के जैसा कि धर्म ग्रन्थों में लिखा हुआ है अन्य प्रकार का न माना जाय। परन्तु सच्ची घटनाओं का छिपाना असम्भव था और वाक्य छल व्यर्थ था। व्योपारिक सुदशा ने इस समय वेनिस और जिनेवा को छोड़ दिया था। यूरोप का रुख बदल गया था। भूमध्य सागर के तटस्थ देशों से समुद्रीय शक्ति विदा हो गई थी और अटलांटिक सागर के तटस्थ देशों में चली गई थी।

परन्तु स्पेन राज्य अपने प्रतिद्वन्दी को इस भांति व्योपारिक लाभ होते देख बिना उद्योग किये न रह सका। उसने फरडीनेंड मजिल्लां की उन बातों को ध्यान से सुना कि यदि केवल कोई जल-डमरू-मध्य वा मार्ग उस भूखण्ड के बीच में हो कर निकल आवे जिसको इस समय अमेरिकन महाद्वीप मान लिया गया है, तो हिन्दुस्तान और स्पाइस द्वीपों तक पश्चिम की ओर जहाज लेजाकर पहुँच सकते हैं। और यदि ऐसा हो जाय तो पोप के आज्ञापत्र के अनुसार स्पेन को भी हिन्दुस्तान के साथ व्योपार करने का वैसाही

और तुरकों के आक्रमणों के कारण और उन सैनिक और राज्य नैतिक गड़बड़ियों के कारण जो उस देश में हुई थीं बिलकुल टूट गया था। जिनोवा का पूर्वीय व्यापार केवल सन्दिग्ध दशा ही में न था, वरन् वह विनाश के तट तक पहुँच गया था।

दृष्टिगत क्षितिज का गोला होना और उसका समुद्र में निमग्न होना और जहाजों का दूरवर्ती समुद्रस्थान पर क्रमशः दिखाई देना और क्रमशः छिप जाना ये सब बातें ऐसी न थीं कि समझदार जहाजियों को पृथ्वी के गोल आकार के विश्वास की ओर न झुका देतीं। मुसल्मान ज्योतिषियों और तत्व ज्ञानियों के ग्रन्थों ने पृथ्वी के गोलाकार सिद्धान्त को पश्चिमीय यूरोप भर में प्रचारित कर दिया था, परन्तु आशानुसार परमार्थवादियों ने उसे नहीं माना था। जब इस भांति जिनोवा विनाश का तटवर्ती हो रहा था, उसके कतिपय जहाजियों को यह सूझी कि यदि यह विचार सत्य निकले तो उस देशकी दशा फिर सुधर सकती है। क्योंकि एक जहाज़ जिबराल्टर की जलडमरूमध्य से पश्चिम की ओर चलता हुआ अटलांटिक समुद्र को पार करके ईस्ट इंडीज़ तक पहुँचने में विफल मनोरथ नहीं हो सकता। और इसके अतिरिक्त और भी बहुत से प्रगट लाभ हैं। जहाज़ों में लदा हुआ बहुत सा सामान बिना परिश्रम और अधिक खर्च के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है और बार बार उतारने लादने का काम भी बच सकता है।

जिनोवा निवासी उन जहाजियों में से जो ऐसे विचार रखते थे क्रिस्टोफर कोलम्बस भी एक था। वह कहता है कि अबरोज़ के ग्रंथ पढ़कर उसका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ था, परन्तु उसके मित्रों में फ्लारेंस निवासी टास्कनली एक मित्र था, जिसने अपना ध्यान ज्योतिष विद्या में लगाया था और इस बात को दृढ़ता से मानता था कि पृथ्वी का आकार गोल है। परन्तु स्वयं जिनोवा में कोलम्बस को कुछ उत्साह न मिला। तदनन्तर उसने कई साल इस उद्योग में खो दिये कि भिन्न भिन्न राजाओं को निज कथित उद्योग की ओर ध्यान दिलावे। परन्तु कोलम्बस के उद्योग की विधर्मी

पेरूदेश देको गया और दूसरा समूह स्वीडन देश अधीनस्थ लैपलैंड को गया। इन दोनों समूहों को भारी भारी कठिनाइयां झेलना पड़ी। परन्तु लैपलैंड वाले कार्य्यकारी समूह ने अपने निरीक्षण पेरू वालों से बहुत पहिले पूरे कर लिये, और पेरू वालों ने नौ वर्ष का समय बिता दिया। इस प्रकार हस्तगत नापों के प्रतिफलों ने पृथ्वी के प्रथमाण्ड गोलाकार होने की सिद्धान्तिक आशा को प्रमाणित कर दिया। उस समय से बहुत से विस्तृत और ठीक पुनर्निरीक्षण किये गये हैं जिनमें से इंगलैण्ड और हिन्दुस्तान में अंग्रेजों के किये हुए निरीक्षणों का भी उल्लेख किया जा सकता है, जो उस समय किया गया जब नाप और तौल की मात्रिक प्रथा का प्रचार किया गया। इस नाप को डिलम्ब्रे और मिकैन ने डंकर्क और बारसिलोना से आरम्भ किया था और बायट और इरैगो ने उसे बढ़ा कर माईनारका के निकटस्थ फारमेन्टिरा नामक द्वीप तक ले गये। इसकी लम्बाई लगभग साढ़े बारह अंशों की थी।

इस प्रत्यक्ष नाप लेने के ढंग के अलावा पृथ्वी के आकार का निश्चय भिन्न भिन्न अक्षांशों में एकही लम्बान के लंगर के संचालनों की गणना देख करभी हो सकता है। ये संचालन, यद्यपि वे उपरोक्त प्रतिफलों को प्रमाणित करते हैं, पृथ्वी को अंशों की नाप से परिज्ञात अंडाकृति होने की अपेक्षा कुछ अधिक अंडाकृति प्रगट करते हैं। ये लंगर भूमध्य रेखा के जितनेही निकट होते हैं उतनेही अधिक मंदगामी होते हैं। इस लिये यह फल निकलता है कि भूमध्य रेखा पर वे अन्य स्थानों की अपेक्षा पृथ्वी के केन्द्र से अधिक दूरी पर हैं।

अत्यन्त विश्वासनीय नापों से पृथ्वी का विस्तार इस भांति वर्णित है।

बड़ा वा भूमध्य-रेखा-गत व्यास .... ७९२५ मील।
छोटा वा ध्रुवगत व्यास .... ७८९९ मील।
इन दोनों का अन्तर वा ध्रुवीय संकोचन............. २६ मील।

पृथ्वी के डील डौल के विषय में जो जांच परताल हुई उसका यही फल है। यह बात अभी निश्चित न होने पाई थी कि एक और

अधिकार मिल जाय जैसा कि पुर्तगाल वालों को मिला है। मजिल्लां के अधिकार में पांच जहाजों का एक बेड़ा जिसमें २७५ मनुष्य थे १० अगस्त सन १५१९ ई० को सिवाइल नगर से रवाना हुआ।

मजिल्लां, इस आशा से कि कोई न कोई रास्ता महाद्वीप के बीच होकर जाने का मिलही जायगा जिसमें होकर बड़े दक्षिणीय सागर तक पहुँच सकूंगा, तुरन्त बड़े उत्साह के साथ दक्षिणीय अमेरिका के समुद्र तट की ओर चल पड़ा। ७० दिनों तक वह भूमध्य रेखा पर निश्चल रहा। उसके मल्लाह भय भीत हो गये कि शायद वे ऐसे स्थान में आगये हैं जहां हवा कभी चलती ही न थी, और शायद अब वहां से उनका निकलना असम्भव हो। परन्तु यह निश्चलता, तूफान, जिहाजियों का विद्रोह और परित्याग मजिल्लां को अपने निश्चित विचार से न फेर सके। एक वर्ष से अधिक दिनों के बाद उसने वह जल-डमरू-मध्य खोज निकाली, जो अब तक उसके नाम से प्रख्यात है, और जैसा कि पिगेफिटी नामक एक इटेली निवासी ने जो उसके साथही था, बयान किया है, उसने स उसमय आनन्दाश्रु बरसाये थे जब उसने जान उलया था उक ईश्वर ने कृपा करके उसको उस स्थान तक पहुँचा दिया है जहां उसे दक्षिणीय समुद्र अर्थात बड़े और प्रशान्त सागर में अज्ञात विपत्तियों के साथ हाथापाई करना पड़ेगी।

भूख के मारे लोग चमड़े के उन तस्मों को खाने लगे जो जहाज की रस्सियों में जहां तहां बंधे थे, और प्यास के मारे सड़ा पानी पीने लगे। इस भांति भूख और खाज से उसके जहाजी मरने लगे परन्तु मजिल्लां पृथ्वी के गोलाकार होने पर पूर्ण विश्वास किये हुये धीर्य के साथ उत्तर पश्चिम के कोन को जहाज खेता ही गया, और लगभग चार महीने तक उसने मनुष्यों से बसा हुआ कोई देश नहीं देखा। उसने अनुमान किया था कि उसने प्रशान्त महासागर पर १२००० मील से कम का सफर नहीं किया। वह भूमध्य रेखा को पार कर गया और एक बार फिर ध्रुवीय सितारा देखा और अंत में लेड्रोन्स नामक देश में जा पहुँचा। इस देश में वह सुमात्रा के साहसी

इन आश्चर्य्यों की विज्ञप्ति ने तुरन्त ही सर्व साधारण का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। अध्यात्मविद्या विशारद धर्म गुरुओं ने भी तुरन्त ही देख लिया कि इन आश्चर्य्यों से अवश्य उस सिद्धान्त को धक्का पहुंचेगा जिसका तात्पर्य्य यह है कि सर्व विश्व मनुष्य के लिये बनाया गया है। इन अगणित सितारों के बनाने में जो अब तक अदृष्ट थे अवश्य ही कुछ और तात्पर्य्य है न कि केवल इतना ही कि वे मनुष्य को रात्रि में प्रकाश देवें।

कोपरनिकास के सिद्धान्त के विरुद्ध यह तर्क की जाती थी, कि यदि बुद्ध और शुक्र ग्रह पृथ्वी की कक्षा के भीतर होकर अपनी अपनी कक्षाओं में सूर्य के गिर्द घूमते होते, तो चन्द्रमा के समान उन्हें भी अपनी अपनी कलायें प्रगट करना चाहिए था। और यह भी तर्क थी कि शुक्र की दशा में, जो इतना प्रगट और प्रकाशमान है, ये कलायें बहुत प्रत्यक्ष होना चाहिये। कोपरनिकस ने स्वयं इस तर्क की शक्ति को मान लिया था और इसकी व्याख्या करने का व्यर्थ परिश्रम भी किया था। गेलीलियो ने इस ग्रह की ओर अपनी दूरबीन लगाकर खोज लिया कि वे अभिलषित कलायें वास्तव में थीं। कभी तो वह ग्रह द्वितिया के चन्द्रमा के समान होता है, कभी अर्द्ध चन्द्र समान, कभी अर्द्धाधिक, और तदनन्तर पूर्ण होता है। कोपरनिकस से पहिले ऐसा माना जाता था कि ग्रहगण स्वयं अपने प्रकाशसे प्रकाशित होते हैं, परन्तु शुक्र और मंगल की कलाओं ने प्रमाणित कर दिया कि उनका प्रकाश छाया भासि है। अरस्तू का यह विचार था कि आकाशस्थित ग्रहगण पृथ्वी स्थित वस्तुओं से भिन्न प्रकार के हैं। वे कभी क्षय नहीं होते। गेलीलियो के इन खोजों से कि पृथ्वी के से पहाड़ और घाटियां चन्द्रमा में भी हैं, सूर्य पूर्ण नहीं है, वरन् उसके चिहरे पर धब्बे हैं, और वह प्रभावशाली स्थिर दशा में न रह कर अपनी धुरी पर घूमता है अरस्तू के उस विचार को बड़ा धक्का लगा। नवीन सितारों के छायाभास ने इस अक्षयता के सिद्धान्त पर बड़े गम्भीर संदेह डाल दिये थे।

वादविवाद खड़ा हो गया जो इससे भी अधिक गम्भीर फलों से भरा हुआ था। यह इस विषय का झगड़ा था कि सूर्य तथा अन्य ग्रहों के सम्बन्ध से पृथ्वी की स्थिति क्या है।

जर्मनी निवासी कोपरनिकस ने सन् १५०७ ई० के लगभग एक ग्रन्थ लिखकर पूर्ण किया जिसका नाम "आन दी रैवोल्यूशंस आफ दी हेविनली वाडीज़" (on the revolutions of the heavenly bodies) था। वह अपनी युवा अवस्था में इटली देश को गया था, ज्योतिष विद्या पर अपना ध्यान लगाया था, और रोम नगर में गणित विद्या सिखलाता रहा था। टालेमी और फीसागोरस की विचार शैलियों को गम्भीरता समेत मनन कर के उसने द्वितीय शैली को मानने का प्रतिफल निकाला था; और उसकी पुस्तक का तात्पर्य उसी शैली को समर्थन करने का था। इस बात को जान कर भी कि उसके सिद्धान्त शास्त्रोक्त सत्यता के बिलकुल बिरुद्ध हैं, और यह देख कर भी कि वे सिद्धान्त धर्म गुरुओं की ओर से उसे दंडित करायेंगे, उसने सुरक्षित और विनीत भाव से अपने विचार प्रगट किये थे। वह कहता है कि मैंने यह धृष्टता केवल इस हेतु की है कि मैं जांच करूं कि पृथ्वी को चलता हुआ अनुभाव करके आकाशस्थित ग्रहों के घूमने के विषय में प्राचीन व्याख्याओं की अपेक्षा कुछ अधिक अच्छी व्याख्यायें मिलना सम्भव है कि नहीं। वह यह भी कहता है कि इस काम के करने में मैंने केवल वही अधिकार ग्रहण किया है जो दूसरों को मनमाने सिद्धान्त ग्रहण करने के हेतु दिया गया था। उस ग्रंथ की भूमिका पोप तृतीय पाल के नाम लिखी गई है।

इस सन्देह में पड़कर कि न जाने क्या फल हो, उसने ३६ वर्ष तक अपनी किताब नहीं प्रकाशित कराई। वह ख्याल करता था कि "कदाचित फीसागोरिस और अन्य विद्वानों के उदाहरणों ही पर चलना अधिक अच्छा होगा जो अपना सिद्धान्त केवल मौखिक प्रकाश करते थे और वह भी केवल अपने मित्रों में"। कार्डिनल स्कौम्बर्ग के सविनय आग्रह पर उसने आखिरकार उस पुस्तक को १५४३ ई० में प्रकाशित कराया। उस पुस्तक की एक प्रति उसके पास

तक कि यूरोप में पचास स्थानों में निरीक्षण हुआ; एशिया में छः स्थानों में और अमेरिका में सत्रह स्थानों में। इसी तात्पर्य से अंग्रेज़ी राज्य ने कप्तान कुक को उसकी पहली प्रसिद्ध समुद्र यात्रा पर भेजा था। वह ओटाहीट नामक स्थान को गया। उसकी समुद्र यात्रा पूर्ण रीति से सफल हुई। मेघ रहित सूर्य उदय हुआ और दिन भर आकाश स्वच्छ रहा। कुक के स्थान पर यह रविमण्डलोपर शुक्रगमन सबेरे के साढ़े नो बजे के लगभग से लेकर संध्या के साढ़े तीन बजे के लगभग तक रहा और सब प्रकार के निरीक्षण भली भांति किये गये।

परन्तु भिन्न भिन्न स्थानों में इन निरीक्षणों पर वादविवाद होने पर यह ज्ञात हुआ कि वे उन निरीक्षणों के फल जैसे मिलना चाहिये नहीं मिलते, वरन् आठ करोड़ अस्सी लाख से लगा कर दस करोड़ नव्वे लाख मील तक निकलते हैं। इस लिये सन् १८२२–२४ में 'एनके' नामक प्रसिद्ध गणित विद्या विशारद ने उनकी फिर से जांच की और यह फल निकाला कि सूर्य का परमदृग्लम्बन (अर्थात् वह कोण जो सूर्य से निकलती हुई रेखा पृथ्वी के अर्द्ध व्यास के साथ बनाती है) ८$\frac{५७६}{१०००}$ बिकला का है। इस से सूर्य की दूरी ९५२७४००० मील निकली। तदनन्तर उन निरीक्षणों पर हान्सेन् ने फिर विचार किया और उनका फल ९१६५९००० मील बतलाया। उसके और अनन्तर लिवरियर ने उसे ९१७५९००० मील किया। एयरी और स्टोन ने एक दूसरी भांति से उसे ९१४००००० मील निश्चित किया। और केवल स्टोन ने प्राचीन निरीक्षणों को फिर से जांच कर ९१७३०००० मील बतलाया। और अन्त में फोकाल्ट और फीज़ो ने पदार्थ विद्या सम्बन्धी अनुभवों से प्रकाश की गति की शीघ्रता निश्चय करके, (यह ढंग उपरोक्त कारण से शुक्रीयगति निरीक्षणों से बहुतही भिन्न प्रकार का था) ९१४००००० मील ठहराया। जब तक १८७४ ई० वाले रविमण्डलोपर शुक्रगति के फल निश्चित न हो गये, तब तक यही माना जाता रहा कि सूर्य से पृथ्वी की दूरी ९२०००००० मील से कुछ कम है।

यह दूरी एक बार निश्चित होजाने पर सूर्य सम्प्रदाय का

इन उपरोक्त और अन्य बहुत सी अच्छी अच्छी दूरबीन सम्बन्धी खोजों ने कोपरनिकस के सिद्धान्त की सचाई के स्थापित करने में सहायता की, और धर्मगुरुओं को बहुत मौका दिया। नीचे दरजे के और अज्ञान पादरियों ने उन खोजों को धोखा वा छल कह कर निन्दा की। कुछ लोग यह कहते थे कि भूमि सम्बन्धी वस्तुओं के लिये दूरबीन पर भली भांति विश्वास किया जा सकता है, परन्तु आकाश-स्थित ग्रहों की दूसरी बात है। दूसरे यह कहते थे कि दूरबीन का अन्वेषण केवल, अरस्तू के उस कथन का उपयोग मात्र है कि "गहरे कुएं की तली से दिनमें भी सितारे देखे जा सकते हैं" गेलीलियो पर धूर्तता, पाखंड, ईश्वर निन्दा और नास्तिकता का दोष लगाया गया। अपने बचाव के लिये उसने ऐबीकैक् टिली के नाम एक पत्र लिखा जिसमें यह बात दर्शाई कि धार्मिक ग्रंथ वैज्ञानिक प्रमाणों के लिये नही हैं, वरन् केवल सदाचार पथ दर्शक हैं। इससे बात और भी बिगड़ गई। वह पवित्र धर्मपरीक्षक सभा के संमुख बुलाया गया कि तुमने लोगों को यह सिखलाया है कि पृथ्वी सूर्य के चारो ओर घूमती है, जो एक ऐसा सिद्धांत है जो धर्म पुस्तकों के बिलकुल विरुद्ध है। उसे आज्ञा दी गई कि तुम इस पाखंड को छोड़ दो नहीं तो तुम कैद किये जाओगे। उस से यह भी कहा गया कि तुम कोपरनिकस का सिद्धान्त सिखलाना और समर्थन करना छोड़ दो, और प्रतिज्ञा करो कि तुम भविष्य में उस सिद्धान्त का न तो विस्तार करोगे न समर्थन करोगे। भली भांति जान कर कि सत्य को बलिदान की आवश्यकता नहीं है उसने इस इच्छित प्रत्यादेश को मान लिया और इच्छित प्रतिज्ञा करदी।

सोलह वर्ष तक धर्मगुरु लोग निश्चिन्त रहे। परन्तु सन् १६३२ ई० में गेलीलियो ने अपना "दी सिस्टम आफ दी वर्ल्ड" नामक ग्रंथ प्रकाशित कराने का साहस किया, जिसका तात्पर्य्य कोपरनिकस के सिद्धान्त का प्रतिपादन ही था। वह फिर रोम में धर्मपरीक्षक सभा के सामने बुलाया गया और दोष लगाया गया कि तुमने प्रतिपादन किया है कि पृथ्वी सूर्य के इर्द गिर्द घूमती है। उससे कहा गया

अभी ये घटनाएं बहुत ही अपूर्ण रीति से जानी गई थीं (अथवा वास्तव में घटनाओं की अपेक्षा केवल काल्पनिक विचारों ही के रूप में थीं) कि एक इटली निवासी गोरडेनो ब्रनो नामक विद्वान ने, जो कोपरनिकस की मृत्यु के सात वर्ष के बाद पैदा हुआ था, "जगत मय विश्वकी असीतमा" विषय पर एक ग्रन्थ प्रकाशित किया। वह "ईवनिंग कनवरसेशन्स आन ऐश वेंज़डे" जो कि कोपरनिकस की विचार शैली को प्रतिपादन करता था, और "दी वन सोल काज़ आफ थिंग्ज़" नामक ग्रंथों का भी कर्त्ता था। इन ग्रन्थों में एक रूपक का नाम और बढ़ाया जा सकता है जो १५८४ ई० में प्रकाशित हुआ और जिसका नाम "दी एकसपलशन आफ दी ट्रायमफेन्ट वीस्ट" है उसने भविष्य ज्योतिषियों के काम के लिये वे सब निरीक्षण भी इकट्ठे किये थे जो उसे उस नवीन सितारे के विषय में मिल सके थे जो अकस्मात काशोपी नक्षत्र समूह में सन् १५७२ ई० में दिखाई पड़ा था और जिसका प्रकाश बढ़ता ही जाता था यहां तक कि वह प्रकाश में अन्य सब सितारों से बढ़ गया था। वह दिन में साफ २ दिखाई देता था। अकस्मात् ११ नवम्बर को वह इतना प्रकाशित हो उठा जितना कि शुक्र अपनी उच्चस्थित में होता है। तदनन्तर मार्च मास में वह उस नक्षत्र समूह में प्रथम गणना का सितारा हो गया। कुछ ही मासों में उसने भिन्न२ रंग दिखाये और मार्च सन १५७४ ई० में गायब हो गया।

वह सितारा जो केपलर के समय सन् १६०४ ई० में, सरपेंटेरियस नामक नक्षत्र समूह में अकस्मात दिखाई पड़ाथा पहले पहल शुक्र से भी अधिक प्रकाशवान था वह एक साल से अधिक दिन तक रहा और विविध प्रकार के धुमले पीले और लाल रंगों में हो कर अन्तरधान हो गया।

सर्व प्रथम ब्रनो धर्माचार्य्य होने के हेतु तय्यार हो रहा था। वह डामीनीकन हो गया था परन्तु 'ट्रैंनसब्सटैंनशीएशन' और निष्कलंक गर्भ के विषयों पर विचार करने से वस सन्देह में पड़ गया। अपनी सम्मतियों के छिपाने की परवाह न करके वह शीघ्र ही धर्मा-

विस्तार ठीक ठीक और बहुत आसानी से निश्चित किया जा सकता है। इतना कह देना अलम् है कि सूर्य से निप्चून नामक ग्रह की दूरी (जो वर्तमान समय में सब ग्रहों से अधिक दूर जाना गया है) सूर्य से पृथ्वी की दूरी की अपेक्षा लगभग तीस गुना है।

इन गणनाओं की सहायता से हम विश्व पर मानव जाति के अधिकार वाले सिद्धान्त का ठीक मूल्य जान सकते हैं; अर्थात इस सिद्धान्त का मूल्य कि विश्व की सब ही वस्तुएं मनुष्य के लिये बनाई गई हैं। यदि पृथ्वी को सूर्य्य मंडल से देखें तो वह केवल एक बिन्दु मात्र है।

तब ऐसा अदर्शनीय कणिका किस काम का हो सकता है? कोई मनुष्य यह विचार सकता है कि यह तुच्छ कणिका संसार से हटा दिया जा सकता है वा मिटा दिया जा सकता है और तब भी बिना उसके कोई हानि न होगी। और वे मानवी कणिका (जो ऐसे अदर्शनीय कणिका के एक स्थान पर लाखों रहते हैं और उन लाखों में से कोई एक भी कठिनता से इस बात का चिन्ह छोड़ जायगा कि वह कभी जीवित था) किस काम के हो सकते हैं, अतएव मनुष्य, उसके विषयानन्द और उसके दुःख किस काम के हैं? अर्थात तुच्छ हैं।

कोपरनिस की विचार शैली के विरुद्ध, उसके समय जो तर्कें की गई थीं उनमें से एक तर्क टाईको ब्रेही नामक एक डेनमार्क निवासी बड़े ज्योतिषी की तर्क थी। वह मूल में वही तर्क थी जो फीसागोरस की विचार शैली के विरुद्ध एरिस्टारकस ने की थी, जिसका तात्पर्य्य यह था कि यदि उसके कथनानुसार पृथ्वी सूर्य के इर्द गिर्द घूमती है तो स्थिर सितारों की दिशा में परिवर्तन होना चाहिये। किसी एक समय में हम अन्तरिक्ष के किसी विशेष प्रदेश के इतने निकट तर होते हैं जितना कि भूकक्षा का व्यास होता है और उस समय से छः महीने पहले हम उतना निकट न थे, इस हेतु नक्षत्रों के भेदप्रदर्शक स्थान में भी परिवर्तन होना चाहिये। अर्थात ज्यों ज्यों हम उनके निकट पहुँचते हैं त्यों त्यों उन्हें अधिक अधिक अलग होते हुये दिखाई पड़ना चाहिये, और ज्यों ज्यों हम उनसे दूर जाते हैं त्यों त्यों उन्हें

था। केवल वेही पवित्र कार्य्यालय के परिचित लोग काले वस्त्र पहिने चुपके चुपके इधर उधर टहलते थे। बधिक और शिकंज़ा नीचे अंधेरी कोठरी में उपस्थित थे। उससे केवल यह कहा गया था कि जब से तुमने यह कहा है कि इस लोक के सिवाय और भी बहुत से लोक हैं, तब से तुमने स्वयं नास्तिकता का भारी सन्देह अपने शिर पर लिया है। उससे अपने भ्रम का खंडन करने और उसे शपथ खाकर छोड़ देने के लिये कहा गया, परन्तु उसने कहा कि जिस बात को मैं सत्य जानता हूं उससे मैं इन्कार कर नहीं सकता और न करूंगा, और कदाचित उसने अपने न्यायकारियों से यह भी कहा, (जैसा कि वह पहिले भी बहुधा कह चुका था) कि तुम भी तो अपने अपने हृदयों में यही विश्वास रखते हो। इस मानवी गौरव, अटल धैर्य, और अचल सत्य निष्ठा के दृश्य और उस दूसरे दृश्य के बीच में कितना भारी अन्तर है, जो आज से पन्द्रह शताब्दियों से भी अधिक पहिले मुख्य पादरी क्याफास के दालान के अलाव के पास, बड़े सबेरे और उस समय हुआ था जब "ईश्वर ने मुँह फेर कर पीटर की ओर देखा था"। (ल्यूका कृत इनजील, अध्याय २२, श्लोक ६१)! और तब भी जैसा व्यवहार ब्रनो के साथ किया गया, उसके करने का अधिकार पाने के विषय में धर्मगुरुओं ने पीटर ही को मूलाधार ठहराया है।

परन्तु कदाचित अब वह समय आ रहा है जब अगली पीढ़ी इस बड़े भारी धार्मिक दोष का प्रायश्चित्त करेंगी, और रोम नगरमें संटपीटर के मंदिर में ब्रनो की एक मूर्ति स्थापित की जायगी।



सातवां अध्याय।

पृथ्वी की आयु के विषय का वादविवाद।

(शास्त्रिक सम्मति, कि पृथ्वी केवल छः हज़ार वर्ष की पुरानी है और वह एक सप्ताह में बनाई गई थी–प्राचीन काल निरूपक विद्या

चार्यों का कोप भाजन बन गया, और आवश्यकता वश क्रमशः स्वीटज़र लैंड, फ्रांस, इगलैंड, और जर्मनी देशों में आश्रय ढूंढता फिरा। धर्मपरीक्षक सभा के सूंघ कर खोज चलाने वाले कुत्तों ने बड़ी निर्दयता से उसका पीछा किया और अन्त में उसे इटली तक घेर लाया। वह वेनिस में पकड़ा गया और पियाम्बी में छः वर्ष के लिये कैद कर दिया गया जहां न उसे किताबें मिलती थीं न समाचार पत्र और न वह किसी मित्र से मिल सकता था।

इंगलैंड में उसने जगतों की बहुतायत पर व्याख्यान दिये थे और उसी देशमें उसने इटैलियन भाषा में अपने सर्वोत्तम ग्रन्थ लिखे थे। वह सदैव अपने कष्टदाता पादरियों की असत्यता और छलों की निन्दा किया करता था और जहां कहीं जाता था वहीं नास्तिकता को ऊपर से चिकनी चुपड़ी और पाखण्ड से छिपी हुई पाता था और उसकी निन्दा करता था। इससे धर्म्माचार्य्यगण उससे बहुत अप्रसन्न रहा करते थे। वह मनुष्यों के विश्वास के विरुद्ध नहीं लड़ता था किन्तु बनावटी विश्वास के विरुद्ध लड़ता था। वह एक ऐसे शास्त्रोक्त मत से झगड़ा करता था जिसमें न सदाचार था न विश्वास।

अपने "ईवनिंग कनवरसेशन्स" नामक ग्रन्थ में उसने बड़े आदर के साथ कहा है कि धर्म ग्रन्थों का तात्पर्य्य विज्ञान सिखाना नहीं है, वरन केवल सदाचार सिखाना है। और वे ग्रन्थ ज्योतिष विद्या और पदार्थ विद्या के प्रमाणित ग्रंथ नहीं माने जा सकते। और विशेष कर हमें उनका वह विचार नहीं मानना चाहिये जो वे दुनिया की बनावट के विषय में प्रगट करते हैं, पृथ्वी को चौरस धरातल मानते हैं, और आकाश को खम्भों पर स्थित बैकुण्ठ का फर्श मानते हैं। इसके विरुद्ध हमें यह विश्वास करना चाहिये कि यह विश्व अनन्त है, और स्वयं-प्रकाश और अपारदर्शी जगतों से भरा हुआ है। उनमें से बहुतों में जीव बसते हैं, और हमारे ऊपर और चारों ओर सिवाय अन्तरिक्ष और सितारों के और कुछ नहीं है। इन विषयों पर विचार करके वह इस सिद्धान्त तक पहुंचा था कि अवरोज़ के विचार असत्य न थे, अर्थात् एक ऐसी "बुद्धि" है जो विश्व भर को जीवित किये

यूनानी अनुवादक लोग मैथूसीला को जल प्रलय के बाद तक जीता बतलाते हैं।

ऐसा माना जाता था कि जल प्रलय से पहिले वाले जगत में ३६० दिन का वर्ष होता था। कतिपय मनुष्यों ने तो यहां तक कहा है कि यही मूल कारण है जिस से पृथ्वी का वृत्त ३६० अंशों में विभाजित किया गया है। बहुत से धर्म-विद्या-विशारद लोग कहते थे कि जल प्रलय के समय सूर्य की गति में परिवर्तन होगया और वर्ष में पांच दिन छः घंटे की बढ़ी हो गई। एक यह सम्मति प्रचलित थी कि वह बड़ी जल-प्रलय जगत के १६५६ वें वर्ष के नवम्बर मास की दूसरी तारीख को हुई थी। परन्तु डाक्टर ह्निस्टन जो अधिक शुद्धता चाहता था उस प्रलय का होना २८ नवम्बर को मानता था। कतिपय लोग अनुमान करते थे कि उस जल प्रलय के पहिले इन्द्र धनुष नहीं दिखाई पड़ता था, और अन्य कुछ अधिक समझदार लोगों ने यह अनुमान किथा था कि इन्द्र धनुष का निकलना चिन्ह की भांति पहले पहल उसी समय से प्रचलित हुआ। नूह की नौका से निकलने के अनन्तर मनुष्यों को मांस भोजन की आज्ञा दी गई। उस जल प्रलय के पहले वाले लोग बनस्पति खाते थे। यह बात अनुमानित हो सकती है कि उस जल प्रलय ने पृथ्वी के आकार में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं किया, क्योंकि नूह ने प्रलय से पहले वाली अपनी जानकारी पर भरोसा करके पृथ्वी को अपने तीन लड़कों में बांट दिया था, अथात् 'जेफेट' को यूरोप दिया, 'शेम' को एशिया और 'हेम' को आफ्रिका। अमेरिका के लिये कुछ प्रबंध न किया गया, क्योंकि अमेरिका का होना नूह को ज्ञात न था। ये मूल पुरुष भयंकर निर्जनता और दलदलों और पथहीन जंगलों से भयभीत न होकर अपने अपने पाये हुये भागों को चले गये और इन महाद्वीपों में बसने लगे।

७० वर्ष में एशिया वाला वंश बढ़ कर कई सौ का हो गया वे मेसोपोटेमिया के मैदानों तक चले गये, और वहां किसी ऐसे विचार से जिसका तात्पर्य्य हम समझ नहीं सकते, एक गरगज बनाने लगे जिसकी चोटी आकाश तक पहुँच सकै। यूसीवियस हमको सूचित

जिसका मूलाधार प्राचीन आदि पुरुषो के समयों पर है। बाईबिल के भिन्न २ अनुवादों में भिन्न अनुमानों के कारण पैदा हुई कठिनाइयां।

जल प्रलय की पौराणिक कथा–जगत का फिर से आबाद होना वाबिल का गरगज, भाषाओं का मेल–आदि भाषा।

वृहस्पति ग्रह के ध्रुवीय चिपटेपन की कैसिनी कृत खोज–पृथ्वी के ध्रुवीय चिपटेपन की न्यूटन कृत खोज–यह सिद्धान्त, कि पृथ्वी यंत्रिक कारणों से बनाई गई है–जलकृत चट्टानों के विषय में भूगर्भ विद्या सम्बन्धी खोजों से उपरोक्त बात की पुष्टि–जीवधारी जन्तुओं की ठठरियों से उसकी अधिक पुष्टि–बहुत भारी समय मानने की आवश्यकता–विकाशसिद्धान्त से उत्पत्तिसिद्धान्त का हटा दिया जाना–मनुष्य की प्रचीनता के विषय की खोजें।

जगत के समय सूचक और विस्तार सूचक अनेक द्वारा हैं–जगत का समय निर्द्धारित करने वाले वादविवाद करने की शान्ति।)

—:o:o:—

विश्व संसार में पृथ्वी की सच्ची स्थिति बड़े लम्बे और कठिन वादविवाद के अनन्तर स्थिर हुई। धर्म गुरुओं ने अपने सब अधिकार प्रयोग किये थे, यहां तक कि अपने विचारों को स्थित रखने के हेतु मनुष्यों को मरवा तक डाला। परन्तु यह सब कर्तव्य निष्फल हुआ। कोपरनिकस के सिद्धान्त को पुष्ट करने वाली साक्षी अकाट्य हो गई। अन्त में इस बात को सब लोगों ने मान लिया कि हमारे सूर्य सम्प्रदाय में सूर्य ही केन्द्र और सर्वोत्तेजक ग्रह है। पृथ्वी उस सम्प्रदाय की केवल एक और बहुत छोटी वस्तु है।

इस झगड़े के फल से शिक्षित हो कर, जब जगत की आयु का प्रश्न विचार हेतु उपस्थित किया गया, तब धर्म गुरुओं ने वैसा उत्तेजनापूर्ण विरोध नहीं प्रगट किया जैसा कि प्रथमोक्त घटना के विषय में किया था। क्योंकि यद्यपि उनकी मौखिक कथायें फिर भी विपत्ति में पड़ गई थीं, तथापि धर्म गुरुओं के विचार से उन कथाओं पर घातक आक्रमण नहीं हुआ था। अध्यात्म विद्या विशारद धर्मगुरु लोग कहते थे कि पृथ्वी को उसके सर्वोच्च पद से गिरा देना मानों ईश्वर

ज्योतिषी था जिसको १४ वें लुई ने पेरिस की वेधशाला का अफसर बनादिया था। इस कैसिनी ने यह खोज की थी कि वृहस्पति ग्रह गोल नहीं है वरन ध्रुवों पर चिपटा है। यंत्रिक विज्ञान ने प्रमाणित कर दिया था कि ऐसा रूप कोमल पदार्थ के अपनी धुरी पर घूमने का आवश्यक फल है, और यह भी प्रामाणित किया था कि जितना ही शीघ्रगामी यह घुमाव होगा ध्रुवों पर उतना ही अधिक चिपटा-पन होगा या यों कहिये कि मध्यस्थ भाग उतना ही अधिक उभरा हुआ होगा।

निरे यंत्रिक विचारें से न्यूटन ने अनुमान कर लिया था कि बहुत अधिक नहीं तो कुछ कुछ इसी भांति का रूप पृथ्वी का होगा। इसी उभड़े हुये भाग के कारणही सम्पात होता है, जो २५८६८ वर्ष में पूरा होता है और इसी कारण से पृथ्वी का अक्षविचलन भी होता है जिसको ब्रैडले ने ज्ञात किया था। हम पहिले ही कह आये हैं कि पृथ्वी का सायन व्यास ध्रुवीयव्यास से लगभग २६ मील बड़ा है।

पृथ्वी के चिपटेपन से दो बातें ज्ञात होती हैं (१) यह कि पृथ्वी पहिले एक कोमल दशा में रही है, और (२) यह कि यंत्रिक कारणों द्वारा बनी है।

परंतु यह यंत्रिक कारणों का प्रभाव केवल पृथ्वी के ऊपरी बनावट ही से नहीं प्रगट होता, वरन वह उन पदार्थों को ध्यान सहित देखने से भी प्रगट होता है जिन पदार्थों से पृथ्वी बनी हुई है।

यदि हम जल कृत चट्टानों पर विचार करें तो उनका समूह कई मील मोटा पाया जाता है, परन्तु वे निश्चय ही धीरे धीरे संग्रहीत हुई हैं। जिस पदार्थ से वे बनी हैं, वे पदार्थ पुरानी भूमि के काटकूट से लिये गये हैं। वे कटे छटे भाग नदियों में बह गये, और नवीन नवीन स्थानों तक पहुँच गये। ऐसी बातें जो अब भी हमारे देखते होती हैं कोई बड़ा फल पैदा करने के लिये बहुत समय चाहती हैं। अर्थात जल द्वारा संग्रहीत पदार्थ इस भांति एक शताब्दी में केवल कुछ इञ्च ही मोटा हो सकता है। तब जो संग्रह कई हज़ार गज़ का मोटा हो उसकी बनावट के समय के विषय में हम को क्या कहना चाहिये ?।

करता है कि यह काम ४० वर्ष तक होता रहा। उन्होंने उसका बनाना नहीं छोड़ा जब तक कि एक दैवी योग से उनकी भाषाओं में गड़बड़ न होगई। उस गड़बड़ ने उन्हें तमाम पृथ्वी पर तितर बितर कर दिया। सेन्ट एम्ब्रोज़ प्रगट करता है कि भाषाओं का यह गड़बड़ मनुष्यों का किया हुआ नहीं हो सकता था। 'ओरीजेन' विश्वास करता है कि देव दूत भी वह गड़बड़ नहीं कर सकते थे।

भाषाओं की इस गड़बड़ ने पादरियों में मनुष्य की आदि भाषा के विषय में बहुत से विचित्र विचार पैदा कर दिये। कुछ लोगों ने अनुमान किया है कि आदम की भाषा केवल संज्ञाओं से बनी हुई थी, और वे संज्ञायें एकाक्षरी थीं और वह गड़बड़ अनेकाक्षरी शब्दों के प्रचार से हुई थी। परन्तु इन विद्वान मनुष्यों ने धर्म ग्रन्थ में लिखी हुईं कई एक वार्तालापों पर अवश्य कुछ ध्यान नहीं दिया,—जैसे कि ईश्वर और आदम की वार्तालाप; और सर्प और हौवा की की वार्तालाप, इत्यादि। इन वार्तालापों में भाषा के सब प्रकार के शब्द पाये जाते हैं। परन्तु सब की सम्मति यह थी कि वह आदि भषा इबरानी भाषा थी। एकही मूल पुरुष सब जातियों का पुरखा होने के सिद्धान्तों से यह बात उचित ही थी कि ऐसाही हो।

यूनानी पादरियों ने गणना की थी कि तितर बितर होने के समय बहत्तर जातियां बन गई थीं। संटआगस्टाइन भी इस कथन से सहमत है। परन्तु इन गणनाओं में कुछ कठिनाइयां भी मानी गई जान पड़ती हैं। इस भांति शकफर्ड नामक एक विद्वान डाक्टर, जिसने एक अत्युत्तम निज कृत ग्रन्थ (On the sacred and profane history of the world connected) में इन उपरोक्त सब विषयों पर बढ़े परिश्रम के साथ लेख लिखे हैं, प्रमाणित करता है कि उन राज्यों में से प्रत्येक राज्य में स्त्री पुरुष और बच्चे मिलाकर २१ वा २२ से अधिक न रहे होंगे।

इस काल निरूपक गणना शैली में जिसका मूलाधार आदि पुरुषों के जीवनकालों पर है, एक महत्व पूर्ण बात यह थी कि वे योग्य पुरुष बहुत बड़ी आयु वाले थे। सब लोग ऐसा मानते थे कि

ज्योतिषी था जिसको १४ वें लुई ने पेरिस की वेधशाला का अफसर बनादिया था। इस कैसिनी ने यह खोज की थी कि वृहस्पति ग्रह गोल नहीं है वरन ध्रुवों पर चिपटा है। यंत्रिक विज्ञान ने प्रमाणिति कर दिया था कि ऐसा रूप कोमल पदार्थ के अपनी धुरी पर घूमने का आवश्यक फल है, और यह भी प्रामाणित किया था कि जितना ही शीघ्रगामी यह घुमाव होगा ध्रुवों पर उतना ही अधिक चिपटा-पन होगा या यों कहिये कि मध्यस्थ भाग उतना ही अधिक उभरा हुआ होगा।

निरे यंत्रिक विचारों से न्यूटन ने अनुमान कर लिया था कि बहुत अधिक नहीं तो कुछ कुछ इसी भांति का रूप पृथ्वी का होगा। इसी उभड़े हुये भाग के कारणही सम्पात होता है, जो २५८६८ वर्ष में पूरा होता है और इसी कारण से पृथ्वी का अक्षविचलन भी होता है जिसको ब्रैडले ने ज्ञात किया था। हम पहिले ही कह आये हैं कि पृथ्वी का सायन व्यास ध्रुवीयव्यास से लगभग २६ मील बड़ा है।

पृथ्वी के चिपटेपन से दो बातें ज्ञात होती हैं (१) यह कि पृथ्वी पहिले एक कोमल दशा में रही है, और (२) यह कि यंत्रिक कारणों द्वारा बनी है।

परंतु यह यंत्रिक कारणों का प्रभाव केवल पृथ्वी के ऊपरी बनावट ही से नहीं प्रगट होता, वरन वह उन पदार्थों को ध्यान सहित देखने से भी प्रगट होता है जिन पदार्थों से पृथ्वी बनी हुई है।

यदि हम जल कृत चट्टानों पर विचार करें तो उनका समूह कई मील मोटा पाया जाता है, परन्तु वे निश्चय ही धीरे धीरे संग्रहीत हुई हैं। जिस पदार्थ से वे बनी हैं, वे पदार्थ पुरानी भूमि के काटकूट से लिये गये हैं। वे कटे छटे भाग नदियों में बह गये, और नवीन नवीन स्थानों तक पहुँच गये। ऐसी बातें जो अब भी हमारे देखते होती हैं कोई बड़ा फल पैदा करने के लिये बहुत समय चाहती हैं। अर्थात जल द्वारा संग्रहीत पदार्थ इस भांति एक शताब्दी में केवल कुछ इञ्च ही मोटा हो सकता है। तब जो संग्रह कई हज़ार गज़ का मोटा हो उसकी बनावट के समय के विषय में हम को क्या कहना चाहिये ?।

मिसिर देश का समुद्रतट दो हज़ार वर्षों से अधिक समय से लोगों को ज्ञात है। इतने समय में नील नदी में वह आये हुए पदार्थों से वह समुद्र-तट भूमध्यसागर की ओर इतना बढ़गया है कि स्पष्ट ज्ञात होता है। मिसिर देशका समस्त समुद्र तटस्थ भाग इसी प्रकार बना है। मिसीसिपी नदी के मुहाने के निकट वाला समुद्र तट ३०० वर्ष से ज्ञात है और तब भी इतने समय में वह समुद्र तट मेक्सिको की खाड़ी की ओर कुछ भी नहीं बढ़ा। परन्तु किसी समय उस नदी का डेल्टा सेन्टलुई के पास था, जो अब हाल वाले डेल्टा के स्थान से ७०० मील ऊपर की ओर है। मिसिर में, अमेरिका में, और वास्तव में सबही देशों में नदियां थोड़ा २ करके भूमि को समुद्र की ओर बढ़ाती रही हैं। उनके काम की सुस्ती और उस काम की अधिकता हमें यह बात बताती हैं कि हमें उस काम के बनाने के लिये बहुत समय देना चाहिये।

यदि हम झीलों के पटजाने, खुरंडों के जमने, पहाड़ों के कट जाने, समुद्र का अपना तट काटने, चटानों का मूल भाग खुदजाने, वर्षात के पानी और कारबोनिकएसिड से चटानों के टूट फूट पर विचार करें तो भी हम इसी फल तक पहुँचते हैं।

तलछट से बनी हुई भूमि तहें पहले पहल अवश्य ही समधरातल में लगभग चौरस संग्रह हुई होंगी। उस में से बहुत सी तहें या तो समय २ के दौरों से या धीर संचालन से दबाकर सब भांति से कोणदार कर दी गई हैं इन अगणित और बड़े २ झुकावों और टूटनों की हम चाहे जो कुछ व्याख्यायें करें पर उनके पूर्ण होने में बहुत भारी समय का लगना ज्ञात होता है।

वेल्स में कोयला पूरित भूमि तहें अपने धीरे २ निमग्नता से १२००० फीट की मोटाई तक पहुँच गई हैं और नोवास्कोशिया में १४५७० फीट की मोटाई तक पहुँची हैं। यह निमग्नता इतनी मंदगामी और इतनी धीर थी कि क्रमागत तहों में एक दूसरे के ऊपर सीधे वृक्ष खड़े हुये हैं। ४५१५ फीट की मोटाई में ऐसी १७ तहें गिनी जा सकती हैं। वृक्षों की अवस्थाएं उनके डील डौल से प्रमाणित

भालती है केवल यही नहीं प्रमाणित करती कि जीवधारियों की उत्पत्ति एक नियमानुसार होती है, वरन यह भी प्रगट करती है कि वह एक ऐसा नियम है जिसमें कभी परिवर्तन नहीं हुआ। अनन्त युगों से उसके काम में न कोई परिवर्तन हुआ है न वह कभी बन्द हुआ है।

ये उपरोक्त वाक्यखण्ड उस साक्षी के एक भाग का स्वभाव प्रगट कर सकते हैं जिससे पृथ्वी के आयुनिरूपक सिद्धान्त के विचार में हम से काम पड़ेगा। भूगर्भ विद्या विशारदों के अटूट परिश्रमों द्वारा इतने अधिक प्रमाण इकट्ठा हो गये हैं कि उनका विदीवार हाल लिखने के लिये बहुत से ग्रंथों की आवश्यकता है। वे प्रमाण सब प्रकार की चट्टानों से प्रकाशित प्राकृतिक घटनाओं से लिये गये हैं, अर्थात् जलकृत और अग्निकृत चट्टानों और रूपान्तरित चट्टानों से। जलकृत चट्टानों से वह साक्षी मोटाई, टेढ़ाई और उनकी एक दूसरे से अनमिलित स्थिति निश्चित करती है, और यह भी कि किस भांति मीठे पानी में पैदा होने वाले जीवधारी समुद्रीय पानी में रहनेवाले जीवधारियों से मिल गये हैं, और कैसे जलकृत कटाव के मन्दगामी कारणों द्वारा बहुत बड़े बड़े पदार्थिक ढेर स्थानान्तरित कर दिये गये हैं और बड़े बड़े नवीन भौगोलिक धरातल बना दिये गये हैं; और किस भांति महाद्वीप ऊंचे नीचे हो गये हैं अर्थात् उनके समुद्रतट समुद्र में डूब गये हैं वा समुद्र तट वा समुद्रस्थ पर्वत समुद्र के और भीतर की ओर चले गये हैं। वह साक्षी प्राणीशास्त्र सम्बन्धी और बनस्पति शास्त्र सम्बन्धी बातों पर भी विचार करती है, अर्थात् उत्तरोत्तर समयों के पशुओं और पेड़ों पर विचार करती है और बतलाती है कि कैसे एक यथाक्रम ढंग से जीवधारियों, पेड़ों और पशुओं की शृङ्खला उनके सन्दिग्ध प्रारम्भ से हमारे समय के निश्चित रूप तक चली आरही है। पेड़ों के बिगाड़ से पैदा हुए विविध भांति के कोयलों की तहों से जो घटनायें प्रगट होती हैं, वे केवल पृथ्वी के वायुमंडल के ही परिवर्तन नहीं प्रमाणित करतीं, वरन जल वायु के संसारव्याप्त परिवर्तनों को भी प्रमाणित करती हैं। अन्य घटनाओं से वह साक्षी प्रमाणित करती है कि शीतोष्णता

मिसिर देश का समुद्रतट दो हज़ार वर्षों से अधिक समय से लोगों को ज्ञात है। इतने समय में नील नदी में वह आये हुए पदार्थों से वह समुद्र-तट भूमध्यसागर की ओर इतना बढ़गया है कि स्पष्ट ज्ञात होता है। मिसिर देशका समस्त समुद्र तटस्थ भाग इसी प्रकार बना है। मिसीसिपी नदी के मुहाने के निकट वाला समुद्र तट ३०० वर्ष से ज्ञात है और तब भी इतने समय में वह समुद्र तट मेक्सिको की खाड़ी की ओर कुछ भी नहीं बढ़ा। परन्तु किसी समय उस नदी का डेल्टा सेन्टलुई के पास था, जो अब हाल वाले डेल्टा के स्थान से ७०० मील ऊपर की ओर है। मिसिर में, अमेरिका में, और वास्तव में सबही देशों में नदियां थोड़ा २ करके भूमि को समुद्र की ओर बढ़ाती रही हैं। उनके काम की सुस्ती और उस काम की अधिकता हमें यह बात बताती हैं कि हमें उस काम के बनाने के लिये बहुत समय देना चाहिये।

यदि हम झीलों के पटजाने, खुरंडों के जमने, पहाड़ों के कट जाने, समुद्र का अपना तट काटने, चटानों का मूल भाग खुदजाने, वर्षात के पानी और कारबोनिकएसिड से चटानों के टूट फूट पर विचार करें तो भी हम इसी फल तक पहुँचते हैं।

तलछट से बनी हुई भूमि तहें पहले पहल अवश्य ही समधरातल में लगभग चौरस संग्रह हुई होंगी। उस में से बहुत सी तहें या तो समय २ के दौरों से या धीर संचालन से दबाकर सब भांति से कोणदार कर दी गई हैं इन अगणित और बड़े २ झुकावों और टूटनों की हम चाहे जो कुछ व्याख्यायें करें पर उनके पूर्ण होने में बहुत भारी समय का लगना ज्ञात होता है।

वेल्स में कोयला पूरित भूमि तहें अपने धीरे २ निमग्नता से १२००० फीट की मोटाई तक पहुँच गई हैं और नोवास्कोशिया में १४५७० फीट की मोटाई तक पहुँची हैं। यह निमग्नता इतनी मंद गामी और इतनी धीर थी कि क्रमागत तहों में एक दूसरे के ऊपर सीधे वृक्ष खड़े हुये हैं। ४५१५ फीट की मोटाई में ऐसी १७ तहें गिनी जा सकती हैं। वृक्षों की अवस्थाएं उनके डील डौल से प्रमाणित

बहुत बड़े बड़े परिवर्तन हो चुके; और वेही कारण अब भी अपना काम किये जाते हैं। यह भारी समय हम अंकों से नहीं प्रगट कर सकते।

यह बात संतोष जनक रीति से प्रमाणित हो चुकी है कि "वास्क" नामक लोगों के सम जातीय लोगों का पता 'नियोलेथिक' समय तक लगाया जा सकता है। उस समय में वृटिश द्वीप समूह का धरातल परिवर्तन हो रहा था जैसा कि अब आजकल स्केन्डीनेविया प्रायद्वीप में हो रहा है। स्काटलैण्ड का धरातल ऊपर उठ रहा था और इङ्गलैण्ड का धरातल नीचे को धँसता जाता था। 'प्लीस्टोसीन' समय में मध्य यूरोप में शिकारियों और मछुओं की एक उजड्ड जाति रहती थी जो इस्कीमाक्स जाति से बहुत मिलती थी।

स्काटलैण्ड के पुराने बरफी बहाव में मनुष्य की ठठरियाँ पत्थ-रीभूत हाथियों के साथ साथ पाई जाती हैं। इसी से हमें उस उप-रोक्त समय का पता लगता है जब यूरोप का बहुत बड़ा भाग उस बरफ़ से ढका हुआ था जो ध्रुवीय देशों से दक्षिणीय अक्षांशों तक फैला हुआ था और हिमानी नद के रूप में पहाड़ों की चोटियों से मैदानों में उतरता था। बरफ और पाला के इस विप्लव में पशुओं की अगणित जातियाँ विनष्ट हो गईं परन्तु मनुष्य बचा रहा।

अपनी प्राथमिक जंगली दशा में भी, जब अधिकतर फल, मूल और सीपदार मछलियों को खा कर जीवन व्यतीत करते थे, मनुष्य के पास एक ऐसी बात थी जो अन्त में निश्चय ही उसे सभ्य बना देती। वह आग बनाना जानता था। कच्चे कोयले की तहों में उन वृक्षों के ठठूरों के नीचे जो उन स्थानों में बहुत दिन से नापैद हो चुके हैं, मनुष्य के स्मारक चिन्ह अबतक पाये जाते हैं अर्थात् उसके वे हथियार जो उसी के साथ साथ ठीक क्रम से ऐतिहासिक समय स्पष्ट प्रगट करते हैं। ऊपरी धरातल से थोड़ीही गहराई पर पीतल के हैं, और उससे नीचे हड्डी वा सीगों के, और अधिक नीचे चिकने पत्थर के और सब से नीचे तराशे या खुरदुरे पत्थर के हथियार पाये जाते हैं। इन तहों की उत्पति का समय चालीस या पचास हज़ार वर्ष से कम का नही अनुमान किया जा सकता।

में भी परिवर्तन हुये हैं, अर्थात् कोई कोई समय ऐसे हुए हैं जब जब गरमी अधिक बढ़ी रही है, और कोई समय ऐसे हुए हैं जब वर्तमान महाद्वीपों के बड़े बड़े भाग ध्रुवीय हिम से ढके रहे हैं और इन्हीं समयों का नाम हिमानी युग था।

भूगर्भ विद्या विशारदों का एक समूह बड़ी भारी साक्षी पर अपने तर्क की नीव रख कर यह बतलाता है कि यह सर्व पृथ्वी पिघली हुई वा कदाचित वाष्पीय दशा से लाखों युगों के वीतने पर गरमी निकालते २ ठंढी हुई है और इस वर्तमान काल के शीतोष्णीय समता को पहुँची है। ज्योतिषीय निरीक्षण इस अर्थ को अधिक गौरव देते हैं और विशेष कर उतनी ही दूरतक जहां तक सूर्य सम्प्रदाय के ग्रहों का सम्बन्ध है। यह बात ऐसी घटनाओं से और भी पुष्ट होती है जैसे कि पृथ्वी का हलका मध्यम घनत्व, गहराई के साथ २ गरमी का भी बढ़ना, ज्वालामुखी पहाड़ों और जलस्रोतों की प्राकृति घटनायें और अग्निकृत और रूपान्तरित चटानों की घटनायें। इन भूगर्भ विद्या विशारदों के विचारों के अनुसार रूप परिवर्तनों के होने के लिये लाखों शताब्दियां चाहिये।

परन्तु कोपरनिकस की शैली के विचारों के अनुसार यह बात स्पष्ट है कि हम पृथ्वी की उत्पत्ति और उसके जीवन के विषय में केवल एक पृथ्वी ही पर नहीं विचार कर सकते, वरन हमें उसके साथ वे सब ग्रह भी मिला लेना चाहिये जिनके समूह में वह परिगणित है। इतनाही नहीं वरन इससे भी अधिक हम केवल इसी सूर्य सम्प्रदाय तक अपने को सीमाबद्ध नहीं कर सकते वरन हमें सब ग्रह उपग्रह वाले जगतों को भी इस विचार में मिला लेना चाहिये। और इस हेतु से कि हम उनकी पारस्परिक असीम दूरी से परिचित हो चुके हैं, हम इस बातके मानने के लिये तय्यार हैं कि उनको पैदा हुए अनन्त समय हो गया। कोई २ सितारे इतनी दूर हैं कि उनके प्रकाश को, अति शीघ्रगामी होने पर भी, हम तक पहुँचने में हज़ारों वर्ष लगे हैं। इस हेतु फल यह निकलता है कि वे अब से कई हज़ार वर्ष पहले पैदा हुए होंगे।

दरशाया है कि आजतक दिये हुये सब अंकीय अनुमान अप्रमाणित भी हो सकते हैं। इस अध्याय के दत्तचित्त पाठक ने इस अध्याय में दिये अंकों में विरोध अवश्य देखा होगा। परन्तु वे अंक यद्यपि ठीक नहीं हैं यथापि पृथ्वी की प्राचीनता को ठीक ठहराने का दावा कर सकते हैं, और हम को इस प्रतिफल तक पहुँचा देते हैं कि जगत की प्राचीनता से उसके डील डौल की बड़ाई का भी काम निकल सकता है।

आठवां अध्याय।

सत्य के विषय का झगड़ा।

———:o:———

(प्राचीन तत्व ज्ञान कहता है कि मनुष्य के पास सत्यता को निश्चित करने के हेतु कोई उपाय नहीं है।

प्राचीन ईसाइयों में विश्वास भेद पैदा हुआ—सभाओं ने उन भेदों को मिटाने के लिये उद्योग किया परन्तु व्यर्थ हुआ। अप्राकृतिक चमत्कार और शपथ खाकर प्रमाण देने की चाल निकली।

पोप लोगों ने गुप्त पाप-स्वीकार-प्रथा और धर्म परीक्षक प्रथा का आश्रय लिया। उन्होंने सम्मति भेदों को मिटाने के लिये बड़े भयंकर अत्याचार किये।

जस्टीनियन के स्मृति संहिताओं के प्रगट होने के प्रभाव और साक्षी की प्रकृति के अनुसार धार्मिक नियमों की उन्नति। वे धार्मिक नियम अधिक वैज्ञानिक हो गये।

रिफारमेशन ने व्यक्तिक विचार रखने का अधिकार स्थिर कर दिया—कैथोलिक मत कहता है कि सत्यता का लक्षण धर्मग्रन्थों में है, कैथोलिक मत ने "इन्डेक्स एक्सपरगेटोरियस" सभा द्वारा पुस्तकों का पढ़ना रोक दिया, और सेन्टवारथालोम्यू की रात्रि वाले बध द्वारा विरोध का सामना किया।

प्रोटेस्टेन्ट धर्म के लक्षणों की भांति तौरेत की सहायता की जांच—उन पुस्तकों की कृत्रिम प्रकृति।

फ्रान्स देश और अन्य देशों में जो जो गुफायें देखी गई हैं वे पत्थरयुग की साक्षी में पत्थर की बनी हुई कुल्हाड़ियां, छुरियां, भाले, तीर की गांसियां खुरचुनिया और हथौड़े देती हैं। खुरदुरे पत्थर के समय से चिकने पत्थर के समय तक का परिवर्तन बहुत धीरे धीरे हुआ है। वह समय उसी समय से मिलता है जब कुत्ते पाले गये अर्थात शिकारी जीवन के समय से। वह हज़ारों शताब्दियों का है। तीर की गांसियों का प्रगट होना धनुष का अन्वेषण इङ्गित करता है, और यह भी प्रगट करता है कि मनुष्य अपना बचाव करने की दशा से दूसरों पर आक्रमण करने की दशा तक उन्नति कर गया था। गांसीदार तीरों का प्रचार प्रगट करता है कि अन्वेषण शक्ति कैसे प्रकाश कर रही थी। हड्डी और सींगों की नोकदार चीज़ों का प्रचार प्रगट करता है कि शिकारी लोग छोटे छोटे पशुओं और कदाचित पक्षियों का भी शिकार करने लगे थे। और हड्डी की बनी हुई सीटियां प्रगट करती हैं कि वे अन्य शिकारियों से वा अपने कुत्ते से हिले मिले रहते थे। खुरचुनी, छूरियां जो कि चकमक की बनी हुई हैं, प्रगट करती हैं कि वे चमड़े को पहिनने के काम में लाते थे, और भद्दे सूजे और सूईयां चमड़े के कपड़े बनाये जाना प्रगट करती हैं। छेद की हुई सीपें जिनकी चूड़ियां और हार बनते थे प्रमाणित करती हैं कि शारीरिक बनाव शृंगार की अभिलाषा कितनी जल्द पैदा हो गई थी। रंगों के तय्यार करने के आवश्यक औज़ार प्रगट करते हैं कि वे अपने शरीर को रँगते थे वा कदाचित गुदना गुदाते थे; और पदवी सूचक छड़ियां इस बात की साक्षी देती हैं कि उनमें जाति पांति का प्रबंध प्रारम्भ हो गया था।

इन प्राथमिक मनुष्यों की कारीगरी के प्रथम बीजों पर हम बड़े चावसे दृष्टि डालते हैं। वे हाथी दांत के टुकड़ों और हड्डियों के टुकड़ों पर अपने समय के पशुओं के खुदे हुये चित्र और भद्दे पाण्डुचित्र छोड़ गये हैं। इन एतिहासिक समय से पहिले वाले चित्रों में कभी कभी झबरे हाथियों के चित्र और हरिणों के लड़ने के चित्र पाये जाते हैं। किसी चित्र में कोई मनुष्य भाले से मछली मार रहा है और

होते थे, और सम्राट की आज्ञा से एकत्रित की जाती थीं, और जिनमें सम्राट स्वयं सभापति होता था या अपनी ओर से उन्हीं में से किसी को सभापति होने का अधिकार देता था, सब मत विरोधों को शान्त करती थीं, और वास्तव में ईसाई संसार की पोप थीं। मोशीम नामक इतिहास कार जिसकी ओर मैं विशेष कर ऊपर इंगित कर चुका हूं इस समय के विषय में कहता है कि "कोई बात ऐसी न थी जो अपढ़ मनुष्यों को पादरी होने से रोके, इस हेतु गँवार और अपढ़ लोग, जो सब प्रकार की विद्या को और विशेष कर विज्ञान को धर्मनिष्ठा का शत्रु समझते थे, पादरियों में बढ़ने लगे; और तद्नुसार नीसिया की कौंसिल में जो वादविवाद हुये थे उनसे बड़ी भारी अज्ञानता और पूर्ण मतिभ्रम का उदाहरण मिलता है; विशेष कर उन लोगों की भाषा और व्याख्या में जिन्होंने उस सभा के निश्चित सिद्धान्तों को मान लिया था। वह सभा थी तो बड़ी प्रभाव शाली "परन्तु प्राचीन तार्किक लोग न तो उस सभा के होने के समय, तथा स्थान (जहां वह सभा एकत्रित हुई) के विषय में, और न उसमें सम्मिलित लोगों की गणना के सिषय में सहमत हैं, और न सभापति होने वाले विशपही के विषय में एक मत प्रकाश करते हैं। उस सभा की प्रख्यात दण्डाज्ञा के सच्चे नियम कहीं लिखे हुये नहीं हैं, वा कम से कम हमारे समय तक नहीं पहुंचाये गये"। धर्म सम्प्रदाय एक ऐसी वस्तु हो गई थी जिसको अब हाल की राजनैतिक भाषा में सम्मिलित राज्य कह सकते हैं। सभा की इच्छा अधिक सम्मतियों द्वारा निश्चित की जाती थी, और इन अधिक सम्मतियों को हस्तगत करने के लिये सब प्रकार के छल कपट किये जाते थे; यहां तक कि राज्य वंशीय स्त्रियों के प्रभाव, रिशवत, और अत्याचार भी काम में लाये जाने से नहीं छूटते थे। नीसिया की सभा उठने भी न पाई थी कि सब ही अपक्षपाती मनुष्यों को स्पष्ट ज्ञात हो गया था कि ऐसी सभाओं को धार्मिक विषयों की निश्चित कसौटी मानना बड़ी भारी भूल है। अधिक सम्मतियों के आगे कम सम्मतियां मानी नहीं जाती थीं। बहुत से अच्छे मनुष्यों का यह

विज्ञान के लिये सत्य का लक्षण प्राकृतिक प्रकाशन में ही पाया जायगा, और प्रोटेस्टेन्ट धर्म के लिये वह लक्षण सत्यवादी पोप में ही बसता है)

"सत्य क्या है ?" यह प्रश्न एक रोमन अधिकारी ने बड़ी उत्सुकता के साथ एक विशेष एतिहासिक घटना के समय पर किया था। और दैवीव्यक्ति (ईसा) ने, जो उसके सामने खड़ा था और जिससे प्रश्न किया गया था, कुछ उत्तर न दिया था। इसका उत्तर वास्तव में चाहे उसके चुप रहनेही में हो, तो हो।

यह प्रश्न बहुधा और व्यर्थ रूप से प्राचीन काल में किया गया है, और बहुधा और व्यर्थ रूप से उस समय से आज तक भी होता रहा है, पर अभी तक इसका किसी ने सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया।

यूनान में विज्ञान के उदय के समय जब प्राचीन धर्म कुहरे के समान लोप हो रहा था, उस देश के सदाचारी और विवेकी जन मानसिक निराशा की दशा में पड़ गये थे। अनग्ज़ागोरस बड़े खेद के साथ कहता है कि कोई वस्तु जानी नहीं जा सकती, कोई विषय सीखा नहीं जासकता, कोई विषय निश्चयात्मक नहीं हो सकता, इन्द्रीजन्य ज्ञान सीमाबद्ध है, बुद्धि बलहीन है और जीवन काल छोटा है"। ज़िनोफेन्स कहता है कि "हमारे लिये निश्चित होना असम्भव है, चाहे हम सत्य ही बोल रहे हों"। परमीनाईडीज़ कहता है कि "स्वयं मनुष्य के शरीर की बनावट ही उसे पूर्ण सत्य निश्चय करने से रोकती है"। इम्पीडाक्लीज़ कहता है कि "सबही तत्वज्ञानिक और धार्मिक प्रथायें अविश्वासनीय होना चाहिये, क्योंकि हमारे पास उनके जांचने की कोई कसौटी नहीं है"। डिमाक्रीटस कहता है कि "सत्य वस्तुएं भी हमको निश्चयात्मकता नहीं दे सकतीं। और यह भी कहता है कि मानवी खोज का अन्तिम प्रतिफल यह ज्ञात हो जाना है कि मनुष्य सत्य ज्ञान को पाने के अयोग्य है। और यह भी कहा है कि यदि 'सत्य' मनुष्य के हस्तगत भी हो जावे, तब भी उसे उसका निश्चय नहीं हो सकता"। पिरहो आज्ञा देता है कि "वस्तुओं की जांच करने में हमें अपनी जांच

धर्म रक्षक सभा ने तेरहवीं शताब्दी में दक्षिणीय फ्रान्स की शाखा सम्प्रदायों को विनष्ट करडाला। उसके अविचार संयुक्त अत्याचारों ने इटली और स्पेन में प्राटेस्टेन्ट मत को निर्मूल कर दिया। वह केवल धार्मिक बातों ही तक सीमा बद्ध न रही, वरन वह राजनैतिक अशान्ति के दबाने में भी लग गई। निकोलस ईमरिक जो एरेगन राज्य का लगभग ५० वर्ष तक बड़ा धर्म परीक्षक रहा था और जो सन् १३९९ ई० में मरा था "डाईरेक्टोरियम इनक्वीज़िटोरम" नामक पुस्तक में अपने व्यवहार और भयंकर निर्दयताओं का अत्यंत भयंकर वर्णन छोड़ मरा है।

ईसाई धर्म (और वास्तव में मानव वंश) के इस कलंक ने भिन्न२ देशों में भिन्न रूप धारण किये थे। पोप की धर्म परीक्षा ने अत्याचार जारी ही रक्खा और अन्त में प्राचीन धर्न परीक्षक सभाओं की स्थानापन्न हो गई। विशप लोगों का अधिकार पोप के अफसरों द्वारा बिना संकोच हटा दिया गया।

सन् १२१५ ई० की चौथी लेट्रन सभा के काम ने धर्म परीक्षक सभा की शक्ति को बहुत अधिक बढ़ा दिया था, क्योंकि किसी पादरी के सामने निज के तौर पर गुप्त पाप स्वीकार की प्रथा नियमित रूप से स्थिर हो चुकी थी। इसके कारण, जहां तक ग्रहस्थों से सम्बन्ध था धर्म परीक्षक सभा सर्वव्यापी और सर्व ज्ञानी हो गई थी। कोई आदमी ऐसा न था जिसके पापों को वह सभा न जानती हो। गुप्त पाप स्वीकार सुनने वाले पादरी के हाथ में, (जो गुप्त से गुप्त विचार स्वीकार करा लेता था,) किसी मनुष्य की स्त्री और उसके नौकर जासूस की भांति रहा करते थे। जब वह मनुष्य उस भयंकर न्यायालय के सामने बुलाया जाता तब केवल उससे यह कह दिया जाता कि तुम पर नास्तिकता का बड़ा भारी संदेह है। किसी दोष लगाने वाले का नाम न बतलाया जाता था परन्तु उसके स्थान में लोहे की कीलें, और रस्सी, चमड़े का सन्दूक और पच्चड़ वा कष्ट देने के और औज़ार शीघ्रही प्रस्तुत किये जाते थे और चाहे वह निर्दोष हो वा दोषी उसे अपना दोष स्वीकार करना ही पड़ता था।

तराज़, कि केवल प्रतिनिधियों की अधिक सम्मति पूर्ण सत्यता को
निश्चित करने वाली नहीं मानी जा सकती, हँस कर उड़ा दिया
गया। और इसका फल यह हुआ कि उस सभा के विरुद्ध एक सभा
की गई और उनकी झगड़ालू और विरोधी आज्ञाओं ने ईसाई
संसार भर में हैरानी और गड़बड़ी फैला दी। केवल चौथी ही
शताब्दी में १३ सभायें एरियस के विरुद्ध, और १५ सभायें उसके पक्ष
में हुईं; और १७ सभायें अर्द्ध एरियन लोगों की हुईं। सब मिला कर
४५ सभायें हुईं। कम सम्मति पाने वाला समूह सदैव उसी अस्त्र
के प्रयोग करने को उद्योग करता था जिसको अधिक सम्मति पाने-
वाले समूह ने निरादर किया हो।

इसके अतिरिक्त इस उपरोक्त अपक्षपाती धार्मिक इतिहास
कर्त्ता ने यह भी कहा है कि "इस चौथी शताब्दी में राक्षसी और
विपत्ति जनक दो भूलें स्वीकार करली गई थीं, एक यह कि यदि
किसी द्वारा से धार्मिक सम्प्रदाय का स्वार्थ साधन होता हो
तो धोखा देना और झूठ बोलना भी एक पुण्य कार्य्य है, और दूसरी
यह कि यदि कोई मनुष्य ठीक उपदेश किये जाने पर भी अपने
धार्मिक भ्रमों को प्रतिपादन करे और उन्हें मानता ही जावे तो राज्य-
दण्ड से और शारीरिक पीड़ा देकर उसे दंडित किया जा सकता है"।

उन समयों में जो बातें सत्य की कसैाटी मानी जाती थीं उन
पर दृष्टि डालने से हमें बड़ा आश्चर्य्य होता है। कोई सिद्धान्त
उन मनुष्यों की गणना से निश्चित मान लिये जाते थे, जो उस सिद्धान्त
के हेतु मर मिटे हों। कोई सिद्धान्त अलैाकिक चमत्कारों द्वारा,
पागलों वा प्रेत ग्रहीत मनुष्यों के कथनों द्वारा निश्चित सत्य मान
लिये जाते थे। इस भांति सेन्ट एम्बरोज़ ने एरियन लोगों के साथ
वादविवाद करते समय उन प्रेतग्रहीत मनुष्योंसे काम लिया था, जिन्होंने
विशेष २ धर्महेतुतनत्यागी मनुष्यों के स्मारक दिखलाये जाने पर
चिल्ला २ कर इस बात को स्वीकार किया था कि नीसिया की सभा
का "ईश्वर के तीन शरीर वाला सिद्धान्त" सत्य है। परन्तु एरियन
लोगों ने उस पर यह दोष आरोपण किया था कि उसने इन नारकीय

चाहिए कि ईसा के रक्त की एक बूंद सब मनुष्य जाति को क्षमा प्रदान कराने के लिये अलम है और शेष रक्त जो बागीचे में और सूली पर गिरा था वह पोप के लिये पैतृक धन है जिस से मुक्तिपत्र लिखे जायंगे', तब इस राक्षसी कथन के विरुद्ध उस हृष्ट पुष्ट जर्मन निवासी सन्यासी की आत्मा ने विद्रोह मचा दिया, और वह उसे कभी न मानता चाहे उसके प्रमाण में हज़ारों अलौकिक चमत्कार किए जाते। यह मुक्तिपत्रों के बेंचने का लज्जास्पद काम जिसके बल लोग पाप करते थे वास्तव में उन विशप लोगों ने प्रचलित किया था जो अपने निज विषयानन्दों के लिये धन की आवश्यकता पड़ने पर उसके द्वारा धन प्राप्त करते थे। छोटे दरजे के पादरी और सन्यासी जिनको यह धनप्रद व्यापार करने का अधिकार न था, स्मारक चिन्हों को जलूस के साथ इधर उधर घुमा कर और उनके स्पर्श करने की फीस लेकर धन कमाते थे। उन पोप लोगों ने जिन्हें धन की तंगी रहा करती थी यह देख कर कि यह काम बड़ा धनाकर्षक हो सकता है विशप लोगों का ऐसे मुक्तिपत्र बेचने का अधिकार छीन लिया और वह अधिकार स्वयं ले लिया और इस व्यापार के चलाने के लिये आढ़तें स्थापित कीं। विशेष कर ये आढ़तिए भीखमंगी सम्प्रदायों के होते थे। इन सम्प्रदायों में बड़ी तीक्षण स्पर्धा थी, अर्थात् प्रत्येक सम्प्रदाय इस बात का गर्व करती थी कि ईश्वरीय दरबार में अधिक प्रभाव होने, तथा कुमारी मरियम से और प्रख्यात सन्तों से परिचय होने के कारण उसके दिए हुए मुक्तिपत्र औरों से बढ़कर हैं। स्वयं ल्यूथर के विरुद्ध भी, जो अगस्तायन सम्प्रदाय का सन्यासी था, यह अपवाद फैला दिया गया था कि वह स्वयं पहिले अपनी सम्प्रदाय के स्थान में डामीनिकन सम्प्रदाय वालों को, दशम लियो के समय में जब वह सन् १५१७ ई० में रोम नगर में सेन्टपीटर का गिरजा बनाने के लिये धन एकत्र कर रहा था, इसी भांति के व्यापार का अधिकार देने के कारण, धर्म सम्प्रदाय से निकाल दिया गया था, और इस बात के विश्वास करने का कारण भी है कि स्वयं लियो रिफारमेशन की प्राथमिक दशाओं में इस मिथ्यावाद को बहुत कुछ मानता था

इस सर्व शक्ति के होते हुए धर्म परीक्षक सभा अपने तात्पर्य्य साधन में निष्फल हुई। जब नास्तिक लोग सभा का सामना न कर सकने लगे तब वे उसे धोखा देने लगे। एक भयंकर अविश्वास चुपके २ सारे यूरोप में व्याप्त होगया, अर्थात् ईश्वरीय नियमों का न होना, आत्मा का अमर न होना, मनुष्य की इच्छा का स्वतंत्र होना इत्यादि। और यह भी माना जाने लगा कि मनुष्य के लिये सम्भव है कि वह अपने अदृष्ट को रोक सके। ऐसे २ विचार धार्मिक सभाओं के अत्याचारी कामों के कारण गुप्त रीति से हज़ारों मनुष्यों के थे। कष्ट उठाने पर भी, वाल्डेन्स लोग इस बात का प्रचार करने को बचही रहे थे कि रोम की धार्मिक सम्प्रदाय कांसटेन्टाइन के समय से अपवित्र होती आती है। वे लोग यह कह कर कि इस प्रथा ने ईश्वर प्रार्थना, व्रत रखना, और दान प्रथा को बिलकुल उठा ही दिया है, धन लेकर मुक्ति पत्र देने की प्रथा के विरुद्ध एतराज़ किया करते थे। वे यह भी कहते थे कि मृतक मनुष्यों की आत्माओं के लिये प्रार्थना करना निरा व्यर्थ है, क्योंकि वे शरीर से अलग होते ही वैकुण्ठ वा नर्क में चली जाती हैं। यद्यपि सर्व साधरण लोग ऐसा विश्वास करते थे कि तत्व ज्ञान वा विज्ञान ईसाई धर्म के स्वार्थों को हानि कारक है, तथापि मुसलमानी साहित्य जो उस समय स्पेन में प्रचलित था सब श्रेणी के लोगों में प्रचलित होता जाता था। हम बहुत स्पष्ट रीति से उसका प्रभाव उस समय पैदा हुई सम्प्रदायों में देखते हैं। इस भांति "स्वतंत्र आत्मा भ्रातृ और भगिनी गण" यह मानते थे कि "यह विश्व संसार ईश्वर से निकला है और अन्त में उसी में लय हो जायगा। और बुद्धिमान आत्मायें उसी परमात्मा ईश्वर के भाग हैं, और यह सर्व विश्व एक विराट रूप से ईश्वर ही है"। ये ऐसे विचार हैं कि केवल उन्नति प्राप्त मानसिक दशा में ही हो सकते हैं। इस सम्प्रदाय के विषय में ऐसा कहा जाता है कि उसमें से बहुतों ने स्पष्ट गम्भीरता और आनन्द के साथ जल जाना स्वीकार किया था। उनके कट्टर शत्रुओं ने उन पर यह दोष लगाया था कि वे अपनी विषय वासनाओं को पूर्ण करने के लिये अर्द्धरात्रिक समाजों में, अंधेरे घरों

पढ़ना निरा व्यर्थ है। उसने उस यूनानी तत्ववेता की वेहद हँसी उड़ाई। ल्यूथर कहता है कि "यह अति अधम अरस्तू वास्तव में एक शैतान था, एक भयंकर निन्दक था, एक दुष्ट चापलूस था, मूर्खता का राजा था, एक वास्तविक एपालियन, पशु, और मनुष्य जाति के साथ एक महा भयंकर छल करने वाला था, एक ऐसा मनुष्य था जो विज्ञाम जानता ही न था, एक पूरा विषय बिलासी मनुष्य था" ल्यूथर ने उसके अनुयाइयों के विषय में यों कहा है कि वे "टिड्डी, कीड़े, मेढक, और जुएं थे। वह उनसे बड़ी घृणा रखता था। यही सम्मतियां कालविन भी रखता था। पर उसने उन्हें ज़ोर के साथ प्रकाशित नहीं किया। परन्तु इस रिफ़ारमेशन से विज्ञान का कुछ भला न हुआ। तौरेत में वर्णित मोक्रस्टी का बिछौना अब भी उसके सामने था।

ईसाई धर्म के इतिहास में सर्वाधिक अशुभ दिन वह है जिस दिन उसने अपने के विज्ञान से प्रथक कर लिया। उसने ओरीजेन के, जो कि उस समय [सन् २३१ ई०] उसका सम्प्रदाय भर में विशेष प्रतिनिध और सहायक था, सिकन्दरिया से अपना कार्य्य छोड़ कर सीज़रिया के चले जाने के लिमे बिबश किया। तदनन्तर कई शताब्दियों तक उसके मुखियों ने, उस समय के बोलचाल के अनुसार बस्तुओं की व्याख्या करने के हेतु धर्म ग्रंथो का भीतरी रस और गूदा निकालने में" अपने के व्यर्थ थका डाला। तीसरी शताब्दी से छठवीं शताब्दी तक का जगत का इतिहास प्रगट करता है कि इन सब बातों का क्या फल हुआ। अज्ञान समय की अज्ञता इसी घातक कूट नीति के कारण थी। यह सत्य है कि जहां तहां दूसरे फ्रेडरिक और दसवें अल्फान्सो सरीखे बड़े २ मनुष्य थे, जिन्हों ने ऊंचे और सर्व व्यापी विचारों से लख लिया था कि सभ्यता के लिये विद्या की कितनी आवश्यकता है, और उस निरानन्द प्रत्याशा के बीच में जो धर्मोपदेशक पत्र ने चारो ओर फैला रक्खी थी उन लोगों ने इस बात के मान लिया था कि केवल विज्ञान ही से मनुष्य की जातीय दशा सुधार सकती है।

इस भांति येही मुक्तिपत्र रिफारमेशन का तत्कालीन उत्तेजक कारण हुये थे, परन्तु शीघ्र ही वह वास्तविक सिद्धान्त भी प्रगट हो गया जो इस वादविवाद को उत्तेजित कर रहा था। वह यह प्रश्न था कि धार्मिक सम्प्रदाय के कारण बाइबिल की सत्यता स्थिर है वा बाइबिल के कारण धार्मिक सम्प्रदाय की सत्यता है? सत्य की कसौटी कहां हैं? ।

इस स्थान में मुझे उस वादविवाद की विशेष २ प्रसिद्ध बातों की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है, और उन विनाशक लड़ाइयों और रक्तपात के दृश्यों के वर्णन की आवश्यकता है जो उस वादविवाद के कारण हुये। किस भांति ल्यूथर ने विटेम्वर्ग के गिरजाघर के दरवाजे पर ९५ प्रतिज्ञायें रक्खी थीं और और अपने दोषों का उत्तर देने के लिये रोम में बुलाया गया था, और किस भांति भ्रम में पड़ कर उस समय वह एक पोप के यहां से दूसरे के यहां अपील करता फिरता था और किस भांति वह नास्तिकता का दोषी ठहराया गया, और तदनन्तर उसने बड़ी सभा में अपील की थी, और किस भांति पाप मोचन, ट्रेनसब्सटेन्सीएशन, गुप्त पाप स्वीकृति, और मोक्ष विषयक झगड़ों द्वारा निज सम्मति के अधिकार रखने के मूल सिद्धान्त का विचार स्पष्ट उभर पड़ा, और किस भांति सन् १५२० ई० में ल्यूथर धार्मिक सम्प्रदाय से च्युत किया गया और सामना करने के हेतु उस आज्ञा को उसने जला लिया, और धार्मिक व्याख्याओं की पुस्तकों को भी जला दिया जो उसके कथनानुसार सब प्रकार के राज्यशासन को उलट देनेवाली और पापों को सर्वोच्च बना देने वाली थीं, और कैसे उसने इस कुशलता से बहुत से जर्मन राजाओं को अपने पक्ष में कर लिया, और किस भांति वार्म्स स्थान में राज्य दरबार के सामने बुलाये जाने पर उसने अपने कथन के निराकरण करने से इन्कार किया और वार्टबर्ग के किले में छिपे रहने के समय उसके सिद्धान्त फैलते जाते थे, और ज़्विंगली की अधीनता में स्वीटज़रलैण्ड में रिफारमेशन होना प्रारम्भ हुआ, और किस भांति इस हलचल के नीचे दबे हुये सम्प्रदायिक विनाश के सिद्धान्त ने जर्मन

बहुत से अच्छे और शुभकांक्षी मनुष्यों ने इस बात का उद्योग किया है कि वे ईसाई धर्म ग्रन्थों के कथनों को वैज्ञानिक खोजों से मिलावें, परन्तु वे सफल मनोरथ नहीं हुये, विभिन्नता इतनी बढ़ती गई, कि पूर्ण विरोध हो गई। पर दोनों प्रतिद्वंदियों में से एक को हारना ही चाहिये।

तब क्या हम उस किताब की सत्यका की जांच नहीं कर सकते जो दूसरी शताब्दी से अबतक वैज्ञानिक सत्यता की कसौटी की भांति मानी जाती रही है? इतनी बड़ी उच्च पदवी का अभिमान यथास्थित रखने के हेतु उसे मानवी गुण दोष विवेचन का समराह्वान करना ही चाहिए।

प्राचीन काल में ईसाई धर्म के धार्मिक सम्प्रदाय के बहुत से प्रसिद्ध पादरी लोग पूरी तौरेत के कर्त्ता के विषय में सन्देह रखते थे, मुझे इस छोटी पुस्तक में स्थान नहीं है कि मैं उन बातों और युक्तियों का विदीवार वर्णन करूं जो उस समय और उस समय से अब तक इस विषय में की गई हैं। अब इसका साहित्य बहुत बढ़ गया है। परन्तु मैं पाठक को पवित्र चरित्र और विद्वान डीन प्रीडो कृत "दी ओल्ड ऐन्ड न्यू टेस्टामेंट कनेक्टेड" नामक ग्रंथ की ओर इंगित करूंगा। यह ऐसा ग्रंथ है जो गत शताब्दी के साहित्य भूषणों में से एक है। पाठक यह विषय बहुत हाल ही में और पूर्णरीति से विवेचन किया हुआ विशप कोलेंसो के ग्रंथ में भी पा सकता है। निम्न लिखित वाक्यखण्ड इस वादविवाद की वर्तमान दशा का पूर्ण और स्पष्ट अनुभव देगा।

कहा जाता है कि पंचाध्यायी तौरेत ईश्वरीय प्रेरणा द्वारा मूसा ने लिखी है : इस भांति ईश्वर कृत और सत्य पुस्तक होने के विचार से वह केवल विज्ञानियों ही को माननीय वस्तु नहीं है वरन् संसार भर की माननीय वस्तु है।

परन्तु पहले तो यही बात पूछी जा सकती है कि किसने और क्यों उस पुस्तक की ओर से इतना बड़ा दावा प्रगट किया है?

स्वयं उस ग्रंथ ने तो ऐसा दावा किया नहीं। उसका यह भी

तब भी सम्मति भेद के कारण मृत्यु दण्ड दिया जाना प्रचलित ही था। जब कालविन ने जनेवा नगर में सर्वीटस को जलवा दिया था तब यह बात प्रत्येक मनुष्य पर प्रगट हो चुकी थी कि दुःखदायी भाव अभी कम नहीं हुआ। उस तत्व ज्ञानी मनुष्य का दोष उसके विश्वास में था। उसका यह विश्वास था कि ईसाई मत के सच्चे सिद्धान्त नीसिया की सभा के समय से पहिले ही विनिष्ट हो चुके थे, और जगत की एक आत्मा के समान पवित्र आत्मा (होली घोस्ट) प्रकृति के सर्व प्रवन्ध को चैतन्य करती है और सब वस्तुओं के अन्त में ईसा के साथ वह उस ईश्वरीय पदार्थ में लय हो जायगी जहां से वे सब वस्तुएं निकली थीं। इस विश्वास के कारण वह मन्द अग्नि में भून कर मार डाला गया। क्या इस प्राटेस्टेण्ट विश्वास और उस वैनिनी के कैथोलिक विश्वास में कुछ भेद है? वही वैनिनी जिसको सन् १६२९ ई० में धर्म परीक्षक सभा ने "प्रकृति विषयक वार्तालाप" नामक पुस्तक लिखने के हेतु तुलूसी नगर में जला दिया था।

छापे की ईजाद और पुस्तकों के प्रचार ने ऐसे भय पैदा कर दिये थे जिन तक धर्म परीक्षक सभा के अत्याचार पहुँच नहीं सकते थे। १५५९ ई० में पोप चौथे पाल ने "कांग्रीगेशन आफ दी इन्डेक्स परगेटोरियस" नामक एक सभा स्थापित की। उसका काम यह था कि "वह छपी किताबें और छपाई जाने वाली हस्त लिखित प्रतियें को जांचे और निश्चय करे कि लोगों को वे पुस्तकें पढ़ने देना चाहिये वा नहीं और उन पुस्तकों को शुद्ध करे, जिनमें बहुत अशुद्धियां नहीं है, और जिनमें कुछ ऐसे अच्छे और हितकर सत्य सिद्धान्त हों जो सम्प्रदाय के सिद्धान्त हों जो सम्प्रदाय के सिद्धान्तों से मिलते हों, और उन पुस्तकों पर दोषारोपण करे जिनके सिद्धान्त नास्तिक और धर्म-बाधक हों, और विशेष२ मनुष्यों को नास्तिक सिद्धान्त मय पुस्तकों के पढ़ने के हेतु विशेष अधिकार प्रदान करे। यह सभा, जो कभी२ पोप के सामने ही होती थी परन्तु साधारणतः कार्डिनल सभापति के महल में होती थी, धर्मरक्षक-सभा के अधिकारों की अपेक्षा अधिक अधिकार रखती थी, क्योंकि वह केवल उन्हीं पुस्तकों को

जलप्रलय और नूह की नौका की कथाएं, वायु द्वारा समुद्र सोषण, बाबिल के गरगज के बनने और भाषाओं की गड़बड़ की कथाएं, पाई थीं। वह एकाएक ग्यारहवें अध्याय में यहूदियों का ठीक इतिहास प्रारम्भ करता है। उसी स्थान में उसका सार्व भौमिक इतिहास अन्त होता है, और वह केवल एक वंश अर्थात शेम के वंशजों की कथा के वर्णन में लग गया है।

इसी निरोध के विषय में आरजाईल के ड्यूक ने निज कृत "प्राइमवलमैन" नामक पुस्तक में खूब स्पष्ट रीति से कहा है कि शेम के बंशवृक्ष में हमें ऐसे नामों की एम सूची मिलती है जो हमारे लिये केवल नाम ही मात्र हैं। वह एक ऐसा बंशवृक्ष है जो उस समय के वर्तमान लाखों घरानों में से केवल कतिपय घरानों के क्रमागत पुरुषों का पता देने के अतिरिक्त न और कुछ करता है न करने का दावा करता है। उसमें केवल एक दूसरे के बाद होने वाले पुरुषों का क्रम दिया है और यह भी निश्चय नहीं है कि वह क्रम ठीक अथवा पूरा है कि नहीं। इन पुरुषों के पहले वाली अज्ञान दशा का कुछ भी हाल नहीं ज्ञात होता, तब भी उस में कुछ ऐसी बातें हैं जिनके कारण कभी २ थोड़ी देरके लिये अज्ञानान्धकार का पर्दा उठ जाता है और उतनेही में हम उन बड़ी २ हलचलों की कुछ झलक देखलेते हैं जो उस समय वा उससे पहले हो रही थीं। स्पष्ट स्वरूप तो नहीं दिखाई पड़ते, यहां तक कि उन हलचलों की केवल दिशामात्र का अनुमान हो सकता है, परन्तु कुछ ऐसे शब्द सुनाई पड़ते हैं जैसे बहुत सी नदियों के मिलकर हों"। मैं हपफील्ड की सम्मति से सहमत हूं कि इस बात की खोज कि तौरेत भिन्न २ द्वाराओं से संग्रह की गई है, एक ऐसी खोज है जो केवल प्राचीन धर्म पुस्तक के एतिहासिक अध्यायों का अर्थ लगाने के लिये वा संपूर्ण ईश्वर बिद्या और इतिहास के लिये ही अत्यन्त आवश्यक फल पूर्ण नहीं है, वरन् वह एक ऐसी अति निश्चयात्मक खोज भी है जो बिवेचन के राज्य में और साहित्य के इतिहास में की गई है। उसके विरुद्ध विरोधी बिवेचक समाज चाहे कुछ कहे पर वह खोज स्वयं

दावा नहीं है कि वह एक ही मनुष्य कृत ग्रंथ है, अथवा वह यह भी नहीं कहता कि मैं ईश्वर का लिखा हुआ हूं।

दूसरी शताब्दी के बाद तक मनुष्य को ऐसा मिथ्या विश्वास करने का कोई बड़ा आग्रह न था। यह आग्रह केवल ईसाई तत्व-ज्ञानियों की उच्च श्रेणियों में ही नहीं पैदा हुआ, वरन धर्म सम्प्रदाय के उन अधिक प्रचण्ड पादरियों में भी पैदा हो गया जो निज कृत ग्रंथों ही से अविद्वान और अविवेचक प्रमाणित होते थे।

दूसरी शताब्दी से वर्तमान समय तक के प्रत्येक समय ने बहुत भारी योग्यता के ईसाई और यहूदी पैदा किये, जिन्होंने इन दावों को पूर्णतः खण्डन किया है। उनका निश्चय स्वयं उन किताबों की स्वसाक्षी ही पर स्थित है। यह निश्चय स्पष्ट प्रगट करता है कि कम से कम उस ग्रंथ के दो कर्त्ता थे जिनके नाम एलोहिस्टिक और जिहोविस्टिक कहे गए हैं : हपफील्ड मानता है कि जिहोविस्टिक वर्णन में ऐसे चिन्ह हैं जो प्रदर्शित करते हैं कि वे एलोहिस्टिक वर्णन से कोई पृथक ही वस्तु हैं। ये दोनों द्वारा जिनसे ये वर्णन पाये गये हैं, बहुत सी दशाओं में परस्पर विरोधी हैं। इसके अतिरिक्त यह भी कहा गया है कि इबरानी भाषा की हस्तलिखित वा इबरानी बाइबिल की छपी हुई प्रतियों में यह नहीं लिखा है कि ये पुस्तकें मूसा की बनाई हुई हैं, और न 'वलगेट' नामक सत्तर विद्वानों कृत अनुवाद में "मूसा कृत ग्रन्थ" लिखा हुआ है। यह बात केवल हाल के अनुवादों में लिखी है।

यह बात स्पष्ट है कि वे ग्रन्थ केवल मूसा के बनाये नहीं कहे जा सकते, क्योंकि उनमें मूसा की मृत्यु भी लिखी हुई है। यह भी स्पष्ट है कि वे मूसा की मृत्यु से कई सौ वर्ष बाद तक नहीं लिखे गये थे, क्योंकि उन में ऐसी घटनाओं की ओर इंगित किया गया है जो यहूदी राजाओं के राज्य स्थापन के बाद तक नहीं हुई थीं।

किसी मनुष्य को यह भी साहस नहीं हो सकता कि वह उन्हें ईश्वर प्रेरणा से लिखी हुई पुस्तकें कह सके, क्योंकि हाल के जर्मन और अँगरेज़ विद्वानों की दिखलाई हुई उनकी पूर्वापर विरुद्धता, अनुप-

अनादि मानवी उत्साह और मानवी धर्मोन्मत्तता उसको छेड़ने के लिये कभी समर्थ नहीं हुये । पृथ्वी पर सब ही बड़ी और सुन्दर वस्तुओं में उसके उदाहरण मिलते हैं और आकाश पर सूर्य और तारागण उसके अक्षर हैं ।



नवां अध्याय ।

विश्व के शासन के विषय का वादविवाद ।

(जगत के शासन के विषय में दो विचार हैं। १—ईश्वर कृत शासन, और २—प्राकृतिक नियम कृत शासन—पहले को धर्म गुरु लोग मानते हैं—दूसरे के प्रचार का वर्णन ।

केपलर ने वे नियम खोज निकाले जो सूर्य सम्प्रदाय पर प्रभुत्व रखते हैं—पोप के अधिकार से उसके ग्रन्थों की निन्दा कीगई—डाविनसी ने यंत्रिक विज्ञान की नीव डाली—गैलीलियो ने गति-विद्या के मूल नियम खोज निकाले—न्यूटन ने उन्हें आकाशस्थित पिंडों की चाल में नियोजित किया और दिखलाया कि सूर्य सम्प्रदाय का शासन गणित सम्बन्धी आवश्यकता से होता है—हरशल ने उस प्रतिफल को फैलाकर बिश्व भर की वस्तुओं में लगाया—नीहारिका कल्पना—ईश्वर बिद्या विषयक अपवाद ।

पृथ्वी की बनावट में नियम कृत शासन की साक्षियां, और पशुओं और पेड़ों की शृंखला की वृद्धि में नियमों की साक्षी—वे विकाशित होकर वर्तमान रूप तक पहुँचे हैं, न कि एकाएक उत्पत्ति द्वारा ।

मानव समाजों के एतिहासिक जीवन से नियमों का शासन प्रगट होता है और व्यक्तिक मनुष्य की दशा में भी वही बात है ।

इस बिचार को कतिपय संशोधित सम्प्रदायों ने कुछ २ मान लिया ।



जगत के शासन के ढंग की दो व्याख्याएं की जा सकती हैं । या तो वह शासन ईश्वर कृत अविच्छिन्न व्यवधान द्वारा होता है या

अपना प्रतिपादन करेगी, और जब तक विवेचना सिद्धान्त संसार में रहेगा तब तक वह किसी वस्तु से पीछे न हटेगी और वर्तमान समय की विद्वतानुसार यदि कोई पाठक आग्रह छोड़ कर और सत्य ज्ञान निष्ठा से उसकी जांच करेगा तो यह बात उसके लिये सहज नहीं होगी कि वह उस खोज के प्रभाव को हटा देने में समर्थ हो"।

तब क्या हम इन पुस्तकों को छोड़दें ? क्या यह बात मान लेना कि एडिन के बाग से गिरने की कथा एक पौराणिक कथा है प्रायश्चित्त की शरण जाना नहीं है। यही प्रायश्चित्त ईसाई सिद्धान्तों का सब से अधिक महत्वमय और पवित्र सिद्धान्त है।

अच्छा इस विषय में अब हमें सोचने दो। ईसाई धर्म अपने प्रारम्भिक समय में जब वह संसार को निज अनुयायी और पराजित कर रहा था, उस सिद्धान्त के विषय में कुछ नहीं जानता था। हमने देखा है कि टरस्यूलियन ने उस सिद्धान्त को 'अपालोजी' नामक निज कृत ग्रन्थ में वर्णन करने के योग्य ही नहीं समझा। उसकी उत्पत्ति प्राचीन काल के ईसाई नास्तिकों के सम्प्रदाय में हुई। इस सिद्धान्त को सिकन्दरिया के ईश्वरानुयायी भी नहीं मानते थे। न कभी पादरियों ने ज़ोर के साथ उसका प्रचार ही किया। ऐन्सेल्म के समय तक वह इस स्थिति को नहीं पहुँचा था, जैसा कि अब है। फाईलोज्यूडिअस इस पतन की कथा को एक चिन्ह मात्र बताता है। 'ओरीजेन' इस कथा को एक रूपक मानता है। कतिपय प्राटेस्टेंट सम्प्रदायों पर असंगतपन का दोष लगाया जा सकता है, क्योंकि वे इस पतन सिद्धान्त को कुछ काल्पनिक और कुछ सत्य मानते हैं। परन्तु उन्हीं की भांति यदि हम भी सांप को शैतान का चिन्ह मानते हैं, तो क्या यह बात उस सब कथा को रूपक नहीं बना देती ?

यह खेद की बात है कि ईसाई सम्प्रदाय ने इन पुस्तकों के प्रतिपादन करने का भार अपने ऊपर ले लिया है, और उनकी प्रत्यक्ष विरोधोक्तियों और भूलों के लिये स्वेच्छानुसार अपने को जवाबदेह बना लिया है। यदि सम्भव होता तो उनका प्रतिपादन उन्हीं यहूदियों को दिया जाता जिनसे उनकी उत्पत्ति है और जिनसे वे

केपलर के समसामयिक विद्वानों में से किसी ने भी धरातल के नियम पर विश्वास नहीं किया और न न्यूटन कृत 'प्रिंसिपिया' नामक पुस्तक के प्रकाशित हो जाने के समय तक उस नियम को किसी ने स्वीकार किया। सत्य बात तो यह थी कि उस समय में केपलर के नियमों के वैज्ञानिक अर्थ को कोई समझता ही न था। वह स्वयं नहीं समझ सकता था कि वे नियम किस प्रति फल का अनिवार्य्य कारण होंगे। उसकी भूलें प्रगट करती थीं कि वह उन नियमों के समझने से कितनी दूर था। उसका अनुमान था कि प्रत्येक ग्रह एक सु चतुर मूल-तत्व का स्थान है, और यह अनुमान था कि पांच मुख्य ग्रहों के कक्षाओं के परिमाणों और रेखागणित सम्बन्धी पांच सम-घनों के बीच एक निश्चित सम्बंध है। पहिले वह ऐसा विश्वास करना चाहता था कि मंगल की कक्षा अण्डाकृति है, परन्तु बहुत परि-श्रम के साथ छान बीन करने पर उससे यह बड़ी सत्यता ज्ञात हुई कि वास्तव में वह अण्डाकृति ही है। आकाशस्थित पिण्डों की अक्ष-यता का विचार इस बात का कारण हुआ कि गोलाई में चलने की पूर्णता वाला अरस्तू का सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जावै और इस विश्वास का भी कारण हुआ कि आकाशस्थित पिण्डों में सिवाय गोल चाल के और कोई चाल हो नहीं है। वह बड़ी शिकायत करता है कि इस बात की खोज ने मेरा बहुत समय बरबाद किया। उसका तत्व ज्ञानिक साहस इस बात से प्रगट होता है कि उसने प्राचीन पौराणिक कथा का खण्डन कर डाला।

कतिपय बहुत सी आवश्यक बातों में केपलर ने न्यूटन कथित नियमों को पहिले ही कह डाला है। उसी ने पहिले पहल गुरुत्वा-कर्षण के विषय में स्पष्ट विचार प्रगट किये हैं। वह कहता है कि पदार्थ का प्रत्येक कण जब तक कोई दूसरा कण उसे विचलित न करे गा अचल रहे गा, अर्थात् पृथ्वी किसी एक पत्थर को उससे अधिक आकर्षित करती है जितना कि वह पत्थर पृथ्वी को खींचता है, और पिण्ड एक दूसरे की ओर अपने परिमाणों के अनुसार आकर्षि होते हैं, और यह भी कहता है कि पृथ्वी चन्द्रमा की ओर ⁵⁄₅₄ खिँचेगी और

अपरिवर्तनीय नियमों की करतूत द्वारा। पहले सिद्धान्त को स्वीकार करने के लिये धर्म गुरु लोग सदैव ही इच्छुक होंगे, क्योंकि धर्म गुरु अवश्य ही चाहते हैं कि हम भक्त की प्रार्थना और ईश्वर कृत कार्य के मध्यस्थ समझे जायें। उनका गौरव उस शक्ति से बहुत बढ़ गया है जिसका वे दावा करते हैं, अर्थात यह कि हम ईश्वरीय कार्यों के निश्चित कर्ता हैं। ईसाई धर्म से पहले प्रचलित धर्म में धर्म गुरुओं का बड़ा भारी काम यह था कि वे अलौकिक चमत्कारों द्वारा, सगुणों द्वारा और पशुओं की आँतों को देख कर आगम घटनाओं की खोज करें, और बलिदान करके देवताओं को प्रसन्न करें। तदनन्तर ईसाई धर्म के समय में इससे भी बढ़कर अधिकार का दावा करते थे, अर्थात पादरी लोग कहते थे कि अपनी सिफारिशों द्वारा वे जगत कार्यों की धारा को शासित कर सकते हैं, विपत्तियों को लौटा सकते हैं, लाभ निश्चित कर सकते हैं, और यहां तक कि प्राकृतिक क्रम को परिवर्तित कर सकते हैं।

इस हेतु सोच समझ कर वे लोग अपरिवर्तनीय नियमों द्वारा जगत शासन के सिद्धान्त को बुरी दृष्टि से देखते थे। उन्हें ज्ञात होता था कि यह सिद्धान्त उनके बड़प्पन की कम क़दरी करा देगा और उनके महातम को घटा देगा। उनको ऐसे ईश्वर में कुछ भयंकरता जचने लगी जो मनुष्य की प्रार्थना से जीत न लिया जा सके, अर्थात एक उदासीन और अनुत्साही ईश्वर; और भाग्य और अदृष्टि में भी कुछ भयंकरता जचने लगी।

परन्तु आकाशों के क्रमागत संचालन ने विचारवान पुरुषों के चितों पर सदैव प्रभाव डाला है। सूर्य का उदय और अस्त, दिन का कमती बढ़ती प्रकाश, चन्द्रमा की कलाओं के घटना बढ़ना, ठीक समय पर ऋतुओं का बदलना, आकाश में घूमने वाले सितारों की नपी तुली चाल—ये सब क्या बातें हैं। और इसी प्रकार की अन्य हज़ारों घटनाएं सिवाय क्रमागत और घटनाओं के अपरिवर्तनीय संचालन के उदाहरणों के और क्या हो सकता है? प्रायमिक दर्शकों का इस व्याख्या पर वाला विश्वास कदाचित ग्रहण इत्यादि

न्यूटन ने एक सर्वव्यापी सिद्धान्त का साधन प्रस्तुत कर दिया जिसके अन्तरगत गोलाकार, अण्डाकार, परवलयाकार और अति परवलयाकार संचाललों की सब ही विशेष दशायें आ सकती हैं, अर्थात् शंकुच्छिन्न की सब ही दशाओं में वे नियम लग सकते हैं।

सिकन्दरिया के गणित विद्या विशारदों ने प्रमाणित करदिखाया था कि गिरते हुये पिण्डों की चाल की दशा पृथ्वी के केन्द्र की ओर को होती है। न्यूटन ने प्रमाणित कर दिया कि यह अवश्य होना ही चाहिए क्योंकि एक गोल पिण्ड के सब कणिकाओं के आकर्षण का सर्वव्यापी प्रभाव वैसा ही होता है कि मानो वे सब उसी के केन्द्र में एकत्रित हैं।

इसी केन्द्रीय शक्ति को जो इस प्रकार पिण्डों के गिरने को निश्चित करती है आकर्षण शक्ति नाम दिया गया है। सिवाय केपलर के आज तक किसी ने यह विचार न किया था कि उसका प्रभाव कहां तक पहुँचता है। न्यूटन को यह सम्भव जान पड़ा कि उसका विस्तार चन्द्रमा तक होना चाहिये और वह वही शक्ति होना चाहिये जो उसे सीधे मार्ग से फेरती है और उसे पृथ्वी के इर्द गिर्द उसकी कक्षा में घुमाती है। विपरीति वर्गों के नियमों के सिद्धान्तों पर इस बात का हिसाब लगा लेना बहुत सहज था कि पृथ्वी का आकर्षण दृग्गोचर फलों को पैदा करने के लिये काफी है वा नहीं। उस समय तक ज्ञात पृथ्वी के परिमाण के नापों को काम में लाकर न्यूटन ने जान लिया था कि चन्द्रमा का विक्षेप एक मिनट में केवल १३ फीट होता है, और यदि मेरी गुरुत्वाकर्षण विषयिक कल्पना ठीक हो तो १५ फीट होगा। परन्तु सन् १६६९ ई० में, जैसा कि हम कह आये हैं, पिकार्ड ने पहिले की अपेक्षा एक अंश की माप अधिकतर होशियारी से की और इस घटना ने पृथ्वी के परिमाण के अन्दाज़ को अदल बदल दिया और इसी कारण चन्द्रमा की दूरी में भी फेर हो गया। उन वादविवादों के कारण जो सन् १६७९ ई० में रायल सुसायटी में हुये, न्यूटन का ध्यान उस ओर गया और वह पिकार्ड के निकाले हुए फलों को लेकर घर गया, अपने पुराने कागज़ात

चन्द्रमा पृथ्वी की ओर $\frac{५३}{५४}$ खिँचेगा । उसका कथन है कि चन्द्रमा के आकर्षण के कारण ज्वार भाटा होते हैं और चन्द्रमा की चाल में अन्य ग्रह गण अवश्य गड़बड़ डालते हैं ।

ज्योतिष विद्या की उन्नति तीन विभागों में बांटी जा सकती है। अर्थात्:–(१) आकाशस्थित पिण्डों के प्रत्यक्ष संचालन के निरीक्षणों का समय, (२) उनकी असली चालों की खोज का समय, और विशेष कर ग्रह सम्बन्धी परिक्रमणों के नियमों की खोज का समय । इस समय में कोपरनिकस और केपलर वहुत प्रख्यात हुये । और (३) उन नियमों के कारणों के निश्चित होने का समय । यह न्यूटन का समय था ।

दूसरे समय से तीसरे समय तक पहुँच जाना यंत्रिक विद्या सम्बन्धी गति विद्या शाखा की उन्नति पर निर्भर था, जो आरकैमेडीज़ अथवा सिकन्दरिया के विद्वानों के समय से एक स्थिर अवस्था ही में रह गई थी ।

ईसाई योरोप में लियोनारडो डा विन्सी के समय तक जो सन् १४५२ में पैदा हुआ था, यंत्रिक विज्ञान का कोई उन्नति दाता न रहा था । लार्ड बेकन को नहीं, वरन् इसी लियोनारडो को विज्ञान का पुनर्जन्म दाता कहना चाहिये । बेकन केवल गणित विद्या ही से अनभिज्ञ नहीं था, वरन् वह पदार्थ विद्या सम्बन्धी खोजों में गणित विद्या के प्रयोग को मानता ही न था । उसने व्यर्थ प्रतिवाद करके कोपरनिकस की शैली को हँसी के साथ अस्वीकार किया । जिस समय गैलीलियो अपनी दूरबीन सम्बंधी भारी२ खोजों तक पहुँचने ही को था, उस समय बेकन वैज्ञानिक खोज में यंत्रों के प्रयोग के विषय में सन्देह प्रकाशित कर रहा था । यह कहना कि अनुमान-वादी ढंग बेकन का निकला हुआ है मानो इतिहास की हत्या करना है । उसके काल्पनिक वैज्ञानिक प्रस्ताव कभी किसी तुच्छ काम में भी न आये । किसी ने कभी उनके प्रयोग करने का विचार तक भी न किया । सिवाय अँगरेज़ी पढ़ने वालों के उसका कोई नाम तक नहीं जानता ।

आगे के पत्रों में मुझे डाविन्सी की ओर विशेष कर इंगित करना पड़ेगा । उसके ग्रंथों में से जो अब तक हस्त लिखित ही हैं, दो ग्रंथ

तब क्या हम यह प्रतिफल निकाल लें कि सूर्य और सितारों के सम्प्रदाय ईश्वर ने पैदा किये हैं और तदनन्तर उन पर ऐसे नियम लगा दिये हैं जिन नियमों के वश में उसे उन्हें रखना मंजूर था ? वा कोई ऐसे कारण हैं कि हम विश्वास करें कि यह भिन्न२ सम्प्रदाय स्वेच्छित आदेश से नहीं पैदा किये गये, वरन् किसी नियम द्वारा बने हैं ? ।

निम्न लिखित कुछ विशेष बातें हैं जो सूर्य सम्प्रदाय से प्रगट होती हैं जैसी कि लेपलेस ने गिनाई हैं। सब ग्रह और उनके उपग्रह ऐसी थोड़ी उत्केन्द्रता वाले दीर्घवृतों में घूमते हैं कि वे लगभग वृत्त ही हैं। सब ग्रह एक ही ओर को घूमते हैं और लगभग एक ही धरातल में हैं । उपग्रहों की भी चालें उसी ओर को हैं जिस ओर को ग्रहों की हैं । सूर्य, ग्रहों और उपग्रहों की अक्ष सम्बन्धी चालें उसी ओर को हैं जिस ओर को उनकी कक्षा सम्बन्धी चालें हैं, और ऐसे धरातलों में हैं जिनमें अति तुच्छ विभिन्नता है। ऐसा सम्भव नहीं है कि इतनी बहुत सी बातों की एकता संयोग का फल हो सकती हो ! क्या यह स्पष्ट नहीं प्रगट होता कि इन सब पिण्डों में एक एकवर्गीय सम्बन्ध रहा होगा और ये सब केवल उस वस्तु के विभाग मात्र हैं जो किसी समय केवल एक ही रही होगी ?

परन्तु यदि हम यह मान लें कि वह पदार्थ जिससे सूर्य सम्प्रदाय बना हुआ है किसी समय नीहारिका दशा में था और अपनी अक्ष पर घूमता था, तो ये उपरोक्त सब ही विशेष२ बातें आवश्यकीय यंत्रिक फलों की भांति निकल आती हैं । केवल इतना ही नहीं वरन् इससे कुछ और अधिक भी, अर्थात् ग्रहों उपग्रहों और अवान्तर ग्रहों, की बनावटों की व्याख्या हो सकती है । हमको ज्ञात हो जाता है कि बाहरी ओर के ग्रह और उपग्रह भीतरी ओर वालों की अपेक्षा क्यों बड़ी शीघ्रता से घूमते हैं, और छोटे ग्रह क्यों मंदगामी हैं, और बाहरी ग्रहों के उपग्रह क्यों कम हैं । हमको ग्रहों और उपग्रहों के अपनी २ कक्षाओं में घूमने के समय के चिन्ह भी मिल जाते हैं,

निकाले और गणना करने बैठा। गणना का फल अन्त को पहुँचने ही को था कि वह इतना क्षुब्ध हुआ कि उसने विवश होकर उन्हें पूरा करने के लिये अपने एक मित्र को दे दिया। आशा किया हुआ मीलान ठीक हो गया। यह प्रमाणित हो गया कि चन्द्रमा का अपनी कक्षा में रहना और पृथ्वी के इर्द गिर्द परिक्रमा करना पारथिव आकर्षण शक्ति द्वारा होता है। केपलर की कल्पनाएं हट कर डिसकारटीज़ की आवृत्तियां प्रचलित हुईं, और ये आवृत्तियां भी हटकर अब न्यूटन की केन्द्रस्थ शक्ति स्थापित हुई।

इस भांति पृथ्वी और प्रत्येक ग्रह सूर्य की आकर्षण शक्ति द्वारा सूर्य के इर्द गिर्द अपने २ अण्डाकार कक्षाओं में घुमाये जाते हैं और ग्रहों के न्यूनाधिक परिमाणों के प्रभाव से स्थानच्युति घटनाएं भी हुआ करती हैं। सब ग्रहों के परिमाण और सब की दूरियां जान कर इन गड़बड़ियों का हिसाब लगाया जा सकता है। इसके अनन्तर वाले ज्योतिषी लोग विपरीति सिद्धान्त से भी सफल मनोरथ हुये थे, अर्थात् इन स्थानच्युतियों को जान कर उस गड़बड़ करने वाले पिण्ड के स्थान और परिमाण को जान लेते थे। इसी तरह यूरेनस के सिद्धांतिक स्थान से स्थानच्युतियों द्वारा निप्चून ग्रह की खोज पूर्ण की गई थी।

न्यूटन की योग्यता इस बात में है कि उसने गतिविद्या के नियमों को आकाशस्थित पिण्डों की चालों में लगाया और आग्रह किया कि वैज्ञानिक सिद्धान्त निरीक्षणों के मिलान द्वारा गणित के साथ प्रमाणित किये जायें।

जब केपलर ने अपने तीन नियमों को प्रकाशित किया था, तब पादरियों ने दोषारोपण सहित उनका स्वागत किया था। यह बात इस कारण से नहीं थी कि वे नियम अशुद्ध थे या उनमें अशुद्धता का अनुमान किया गया था, वरन् कुछ तो इस कारण से कि वे कोपरनिकस की शैली को पुष्ट करते थे और कुछ इस कारण से कि इस भांति के नियम का प्रचार होने देना अनुचित समझा गया था जो ईश्वरीय मध्यस्थता का विरोधी हो। यह जगत एक ऐसा

अर्थात् जगतों और सूर्यों से बना हुआ बादल है। चाहे यह संसार हमको बहुत ही बड़ा ज्ञात हो, पर अनन्त और अनादि बुद्धि के लिये वह एक क्षण भंगुर कुहिरे की अपेक्षा कुछ बड़ी वस्तु नहीं है। यदि अनन्त शून्य स्थान में जगतों की बहुतायत हो तो अनन्त समय में भी जगतों का क्रमागत आगमन होता है। जिस भांति आकाश में एक बादल के बाद दूसरा बादल आता है इसी भांति यह सितारों का सम्प्रदाय अर्थात् संसार अगणित अन्य सम्प्रदायों के बाद आया है जो इससे पहले हो चुके हैं और उन अगणित संसारों का अग्रगामी होगा जो इसके बाद आवेंगे। लगातार रूप विकार और घटनाओं का क्रमागम अनादि और अनन्त रूप से हुआ ही करता है।

यदि छोटी२ वायुमंडल सम्बंधी घटनाओं अर्थात् कुहिरा और बादलों की व्याख्या हम लोग प्राकृतिक सिद्धान्तों पर करते हैं तो क्या यह नहीं हो सकता कि हम संसारों वा जगत सम्प्रदायों की उत्पत्ति में भी उसी सिद्धान्त को काम में लावें? ये जगत सम्प्रदाय शून्याकाश में केवल बड़े२ बादल हैं और समयाकाश में कुछ ही स्थायी कुहिरे हैं। क्या कोई आदमी प्राकृतिक और अप्राकृतिक वस्तुओं को भिन्न करने वाली रेखा खींच सकता है? क्या वस्तुओं के विस्तार और आयु के अन्दाज़ पूर्णतः हमारे विचारों पर ही निर्भर नहीं हैं? यदि हम ओरियान के निब्यूला में होते तो कैसा भारी दृश्य देखते! भारी२ रूप विकृतियां, अग्नि मय कुहिर का जम कर जगत हो जाना, ईश्वर की त्वरित मौजूदगी और निरीक्षण ही योग्य बातें जान पड़ती हैं। पर यहां हमारे दूरवर्ती स्थल में जहां लाखों मील की दूरी हमारी नजरों में कुछ भी नहीं जचती और सूर्य वायुमंडल के चमकदार अणुओं से कुछ भी बड़े नहीं जान पड़ते, ऐसा बड़ा ओरियान निब्यूला भी एक अति ही हलके बादल से भी बहुत ही कम है। गैलीलियो ने ओरियान के नक्षत्र समूह के निजकृत वर्णन में उसे इस योग्य भी नहीं समझा कि उसका नाम भी लिखे। उन दिनों का बड़ा कट्टर ईश्वर वादी भी उसकी उत्पत्ति दूसरे कारणों से कहे जाने में कोई दोष की बात न समझता, और उसके रूपान्तर होने में ईश्वर की कुछ करतूत न समझने में कोई

और शनिश्चर के वलयों की बनावट का ढंग भी अनुमान में आ जाता है। हमें सूर्य की प्राकृतिक दशा की व्याख्या भी मिल जाती है और पृथ्वी और चन्द्रमा की दशाओं के परिवर्तनों की (जैसा कि उनकी भूगर्भ विद्या से प्रगट होता है) भी व्याख्या मिल जाती है। परन्तु उपरोक्त विशेष बातों में केवल दो छूटें ध्यान देने योग्य हैं। वे यूरेनस और नेपचून की दशायें हैं।

ऐसे नीहारिक पदार्थ समूह का अस्तित्व एक बार मान लेने से शेष सब बातें आवश्यकीय फलों की भांति निकल आती हैं। परन्तु इस ढंग में क्या एक बड़ा भारी एतराज़ नहीं है? क्या यह बात इन जगतों से उस सर्व शक्तिमान जगदीश्वर को निकाल बाहर नहीं करती जिसने उन्हें बनाया है?

पहले तो हमें इस विषय में निश्चित होना चाहिये कि ऐसे नीहारिक पदार्थ समूह का अस्तित्व मान लेने के लिये कोई दृढ़ प्रमाण है वा नहीं।

यह नीहारिक कल्पना प्रथम हरशल कृत उस दूर दर्शक यंत्र संबंधी खोज पर निर्भर है, कि आकाश में जहां तहां प्रकाश के पीले चमकीले टुकड़े छितरे हुये हैं जिनमें से कुछ इतने बड़े हैं कि वे बिना किसी यंत्र के सहारे साधारण आंख से भी देखे जा सकते हैं। इनमें से बहुत से तो बड़ी शक्तिमान् दूरबीन द्वारा देखे जाने पर, नक्षत्र समूह ही प्रमाणित हो सकते हैं, परन्तु उनमें से कुछ (जैसे कि ओरायन का बड़ा निव्यूला) अब तक के बने हुए अच्छे से अच्छे यंत्रों से भी ठीक नहीं जांचे गये।

जो लोग इस नीहारिका कल्पना को नहीं मानना चाहते थे वे कहते थे कि काम में लाई गई दूरबीनों की अपूर्णता के कारण उनकी ठीक जांच नहीं हो सकी। इन यंत्रो में दो स्पष्ट बातें देख पड़ती हैं। एक तो यह कि उनकी प्रकाश ग्राही शक्ति उनके लेन्स के व्यास पर निर्भर है, और दूसरी यह कि उनकी विवेचक शक्ति उनके दृष्टि सम्बंधी धरातलों की ठीक शुद्धता पर निर्भर है। बड़े यंत्रो में उनकी बड़ाई के कारण पहला गुण तो पूर्ण रीति से हो सकता है, परन्तु दूसरा गुण

अधार्मिक काम न मानता। यदि उसके विषय में हम यह प्रतिफल निकालते हैं तो वह प्रतिफल क्या होगा जो उस निव्यूला में बैठी हुई बुद्धि हमारे विषय में निकालेगी। वह निव्यूला हमारे सूर्य सम्प्रदाय की अपेक्षा लाखों गुना बड़ा है। वहां से हम लोग देखे ही नहीं जा सकते। इसलिये अत्यन्त ही तुच्छ हैं। क्या कोई ऐसी बुद्धि इस बात को आवश्यक समझेगी कि हमारी उत्पत्ति और हमारे पालन पोषण के लिये ईश्वर की करतूत की आवश्यकता है?

पशुओं की शृंखलाओं में यदि हम किसी प्रकार के पशुओं के प्रचार को जांचते हैं तो हम पाते हैं कि वह प्रचार आकस्मिक उत्पत्ति से नहीं, वरन् नियमानुसार रूपान्तर होता है । वह एक अपूर्ण रूप में प्रारम्भ होता है जो ऐसे रूपों के मध्य में होता है जिनका समय हो गया है और वे विनष्ट होने वाले हैं। धीरे २ क्रम२ से एक प्रकार के पशुओं के बाद दूसरे प्रकार के पशु अधिक पूर्णांग पैदा होते जाते हैं, यहां तक कि बहुत युगों के बाद वे अपनी पूर्णोन्नति को पहुँच जाते हैं। तदनन्तर उसी भांति क्रमशः उनका पतन होता है। इस भांति, यद्यपि दूध पिलाने वाले जन्तु भूगर्भ विद्या सम्बंधी तृतीय वा तृतीयान्तर समयों में विशेष रूप से पाये जाते थे, तथापि वे बिना पहिले से सूचना दिये हुये उन समयों में अकस्मात नहीं प्रगट हो गये थे। और उसके बहुत दिन पहिले द्वितीय समय में हम उनको अपूर्ण रूपों में पाते हैं और अपना पैर जमाने के लिये झगड़ा करते हुये पाते हैं। अन्त में अधिक उन्नति और अधिक अच्छे नमूनों में दूध पिलाने वाले जन्तु सर्वोपर हो गये।

यही हाल रेंगने वाले जन्तुओं का है जो कि भूगर्भ विद्या सम्बंधी द्वितीय समय के विशेष जन्तु थे । जैसे हम एक विलीन होते हुए दृश्य में उसकी विलीन होती हुई रेखाओं में से नवीन दृश्य के अस्पष्ट रूप को निकलते हुये देखते हैं, जो क्रमशः बढ़ता जाता है, बढ़ कर पूर्ण होता है और तदनन्तर दूसरे दृश्य के लिये स्थान देता हुआ विलीन हो जाता है। इसी भांति निःसन्देह रेंगने वाले जन्तु प्रगट हुये, पूर्णोन्नति को पहुंचे और क्रमशः विलीन होगये। न इन सब बातों में कोई बात आकस्मिक नहीं है। एक के बाद दूसरे परिवर्तन की छाया इस भांति पड़ती है कि उनका क्रमागत बढ़ाव स्पष्ट ज्ञात नहीं होता।

यह बात अन्यथा होही कैसे सकती थी ? गर्म खून वाले जीव- ऐसे वायुमण्डल में रही नहीं सकते थे जो कि प्राचीन काल की भांति कारबोनिक एसिड से भरा हुआ हो। परन्तु सूर्यताप के प्रभाव द्वारा वृक्षों के पत्तों ने वायु से यह हानि कारक वस्तु हटा ली। कोयले के

सूर्य सम्प्रदाय से अब हम एक और छोटी चीज़ तक उतरते हैं, अर्थात उसका एक छोटा भाग। अच्छा, मान लो कि पृथ्वी ही तक उतर आये। समय के प्रभाव से उसमें बहुत बड़े २ परिवर्तन हुये हैं। क्या वे परिवर्तन ईश्वरीय हस्ताक्षेप के कारण हुये हैं वा अव्यर्थ नियम के अटूट कर्तव्य से हुये हैं? प्रकृति का रूप हमारी दृष्टि के सामने सदैव बदला करता है, और भूगर्भविद्या के समयों में और भी अधिक आश्चर्य प्रद रीति से बदला है। परन्तु वे नियम जिनके कारण वे परिवर्तन हुए कभी तनक भी नहीं बदले। इन बड़े परिवर्तनों में भी वे अब अपरिवर्तनीय हैं। वस्तुओं का वर्तमान क्रम एक बड़ी भारी शृंखला की केवल एक कड़ी है जो अज्ञात भूतकाल तक पहुँचती है और अनन्त भाविष्य तक चली जाती है।

भूगर्भविद्या वा ज्योतिष विद्या सम्बन्धी प्रमाण हैं कि पृथ्वी और उसके उपग्रह का मिज़ाज वर्तमान काल की अपेक्षा बहुत प्रचीन काल में बहुत गर्म था। धीरे २ ठंढा होने लगा। यह काम ऐसे धीरे २ हुआ कि थोड़े दिनों तक कोई उसे जान ही नहीं सका, पर युगान्तर में वह प्रत्यक्ष प्रगट हुआ और गरमी निकल २ कर शून्य स्थान में चली गई।

किसी भांति के पदार्थ समूह का ठंढा होना चाहे वह छोटा हो या बड़ा निरन्तरित रीति से होता है, रुक २ कर वा ठहर २ कर नहीं होता। यह बात एक गणित विद्या सम्बन्धी नियम के अनुसार होती है। यद्यपि ऐसे बड़े परिवर्तनों के लिये जैसों का यहां पर विचार किया गयो है, न तो न्यूटन का और न डुलांग और पेटिट के गणितीय मियम काम में लाये जा सकते हैं। क्रमागत कमी के समय, हिमानी समय, या अन्य थोड़े दिन रहने वाले गर्म समय कभी २ बीच में आ जाते रहे, पर ये सब कुछ बात नहीं हैं। ये परिवर्तन चाहे स्थानान्तरों के कारण हुये हों। चाहे समय २ पर सूर्य की गरमी के घटने के कारण से हुये हों, बहुत ही तुच्छ बातें हैं। एक समय वद्ध सूर्य गरमी के धीरे २ घटाव में केवल एक गड़बड़ डाल

घटित घटना का प्रमाण है, और कुछ भविष्यत घटनाओं का कारण होने का प्रमाण दे रही है।

परन्तु यह प्रतिफल स्टोइक धर्मका आवश्यक सिद्धान्त है, वही स्टोइक धर्म जो यूनानी तत्वज्ञानियों का सम्प्रदाय था, जो जैसा कि मैं कह आया हूं बिपति के समय सहारा देता था और जीवन के परिवर्तनों में धीर्यवान पथदर्शक होता था। यह बात केवल बहुत से प्रख्यात यूनानियोंही के लिये न थी, वरन् कई एक रोम के बड़े तत्वज्ञानियों, राज्यनीतिज्ञों, सेनानायकों, और सम्राटों के लिये भी थी। यह एक ऐसा पंथ था जो दैवसंयोग को किसी बात में मानता ही न था और यह मानता था कि बेरोक आवश्यकता वश सब घटनायें पूर्ण भलाई की ओर बढ़ती चाली जाती हैं। यह ऐसा पंथ था कि जिसमें एकाग्र उत्साह, निठुर कठोरता, उग्र तप और वास्तविक पुण्य शीलता थी और जो सर्व साधारण जन समूह का पक्ष करता था. और कदाचित हम मानटेस्क के कथन का बिरोध न करेंगे जो यह कहता था कि स्टोइक धर्मावलम्बियों का विनाश मनुष्य जाति के लिये ऐक बड़ी भारी विपत्ति हुई, क्योंकि केवल वेही लोग अच्छे नागरिक और बड़े मनुष्य थे।

रोम का ईसाई धर्म जैसा कि पोप लोगों ने उसे बना रक्खा है इस नियम बद्ध शासन सिद्धांत का पूर्ण बिरोधी है। इस ईसाई सम्प्रदाय की शाखा का इतिहास अलौकिक चमत्कारों और ईश्वरीय मध्यस्थताओं की दिन चर्य्या है इन से प्रगट होता है कि सन्त महात्माओं की प्रार्थनाओं ने बहुधा प्राकृतिक धारा को (यदि ऐसी कोई धारा वास्तव में हो) रोक दिया है, और देवमूर्तियों और देव-चित्रों ने आश्चर्य्यप्रद काम किये हैं और हड्डियों, बालों और अन्य पवित्र स्मारकों ने अलौकिक चमत्कार कर दिखाये हैं। इन वस्तुओं में से बहुतों की सत्यता का प्रमाण केवल यही नहीं है कि उनकी पैदायश और उनका इतिहास अविरोधनीय ग्रंथ में लिखा हुआ है, वरन् उनकी अलौकिक चमत्कार करने वाली शक्तियां प्रगट की जाती हैं।

क्या वह बिलक्षण न्याय-युक्ति नहीं है जो एक कथित घटना

रूप में पृथ्वी का कारबन पृथ्वी के चारो ओर लिपट गया और आक्सीजिन प्रथक् हो गया, इस कारण वे जीवित रहे । जब वायु-मण्डल इस प्रकार सुधर गया तब समुद्र में भी परिवर्तन होने लगा। उसने अपने कारबोनिक एसिड का बहुत बड़ा भाग छोड़ दिया और वह चूना जो अब तक पानी में घुला हुआ था कठोर रूप धारण कर के तह में बैठ गया । जितना कारबन कोयला रूप से पृथ्वी में गड़ गया उतना ही चूना समुद्र जल से भी प्रथक होगया । पर यह बात आकार हीन रूप से नहीं हुई, वरन् बहुधा साकार जीवधारियों के रूप में हुई (अर्थात् उस चूने से अनेक सामुद्रिक जीव शंख, घोंघे इत्यादिक रूप से पैदा हुये)। सूर्यताप ने बहुत दिनों तक अपना काम जारी रक्खा, परन्तु उस काम को पूरा करने के लिये करोड़ों दिन की आवश्यकता थी । हानि कारी वायुमंडल बहुत धीरे २ स्वच्छ वायु मण्डल होगया, और वैसे ही धीरे २ सर्द खून वाले जीव बदल कर गर्म खून वाले जीव हो गये। परन्तु ये प्राकृतिक परिवर्तन एक नियम के अनुसार हो रहे थे और जीवधारियों के रूप परिवर्तन न तो आकस्मिक थे और न स्वेच्छाचारी ईश्वरीय कर्तव्यों से हुये थे। वे प्राकृतिक परिवर्तनों के उचित अनुगामी और अटल प्रतिफल थे, और इस लिये उन्हीं परिवर्तनों की भांति नियम के आवश्यक फल थे।

तब क्या यह जगत नियम से शासित किया जाता है वा ईश्वरीय कर्तव्यों से जो अकस्मात् घटनाओं का उचित क्रम तोड़ देते हैं ?

इस प्रश्न के विषय के निज विचार पूर्ण करने के लिये हम अब अन्त में उस ओर झुकते हैं, जो एक प्राकार से बहुत ही तुच्छ और दूसरे प्रकार से बहुत ही आवश्यक दशा है जो विचार करने योग्य है। क्या एतिहासिक रीति से मानव जातियां कुछ ऐसे चिन्ह प्रदर्शित करती हैं जिनसे ज्ञात हो कि वे एक अनिवार्य मार्ग में बढ़ रही हैं ? क्या कोई ऐसा प्रमाण है कि जातीय जीवन किसी अपरिवर्तनीय नियम के अधीन है ?

क्या हम यह प्रतिफल निकाल सकते हैं कि समाज में व्यक्तिक मनुष्य की भांति कोई अंग विभाग नास्ति से नहीं पैदा हो सकते,

है कि "एक ही अनादि अनन्त और अपरिवर्तनीय नियम है जो सब वस्तुओं पर और सब समयों में चलता है"।

दशवां अध्याय।

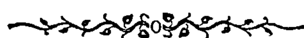
वर्तमान सभ्यता के साथ रोमन ईसाई धर्म का सम्बंध।

एक हजार वर्ष से अधिक तक रोमन ईसाई धर्म ने यूरोप की बुद्धि पर अपना अधिकार रक्खा और वही उसके फल के लिये उत्तर दाता है।

रिफारमेशन के समय रोम नगर की अवस्था से, और यूरोप महाद्वीप के घरू और जातीय जीवन की दशा से वह फल प्रगट है। दो प्रकार के शासनों–लौकिक और अध्यात्मिक–के समासमयिक अस्तित्व से यूरोप की जातियों ने बड़ा कष्ट उठाया। वे अज्ञान, व्यर्थ विश्वास और पीड़नाचार में डूबे रहे। कैथोलिक सम्प्रदाय के विफल होने की व्याख्या। पोपशासन का राजनैतिक इतिहास, वह पोपशासन अध्यात्मिक संयुक्त शासन से बदल कर स्वतंत्र साम्राज्य हो गया। कार्डीनल्स कालेज और क्यूरिया (Curia) का काम। वह आचार भ्रष्टता जो बहुत रुपया कमाने की आयश्यकता से पैदा हुई।

वे लाभ जो यूरोप को कैथोलिक राज्य काल में हुए, निश्चित इच्छाओं से नहीं हुये वरन् प्रसंग वश हुये।

मुख्य फल यह है कि कैथोलिक धर्म का राजनैतिक प्रभाव वर्तमान सभ्यता के लिये हानिकारी था)



चौथी शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी तक यूरोप की अवस्था और उन्नति के लिये रोमन ईसाई धर्म उत्तर दाता है। अब हमें इसकी जांच करना है कि उसने अपना कर्तव्य किस भांति किया। जो कुछ यहां पर वर्णन करना है उसे यूरोप ही की दशा तक सीमा बद्ध कर देना अच्छा होगा। यद्यपि पोप के राज्याधिकार से लेकर अमानुषीय उत्पत्ति तक ही के दावा का और उसके सर्वमान्य होने की आवश्यकता ही का वर्णन करना है, तथापि वह दावा सर्व मनुष्य

का प्रमाण किसी दूसरे अविवेचनीय उदाहरण में दिखलावे ?

बहुत अज्ञानता के युगों में चतुर ईसाई लोग अवश्य इन माने गये ईश्वरीय और चमत्कारिक हस्तक्षेपों के विषय में संदेह रखते रहे होंगे। प्रकृति की क्रमागत उन्नति में एक ऐसा सम्भावित बड़प्पन है जिसका पूर्ण प्रभाव हमारे ऊपर पड़ता है, और हमारे व्यक्तिक जीवन की घटनाओं में निरन्तरता का ऐसा स्वभाव है कि अपने पड़ोसी के जीवन में अलौकिक घटना के घटित होने पर हमें स्वाभाविक सन्देह होता है। एक समझदार मनुष्य भलीभांति जानता है कि उसके व्यक्तिक लाभ के हेतु प्रकृति की धारा कभी नहीं रोकी गई, उसके लिये अलौकिक चमत्कार नहीं हुये, वह अपने जीवन की प्रत्येक घटना को न्याय युक्त किसी विगत घटना का प्रतिफल बताता है जिसको वह कारण रूप मानता है और उस घटना को कार्य रूप समझता है। जब यह बात कही जाती है कि उसके पड़ोसी के हेतु ऐसे बड़े बड़े ईश्वरीय हस्तक्षेप सत्य कहे गये हैं तब उसे ऐसा ही विश्वास होता है कि उसका पड़ोसी या तो स्वयं ठगाया गया है या औरों को ठगना चाहता है।

तब जैसा कि पहिले से विचार लिया जा सकता है रिफारमेशन के समय में जब भाग्य और निर्वाचन के सिद्धान्त कतिपय बड़े २ ईश्वर वादी लोग मानते थे और कतिपय बड़े २ प्राटेस्टेंट सम्प्रदाय भी उन्हें स्वीकार करते थे, कैथोलिक लोगों के अलौकिक चमत्कारिक हस्तक्षेप वाले सिद्धान्त को बड़ा कठिन धक्का लगा। स्टोइक लोगों की कठोरता सहित कालविन कहता है कि "हम लोग आदि ही से चुन लिये गये थे, जब संसार की नीव तक भी न पड़ी थी और यह चुनाव हमारे गुणों के कारण नहीं हुआ था वरन् ईश्वरेच्छा के तात्पर्य के अनुसार"। इस बात के कथन में कालविन इस विश्वास को प्रगट करता है कि ईश्वर ने अनादि काल से होने वाली घटनाओं के विषय में आज्ञा दे रक्खी है। इस भांति बहुत समय व्यतीत हो जाने के अनन्तर दूसरी शताब्दी की 'वैसीलीडियन' और वैलिंटीनियन नामक ईसाई सम्प्रदायों के विचार फिर प्रकाशित होते

करों में पूर्ण परिवर्तन हो चुका था। केवल एक ही बात अर्थात् असहनशीलता में कुछ परिवर्तन न हुआ था। यूरोप के धार्मिक जीवन का केन्द्र होने का दावा करके पोप का शासन सदैव बड़े हठ के साथ किसी अन्य धर्म के अस्तित्व को सहन नहीं करता था तब भी दोनों अर्थात् राज्यनैतिक और अध्यात्मिक दशाओं में वह नस२ से बिगड़ा हुआ था। इरैसमिस और ल्यूथर ने पोपों कृत देव निन्दायें सुन कर बड़ा आश्चर्य्य किया था और उस नगर की नास्तिकता देख कर कांप उठे थे।

रैंन्के नामक इतिहासकार ने, जिसका मैं इन घटनाओं के लिये बहुत ऋणी हूं, उस बड़े राज्यनगर के भ्रष्टाचरण का बहुत अच्छा वर्णन किया है। अधिकतर पोप लोग अपने चुनाव के समय तक बूढ़े हो जाते थे, इसलिये उनके अधिकार सदैव दूसरों के हाथों में चले जाते थे। प्रत्येक चुनाव, आशा और प्रतीक्षाओं के कारण, एक बिद्रोह सा हो जाता था। जिस समूह में प्रत्येक जन उन्नति करना चाहता है और सब ही जन सब ही पदों के अभिलाषी होते हैं उसका आवश्यक फल यह होता है कि प्रत्येक मनुष्य दूसरे को पीछे हटाने में लग जाता है। यद्यपि उस नगर की आबादी रिफारमेशन के प्रारम्भ में घट कर ८०००० रह गई थी, तब भी बहुत से पदाधिकारी लोग थे और उनसे भी अधिक उन पदों के अभिलाषी लोग थे। पान्टिफ का पद पाने में सफल मनोरथ मनुष्य के हाथ में हज़ारों पद देने का अधिकार रहता था। उनमें से बहुत से पद ऐसे होते थे जिनमें से पदाधिकारी लोग अखेदित रीति से निकाले हुये होते थे और बहुत से पद बेचने के लिये नये बना लिये जाते थे। पदाभिलाषी की योग्यता और ईमानदारी की कभी जांच नहीं की जाती थी, जिन बातों पर विचार किया जाता था वे ये थीं कि उसने समाज की क्या सेवा की है वा कौन २ सी सेवायें करने योग्य है? अपने चुनाव के लिये कितना रुपया दे सकता है? एक अमेरिका निवासी पाठक इन सब बातों को भलीभांति जानता है, क्योंकि प्रत्येक प्रेसीडेंट के चुनाव में वह इसी प्रकार की बातें देखता है।

जाति की दशा के लिये उत्तर दाता समझा जा सकता है। दक्षिणीय और पूर्वीय एशिया के बड़े और माननीय धर्मों के सामने ईसाई धर्म की शक्तिहीनता एक ऐसा आवश्यक और शिक्षाप्रद विषय उपस्थित करेगी जो विचारणीय होगा, और हमें इस प्रतिफल तक पहुँचा देगा कि ईसाई धर्म ने अपना प्रभाव केवल वहीं डाला है जहां रोमन राज्य का प्रभाव फैला हुआ था। परन्तु यह एक राज्यनैतिक प्रतिफल है, जिसको ईसाई धर्म तुच्छ समझ कर अस्वीकार करता है।

निःसन्देह रिफारमेशन के प्रारम्भ में यूरोप में बहुत से ऐसे मनुष्य थे जो उस समय की जातीय दशा का, प्राचीन समय की जातीय दशा से मीलान करते थे। सदाचरण नहीं बदले थे, बुद्धि में उन्नति नहीं हुई थी, और जातीयता में भी कुछ उन्नति नहीं हुई थी। स्वयं सनातन नगर (रोम) से उसकी विभूतियां विलीन हो गई थीं। वे संगमरमर से पटी हुई गलियां, जिनका आगस्टस ने किसी समय अहंकार किया था, गायब हो गई थीं। मन्दिर, टूटे फूटे स्तम्भ, और वे बड़े २ जलपथों के लम्बे गुप्त मार्ग जो ऊजड़ कैम्पैगना पर से जाते थे, एक शोक प्रद दृश्य दिखाते थे। जिन कामों में वे लगा दिये गये थे, उसी के अनुसार रोम के किले का नाम "बकरों की पहाड़ी" और रोम के न्यायालय का नाम (जहां से दुनिया भर के लिये क़ानून निकला करते थे) "गायों का खेत" हो गया था। सीज़र नामधारी राजाओं का महल मिट्टी के ढेर से ढक गया था जिसके ऊपर पुष्प प्रद झाड़ियां उगी हुई थीं। कराकल्ला के हम्माम-खाने अपने बरामदों, बगीचों और कुण्डों सहित जल नलों के विनिष्ट हो जाने के कारण बहुत दिनों से वे काम हो चुके थे। उस बड़े भारी महल के खंडहर पर "सुगंधित वृक्षों के कुंज और पुष्पमय कुंज फैले हुये थे जो बड़े २ चबूतरों पर पेंचदार भूलभुलैयां बनाते थे और बड़ी ऊंची मेहरावें आकाश में लटकती थीं"। कालीसियम नामक नाच घर में से, जो कि रोमन खंडहरों में से सर्वाधिक बड़ा खंडहर था, केवल एक तिहाई के लगभग रह गया था। जिस नाटयशाला में किसी समय लगभग ९०००० दर्शक आराम से बैठ सकते थे, वही मध्य

बिवाह न किया । ऐसे ही परिवर्तन अमेरिका महाद्वीप में भी हुये हैं। जिन स्पेन वालों ने सभ्य इंडियन्स (अमेरिका के आदिम निवासी) को निराश कर दिया, उन्हीं की मारकाट और अत्याचारी निर्दयता से मेक्सीको की जन संख्या बहुत शीघ्र बीस लाख घट गई। यही बात पेरू में भी हुई।

नार्मन बिजय के समय इँग्लैंड की जन संख्या लगभग बीस लाख के थी। पांच सौ वर्ष में वह कठिनता सहित दूनी हुई थी। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि यह अवर्द्धक दशा कुछ२ पोपों की उस गूढ़ नीति के कारण हुई थी, जिसके अनुसार पादरियों में अविवाहित रहने की प्रथा थी। उस नीति से "उचित उत्पादक शक्ति" पर अवश्य प्रभाव पड़ा, परन्तु "वास्तिक उत्पादक शक्ति" पर नहीं। जिन लोगों ने इस विषय की अच्छी भांति छान वीन की है उन्हें अब से बहुत पहिले पूर्णतः ज्ञात हो चुका था कि प्रगट रूप से अविवाहित रहना मानौ गुप्त रूप से दुराचारी होना ही है। विशेष कर इसी बात ने ग्रहस्थों को और इंग्लैंड की सरकार को इस बात पर दृढ़ सम्मत कर दिया कि बैखानस विहाराश्रम मिटा दिये जायें। यह बात खुल्लमखुल्ला कही जाती थी कि इँग्लैंड में एक लाख स्त्रियां ऐसी थीं जिनको धर्मगुरुओं ने दुराचारिणी कर डाला था।

मैंने निज कृत "अमेरिकन सिविल वार" नामक ग्रंथ में इस विषय में अपने कुछ विचार प्रगट किये हैं जिनको मैं यहां भी उद्धृत करने का साहस करता हूं। "तब इस जन संख्या की अवर्द्धनीय दशा का क्या अर्थ है ? इसका अर्थ यह है कि, भोजन कठिनता से मिलता है, पहरने के कपड़े काफ़ी नहीं हैं, लोग मैले कुचैले रहते हैं, निवासस्थान ऐसे हैं जो ऋतुओं के अनुकूल नहीं हैं, सरदी और गरमी के प्रभाव से और विषैली भाफ से बहुत आदमी मरते हैं, स्वच्छता के नियम नहीं हैं, बैद हकीम नहीं हैं, देव मन्दिर कृत नीरोगता व्यर्थ है, और अलौकिक चमत्कार जिन पर समाज का बड़ा भरोसा है केवल छल हैं; या संक्षेप में यों कहिये कि इन सब दुःखों, आवश्य-

सभा की ओर से पोप का चुनाव उसी भांति होता था जैसे जातीय सभा की ओर से अमेरिका के प्रेसीडेंट का नाम निर्वाचन होता है। दोनों दशाओं में देने के लिये बहुत से पद होते हैं।

"विलियम आफ माम्सबरी कहता है कि मेरे समय में रोमन लोग धन के बदले ही सत्य और पवित्र वस्तुएं बेचते थे। उसके समय के अनन्तर कुछ उन्नति नहीं हुई। धार्मिक सम्प्रदाय भ्रष्टाचारी हो कर रुपया कमाने का द्वारा हो गई। इटली में बहुत रुपया इकट्ठा किया गया, इर्दगिर्द वाले और अनिच्छुक देशों से भी अनेक प्रकार के बहानों से बहुत धन खींचा गया। इन ढंगों में से सब से अधिक हानिकारी ढंग पाप हेतु मुक्तिपत्रों की बिक्री ही थी। रोमन धर्म लोगों को लूटने का एक हुनर हो गया था।

एक सहस्र वर्ष से अधिक तक मुख्य धर्माध्यक्ष लोग उस नगर के शासक रहे थे। वास्तव में उस नगर में बहुत से ऐसे भी बिनाश काण्ड हुये थे जिनके लिये वे धर्माध्यक्ष उत्तरदाता न थे, परन्तु इस बात के उत्तर दाता वे अवश्य थे कि उन्होंने उस नगर की साम्पत्तिक और सदाचार सम्बन्धी उन्नति करने के लिये कभी कोई बलवान और लगातार उद्योग नहीं किया। इस विषय में संसार के लिये उत्तम उदाहरण होने के स्थान में वह एक घृणास्पद दशा का उदाहरण हो गया। धीरे २ खराबी बढ़ती ही गई, यहां तक कि रिफारमेशन के समय में ऐसी दशा थी कि कोई पवित्रात्मा विदेशी ऐसा न था जो उसे देख कर कांप न जाय।

पोप शासन ने, विज्ञान को अपने झूठे दावों के बिलकुल विरुद्ध कहते हुये भी, पिछले दिनों में कला कौशल को उत्तेजना देने की ओर अपना ध्यान लगाया था। परन्तु गान विद्या और चित्र विद्या, मनुष्य जीवन के उत्तम श्रृंगारिक पदार्थ होने पर भी, कोई ऐसी बलवान शक्ति नहीं रखतीं जो एक शक्तिहीन जाति को शक्ति सम्पन्न जाति बनादें, और न वे कोई ऐसी विद्याएं हैं जो सदैव काल के लिये जातियों की साम्पत्तिक भलाई वा सुख शान्ति को निश्चित कर सकें। इसलिये रिफारमेशन के समय में एक विचारवान मनुष्य के

इस बात पर आश्चर्य करना चाहिए कि प्लेग के कतिपय आक्रमणों में इतनी अधिक मृत्यु हुई कि जीवित मनुष्य मृतकों को दफ़ना नहीं सकते थे ? उस प्लेग से जो सन् १३४८ ई० में पूर्वीय देशों से व्यापारी मार्गों द्वारा आया था, और सर्व यूरोप में फैल गया था फ्रांस देश की एक तिहाई जन संख्या विनष्ट हो गई थी।

किसानों की और नगर निवासी जन साधारण की ऐसी दशा थी। भले मनुष्यों की भी इससे कुछ अच्छी दशा न थी "विलियम आफ माम्सबरी" ऐंग्लोसैक्सन लोगों के नीच पन का वर्णन करते हुये कहता है कि "उनके भले मनुष्य लोग, जो बड़े पेटू और व्यभिचारी हुआ करते थे, कभी गिरजाघरों में नहीं जाते थे, वरन् प्रातः कालिक बंदनाएं और सार्वजनिक बंदनायें एक जल्दीबाज़ पुरोहित उनकी कोठरियों ही में उनके उठने से पहले और बिना उनके सुने हुये ही उन्हें पढ़ कर सुना जाता था। जन साधारण अधिक शक्ति-वान मनुष्यों के शिकार थे। उनकी सम्पत्ति छीन ली जाती थी, उनके शरीर दूर देशों में ले जाये जाते थे और उनकी अविवाहिता कुमारियां या तो वेश्यालयों में पहुँचाई जाती थीं या दासियों की भांति बेंच डाली जाती थीं। रातदिन मद्य पान करना ही सब का काम था। इस हेतु वे बुराइयां जो मद्यपान की संगिनी हैं पैदा हुईं और उन्होंने पुरुषों को ज़नाना बना डाला। बैरन लोगों के क़िले लुटेरों के लिये गुफायें हो रही थीं। एक सैक्सन इतिहास कर्त्ता वह हाल लिखता है जिस भांति पुरुष और स्त्रियां पकड़े जाते थे और उन क़िलों में लाये जाते थे। अँगूठों वा पैरों के बल लटकाये जाते थे। उनके शरीर से आग छुवाई जाती थी, गांठदार रस्सियां उनके शिरों में लपेटी जाती थीं और धन आकर्षण के लिये बहुत से अन्य भांति के कष्ट दिये जाते थे।

यूरोप भर में बड़े२ और लाभकारी राजनैतिक पदों पर पादरी ही भरे थे। प्रत्येक देश में दो प्रकार का शासन था अर्थात, (१) देशी रीति का जो लौकिक राज्य करते थे और (२) विदेशी रीति का जिसमें पोप का अधिकार माना जाता था। यह रोमन प्रभाव

कताओं और कष्टों की लम्बी सूची का खुलासा अर्थ थोड़े में "अधिक मृत्यु" है।

"परन्तु केवल इतना ही नहीं, व्ररन् उसका कुछ और भी अधिक अर्थ है, अर्थात् सन्तानों की उत्पत्ति की कमी। और यह कमी क्या प्रगट करती है? यही न कि लोग विवाह नहीं करते, व्यभिचारी जीवन बिताते हैं, गुप्त पाप करते हैं, और समाज का आचरण भ्रष्ट है।

एक अमेरिका निवासी को, जो एक ऐसे देश में रहता है जो अभी थोड़े दिन हुये एक अनन्त और अगम्य जंगल था, परन्तु जो अब हाल में इतनी जन संख्या से भर गया है कि प्रत्येक २५ वर्ष में दुगुनी संख्या हो जाती है, यह वास्तिक और अनिश्चित जीवन का भयंकर अपव्यय अवश्य ही ऐक महान आश्चर्य प्रद घटना ज्ञात होगी। वह उत्सुकता से यह पूछने लगेगा कि वह प्रथा कैसी रही होगी जो समाज को सुमार्ग दर्शाने और उन्नति करने का छल तो करती थी, परन्तु जो इस बड़े विनाश की उत्तर दाता कही जा सकती है। अपने प्रतिफलों की बढ़ती द्वारा युद्ध, महामारी और अकालों की भी उत्तर दाता समझी जा सकती है। छली इस लिये कहा क्योंकि लोग वास्तव में विश्वास करते थे कि वह प्रथा उनके सर्वोच्च लौकिक स्वार्थ साधन करा देती थी। उस समय से इस समय में अब कितना भेद है! इँगलैंड में अब उतनी ही भूमि उस समय की जन संख्या से दश गुणी जन संख्या का पालन पोषण करती है और अगणित मनुष्य विदेशों को भेजती है। जो मनुष्य प्राचीन समय पर आदर की दृष्टि डालता हो उसे स्वयं अपने चित्त में निश्चय करना चाहिये कि ऐसी प्रथा किस योग्यता की रही होगी"।

यूरोप की जन संख्या में इस भाँति के परिवर्तनों के साथ ही साथ निवासस्थानों में भी परिवर्तन हुये हैं। रोमन राज्य में ईसाई धर्म की स्थापना होने के समय से जन संख्या के केन्द्र उत्तर की ओर हो गये थे। उस समय से अब कला कौशल सम्बन्धी उद्योग के बढ़ जाने के कारण वे केन्द्र पश्चिम की ओर हो गये हैं।

प्राकृतिक मूल्य मृत्यु संख्या द्वारा निश्चित किया गया है। उन दिनों में मृत्यु संख्या सम्भवतः तेईस में एक थी, और अब वर्तमान समय की प्रभावशाली रीति के समय में चालीस में एक है।

यूरोप की सदाचारी दशा का उदाहरण भली भांति उस समय मिला जब कोलम्बस के साथियों द्वारा वेस्ट इंडीज़ का फिरंग नामक रोग यूरोप में प्रचारित हुआ। वह रोग बड़ी शीघ्रता के साथ फैल गया। सब श्रेणियों के लोग अर्थात् पवित्र पिता दशम लियो से लेकर गलियों के भिखमंगों तक उस लज्जास्पद रोग से ग्रसित हुये। बहुतों ने अपनी इस मुसीबत के लिये यह बहाना बताया कि यह रोग सर्वत्र व्यापी है जो हवा की बनावट में कुछ खराबी आजाने से पैदा हुआ है, परन्तु वास्तव में उसका प्रचार मनुष्य की बनावट में उस कमजोरी के कारण था जो उन धर्म गुरुओं से भी न हटाई जा सकी थी जिनकी शिक्षा में वे रहते थे।

पवित्र स्थानों के औषधेय गुणों में विशेष स्मारकों के औषधेय गुणों को भी मिला देना चाहिये। ये स्मारक कभी२ बहुतही विलक्षण प्रकार के होते थे। कई एक मठ ऐसे थे जहां हज़रत ईसा का कांटों वाला मुकुट था। ग्यारह मठों में वह भाला था जिसने हज़रत ईसा की बगल को छेद डाला था। यदि कोई मनुष्य इस बात के कहने का साहस करता कि वे सब वही सच्चा भाला नहीं हो सकते तो वह नास्तिक कहा जाता। धर्म युद्धों के समय में नाइट टेम्पलर लोगों ने जिरोसिलम से कुमारी मरियम की दूध की बोतलें युद्धकारी फौजों में ले जा कर बड़ा लाभदायक व्यापार किया था। वे उन बोतलों को बड़े २ दामों पर बेंचते थे। ये बोतलें बड़े पवित्र भाव से बहुत से बड़े २ धार्मिक स्थानों में रक्खी गईं थीं। परन्तु कदाचित इन सब छलों में से कोई भी भ्रष्टता में उस छल से बढ़कर न होगा, जो जिरोसिलम में एक मठवालों ने किया था, जो देखने वालों को पवित्र आत्मा की एक अँगुली दिखाते थे। वर्तमान समाज ने चुपके १ इन अपवादक वस्तुओं पर अपनी दण्डाज्ञा प्रचारित कर दी। यद्यपि उन्होंने किसी समय हज़ारों सत्यनिष्ट लोगों की पवित्र आत्मिकता को पोषण

स्वभावत: स्थानिक प्रभाव से बढ़ कर था । और एक मनुष्य की सर्वोपर इच्छा सर्व महाद्वीप की जातियों पर एक साथ प्रगट करता था, और अपनी मज़बूती और ऐक्य के कारण बहुत शक्तिवान हो गया था। स्थानिक शासन अर्थात् देशीय राजाओं का प्रभाव अवश्य ही बलहीन था, क्योंकि वह साधारणत: पड़ोसी राज्यों की प्रति-स्पर्द्धाओं और राज्य सिंहासनाभिलाषियों के चातुर्य्ययुक्त विरोधों से बलहीन कर दिया गया था । किसी एक मौके पर भी यूरोप के भिन्न २ राज्य अपने एक शत्रु के विरुद्ध मिल कर काम नहीं कर सके । जब कभी इस भांति का काम पड़ा तब वे चातुर्य्यता से एक २ करके आक्रमित किये गये और अधिक तर पराजित ही किये गये । दिखाने के लिये तो पोप के हस्तक्षेप का तात्पर्य सर्व लोगों की आचरण सम्बंधी भलाई को पुष्ट करना था, परन्तु वास्तविक तात्पर्य्य बहुत सा धन वसूल करने और बहुत से पादरियों की परवरिश करने का था। इस भांति जो धन खींचा जाता था वह बहुधा उस धन से कई गुना होता था जो देशीय राजा के ख़ज़ाने में जाता था। इस भांति, उस समय पर जब चौथे इनोसेंट ने इँगलेंड की धर्म सम्प्रदाय से इटली निवासी ३०० अधिक पादरियों के पालन पोषण के लिये धन मांगा था और यह कहा था कि मेरे एक भतीजे को (जो केवल एक बालक था) लिंकन के बड़े गिरजाघर में आदरणीय पद मिलना चाहिए, यह बात जानी गई थी कि जो धन परदेशी पादरी इँगलेंड से प्रति वर्ष खींच लेजाया करते थे उस धन से तिगुना था जो स्थानीय राजा के कोश में जाता था ।

इस भांति जब ऊंचे दरजे के पादरी लोग तो प्रत्येक पाने योग्य राज पद को ले लेते थे, और छोटे दरजे के पादरी अपने दास दासियों की गणना से ही बढ़ जाने का उद्योग करते थे, (लोग कहते हैं कि किसी २ पादरी के अधीन २०००० से कम गुलाम न थे), तब भिखमंगे फ़क़ीर चारो ओर घूमते फिरते थे और निर्धन मनुष्यों के पास जो कुछ बच रहता था उसमें से भी हिस्सा लेते थे । अनुत्पादकों का समूह बहुत बढ़ गया था और वे विदेशीय शक्ति की अधीनता मानते

तलब कर सकता है। जो मनुष्य उसकी आज्ञा न माने उसे मार डालना चाहिये, प्रत्येक क्रिश्चियन-धर्म-दीक्षित मनुष्य उसकी प्रजा है, और चाहे उसकी इच्छा हो वा न हो उसे जीवन पर्य्यन्त प्रजाही रहना पड़ेगा। बारहवीं शताब्दी के अन्त तक पोप लोग पीटर के प्रतिनिधि समझे जाते थे। तृतीय इनोसेंट के बाद वे लोग ईसा के प्रतिनिधि समझे जाने लगे।

परन्तु प्रत्येक स्वतंत्र राजा को राज्यकर की आवश्यकता होती है, और पोप लोग भी इस नियम के बाहर नहीं थे। हिल्डीब्रेंड के समय से पोप-प्रतिनिधियों को प्रथा प्रचलित हो गई थी। कभी २ उनका काम यह होता था कि वे गिरजाघरों का निरीक्षण करें, कभी २ विशेष कामों पर भेजे जाते थे, परन्तु इस बात की असीम शक्ति उन्हें सदैव के लिये प्रदान की गई थी कि वे दूसरे देशों से धन खींच कर ऐल्प्स पहाड़ के इस ओर इटली देश में लावें। और चूंकि पोप केवल कानून ही नहीं बना सकता था, वरन उन क़ानूनों के कार्य को रोक भी सकता था, इस लिये कानूनों को भंग कराने के हेतु धन देने के नियम का भी प्रचार किया गया। रोम को कुछ कर देने पर सन्यासियों के मठ धर्माध्यक्षीय अधिकार से छोड़ दिये जाते थे। इस समय पोप जगत पूज्य बिशप हो गया था। वह एक ही साथ अपने सब राज्यों पर अपना अधिकार रखता था, और प्रत्येक अभियोग अपने न्यायालय में ले सकता था। बिशप लोगों के साथ उसका सम्बंध वैसा ही था जैसा कि एक स्वतंत्र राजा का अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ होता है। कोई बिशप केवल उसकी आज्ञा से पद त्याग कर सकता था, और इस भांति पद त्यागने से उस बिशप की जागीर पोप की सम्पत्ति हो जाती थी। नियमभंगानुशासनों के हेतु, पोप के पास अपील करने को लोग हर प्रकार उत्तेजित किये जाते थे। क्यूरिया के सामने ऐसे हज़ारों कार्य्य आये और उनसे रोम को बहुत धन लाभ हुआ। बहुधा जब पुरोहितवृत्ति के झगड़ालू दावेदार उसके पास आते तब पोप उन सब को हटा कर अपने किसी प्रिय आश्रित को उस स्थान पर स्थापित करता। बहुधा पदाभिलाषियों को

किया था, पर अब वे इतनी तुच्छ समझी जाती हैं कि किसी अजायब घर में रक्खे जाने के लिये जगह नहीं मिलती।

यूरोप भर में धार्मिक सम्प्रदाय की संरक्षा में जो इस भांति की बड़ी विफलता देख पड़ती है उसकी क्या व्याख्या की जाय? यदि रोम में यूरोप महाद्वीप भर की अध्यात्मिक और पदार्थिक सम्पत्ति के संरक्षण के लिये निरन्तर उद्योग किया जाता तो यह फल न होता जो कि हुआ, और यदि पीटर का उत्तराधिकारी जो संसार भर का आचार्य्य समझा जाता था अपनी प्रजा की पवित्रता और सुख शान्ति के लिये दत्तचित्त होकर काम करता तो ऐसा न होता जैसा कि हुआ।

इसकी व्याख्या मिलना कठिन बात नहीं है। वह व्याख्या पाप और लज्जा की कथाओं में भरी है। इस लिये निम्नलिखित वाक्य खण्डों में कैथोलिक ग्रंथकारों द्वारा प्राप्त विवेचक घटनाओं का देना ही मैं अधिक पसन्द करता हूं, और वास्तव में जहां तक सम्भव होगा मैं उन घटनाओं का वर्णन उन्हीं ग्रंथकारों के शब्दों में रक्खूंगा।

जो कथा मैं वर्णन करना चाहता हूं वह एक संयुक्त राज्य का बदल कर एक स्वच्छन्द साम्राज्य हो जाने की कथा है।

प्राचीन काल में प्रत्येक गिरजा के कार्य कर्त्ता बिना इन विचारों के कि सार्वजनिक सम्प्रदाय से उनकी सम्मति सब आवश्यक बातों में मिलती है या नहीं, पूर्ण स्वच्छन्दता और स्वाधीनता के साथ निज सम्बंधी विषयों का प्रबंध करते थे, अपनी पुरानी रीतियों और सिद्धान्तों को सुरक्षित रखते थे और सब प्रकार के झगड़े जो सर्व सम्प्रदाय से असम्बंधित होते और बहुत आवश्यक होते, तुरन्त अपने यहां तै कर लेते थे।

नवीं शताब्दी के आरम्भ तक रोमन सम्प्रदाय की बनावट में कोई परिवर्तन न हुआ था। परन्तु ८४५ ई० के लगभग फ्रान्स के पश्चिम में आईसीडोरियन जाली स्मृत संहिता बनाया गया। इस जाली संहिता में लगभग एक सौ झूठे हुक्म प्राचीन पोपों के थे, और कुछ अन्य गिरजाघरों के बड़े पदाधिकारियों के मिथ्या वाक्य और कुछ धर्म सभाओं के नियम थे। उस जालसाज़ी ने पोप का

ने ये निर्वाचन कार्डिनल सभा की दो तिहाई सम्मतियों तक ही सीमाबद्ध कर दिए थे, और उनको पुष्ट करने का अधिकार जरमन नरेश को प्रदान किया था। लगभग दो शताब्दियों तक कार्डिनल लोगों के कुलीन-वर्गीय राज्य और पोपीय स्वच्छन्द राज्य के बीच में आधिपत्य के लिये झगड़ा होता रहा था। कार्डिनल लोग पूर्ण रीति से चाहते थे कि पोप को अपने विदेशीय राज्य में स्वच्छन्द होना चाहिये, परन्तु वे इस उद्योग में कभी न चूकते थे कि अपनी सम्मतियां देने के पहिले उससे प्रतिज्ञा करा लें कि वह उनको शासन विधान में एक बड़ा भाग प्रदान करेगा। पोप का निर्वाचन हो जाने के अनन्तर और प्रतिष्ठित हो जाने के पहले उसे विशेष२ ऐसी शर्तें मानने की शपथ करना पड़ती थी जैसे कि आय को कार्डिनलस लोगों में बांट देना, और ऐसी प्रतिज्ञा करना कि वह उन्हें कभी नहीं निकालेगा, वरन् इस बात की आज्ञा देगा कि वे लोग वर्ष में दो बार सभा करके बिबेचना करें कि उसने अपनी शपथ पूर्ण की वा नहीं। परन्तु पोप लोग बार२ अपनी शपथें तोड़ते थे। एक ओर तो कार्डिनल लोग धार्मिक प्रबन्ध और धन लाभों में बहुत बड़ा भाग लेना चाहते थे और दूसरी ओर पोप लोग धन वा अधिकार देने में नाहीं करते थे। कार्डिनल लोग विभव और अपव्यय में प्रख्यात होना चाहते थे, और इसके लिये धन की आवश्यकता थी। एक उदाहरण तो ऐसा मिलता है कि एक कार्डिनल के पास पांच सौ से कम जागीरें न थीं। उनके मित्रों और सेवकों को भी कुछ मिलना चाहिये। और उनके वंश वालों को भी धनवान होना चाहिए। ऐसा कहा जाता था कि फ्रांस देश की कुल आमदनी उनके खर्चों को पूरा करने के लिये काफी न थी। कभी२ ऐसा होता था कि उनके लड़ाई झगड़ों के कारण वर्षों तक पोप का निर्वाचन ही न होता था। ऐसा ज्ञात होता था मानो वे यह प्रगट करना चाहते थे कि बिना पोप के भी धार्मिक सम्प्रदाय बहुत सरलता से चलाई जा सकती है।

ग्यारहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में रोमन धर्म सम्प्रदाय, रोमन राज्य दर्बार होगया। उन ईसाई भेड़ों के बजाय जो चुप चाप

रोम नगर में कई वर्ष विताना पड़ते थे, और या तो वे वहीं मर जाते थे या सर्वव्यापी आचार भ्रष्टता का स्पष्ट विचार अपने साथ लेकर अपने देश को लौट जाते थे। इन अपीलों और इन कार्य्यों से अन्य देशों की अपेक्षा जरमनी देश ने अधिक कष्ट उठाया, और यही कारण है कि वह देश अन्य सब देशों की अपेक्षा धार्मिक सुधार के लिये सर्वाधिक तय्यार था। तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी में पोप लोगों ने शक्ति संग्रह में बहुत बड़े कदम बढ़ाये। पुरोहिती वृत्तियों के लिये अपने प्यारे आश्रितों की सिफारिश करने के बजाय अब वे आज्ञापत्र निकालने लगे। उनके इटली निवासी साथियों को अवश्य पुरस्कार मिलना ही चाहिए। सिवाय इसके कि उनको अन्य देशों में अच्छे २ पद दिलाये जायँ और कोई बात उनकी इच्छायें पूर्ण करने के लिये की नहीं जा सकती थीं। रोम में बहुत से झगड़ालू दावेदार मर गये और जब उनकी मृत्यु उस नगर में हुई तब पोप उन वृत्तियों के दे डालने के अधिकार का दावा करने लगे। अन्तत: यह मान लिया गया कि उसे बिना किसी प्रकार के भेद के धर्म सम्प्रदाय सम्बन्धी सब ही पदों के देने का अधिकार है। और यह भी मानलिया गया कि बिशप लोग उसकी अधीनता की जो शपथ करते थे उस शपथ का तात्पर्य्य राजनैतिक और धार्मिक अधीनता थी। ऐसे देशों में जहां दो भांति के शासन प्रचलित थे इस बात ने अध्यात्मिक पक्षवाले शासन की शक्ति को बहुत बढ़ा दिया।

इस अधिकार निमज्जन को पूर्ण करने के हेतु प्रत्येक प्रकार के अधिकार अखेदित रीति से विनष्ट कर डाले जाते थे। इस विषय में भिखमंगी श्रेणी के लोग अति योग्य सहायक थे। पोप और ये भिखमंगे एक ओर थे और बिशप और पुरोहित कर्म कारी पादरी लोग दूसरी ओर थे। रोम के राज्य दरबार ने धार्मिक सभाओं, प्रधान धर्माध्यक्षों, बिशपों और जातीय गिरजाघरों के अधिकार छीन लिये थे। पोप के प्रतिनिधियों से सदैव सताये जाने के कारण बिशप लोगों ने अपनी धर्माध्यक्षीय जागीरों को ठीक रखने की सब इच्छाएं छोड़ दी थीं, और भिखमंगे योगियों से सदैव सताये जाने के

सच्चरित्र रह सकता और एकान्त स्थान में भी पवित्रात्मा हो सकता। नीले रंग के मखमली लबादे और कार्डिनलोगों की श्वेत ऊनी टोपियां वास्तव में दुष्टता का ढकना हो गई थीं।

सम्प्रदाय का ऐक्य और उसकी शक्ति पवित्र भाषा की भांति लैटिन भाषा का प्रयोग चाहती थी। इस भाषा द्वारा रोम नगर ठीक यूरोपियन बना रहा, और इस योग्य बना रहा कि सब जातियों से अपना सम्बन्ध बनाये रहे। इस भाषा ने रोम नगर को उससे अधिक शक्ति प्रदान की जितने ईश्वरीय अधिकार दा वह दावा करता था, और चूंकि वह बहुत कुछ करने का दावा करता है उस पर यह अभिशाप लगाया जा सकता है कि इतना अधिक अधिकार पाकर भी जितना कि उसके अनन्तर किसी नगर को नहीं मिला उसने बहुत अधिक काम नहीं किया। यदि मुख्य पान्टीफ लोग पूर्णत: अपने लाभों और लोकाचारों ही के स्थिति रखने में न लगे रहते तो वे सर्व यूरोप महाद्वीप को एक मनुष्य की भांति उन्नति कर सकते। उनके कर्मचारीगण बिना कठिनता प्रत्येक देशमें चले जाते थे और आयरलैंड से बुहेमिया तक और इटली से स्काटलैंड तक बिना हैरानी के परस्पर बातचीत कर सकते थे। एक भाषा होने के कारण वे भिन्न जातीय मामलों का प्रबन्ध सब कहीं बुद्धिमान मित्रों के साथ कर लेते थे जो कि वही भाषा बोलते थे।

यूनानी भाषा के पुनरागमन और इब्रानी भाषा के प्रचार से रोम जो घृणा प्रगट करता था वह अकारण न थी, और वह भय भी अकारण न था जिस से वह गँवारू भाषाओं से हाल की भाषाएं निकलती हुई देखता था। पेरिस नगर में अध्यात्म विद्या विशारद जनों ने ज़िमनीज़ के समय वाला विचार जो पुन: प्रगट किया था वह अकारण न था। वह विचार यह था कि यदि यूनानी और इब्रानी भाषाओं के पढ़ने की आज्ञा दे दी जायगी तो धर्म की क्या गति होगी। लैटिन भाषा का प्रचार ही धर्म की शक्ति की दृढ़ प्रतिज्ञा थी। उस भाषा का प्रचार कम हो जाना मानों उस के पतन का उपाय था और उस भाषा का अप्रयोग मानो इटली ही देश की छोटी राजधानी

अपने चरवाहे के पीछे२ शहर की पवित्र सीमाओं भर में घूमा करतीं थीं, अब लेखकों, निरीक्षकों और कर ग्रहणकारियों का एक बड़ा न्यायालय पैदा हो गया, जहां अधिकारों, नियमभंगादेशों और करमुक्ति विषयक काम काज हुआ करते थे, और नालिशी लोग विनयपत्र लिये हुये द्वार२ फिरा करते थे। प्रत्येक जाति के पदाभिलाषियों के लिये रोम नगर एक अड्डा होगया था। उन कार्य्यवाहियों, दया प्रदानों, पापादेशों, मुक्तिपत्रों, आज्ञाओं और न्यायों की अधिकता के कारण जो यूरोप और एशिया के सब भागों को वितरित किये जाते थे, स्थानीय धार्मिक काम तुच्छ हो गये। क्यूरिया सभा को अपना घर बना लेने के लिये कई सौ मनुष्यों की आवश्यकता थी। उसका तात्पर्य्य यह होता था कि वे पोप के ख़ज़ाने की आमदनी बढ़ा कर स्वयं अपनी उन्नति करें। सर्व ईसाई संसार उस सभा का दाता हो चुका था। क्यूरिया सभा में प्रत्येक धार्मिक चिन्ह मिट चुका था, और उसके सभासद लोग राजनैतिक बातों, अभियोगों और न्यायनिर्णयों में लगे रहा करते थे, और अध्यात्मिक विषयों सम्बन्धी एक शब्द भी नहीं सुना जाता था। लेखनी की प्रत्येक चाल पर धन लगता था। पादारखें, नियम-भंगानुशासन, अनुज्ञायें, मुक्तिपत्र, पापादेश पत्र, सौदा की भांति खरीदे और बेचे जाते थे। मामले दार लोगों को दरवान से लेकर पोप तक प्रत्येक मनुष्य को घूस देनी पड़ती थी, नहीं तो मुकदमा हार जाता था। गरीब लोग न तो कभी मुकदमा जीतते थे और न उसकी आशा ही रखते थे, और फल यह था कि प्रत्येक पादरी समझता था कि उसे वैसा ही कार्य्य करने का अधिकार है जैसा कि वह रोम में देख आया था, और यह भी समझता था कि वह अपने अध्यात्मिक कार्य्यों और संस्कारों द्वारा लाभ उठा सकता है, क्योंकि ऐसा करने का अधिकार मैं रोम से खरीद लाया हूं और ऋण पटाने का दूसरा द्वार नहीं है। क्यूरिया को अविग्नान स्थान तक हटा देने के कारण इटली निवासियों की शक्ति फ्रांस निवासियों में चले जाने से कुछ परिवर्तन नहीं हुआ केवल इटली निवासियों ने यह समझा कि इटली निवासी घरानों के धनवान

पदार्थ से भी न की जा सकती हों? मनुष्य असभ्य दशा से उन्नत नहीं किये जा सकते, और एक महाद्वीप एक दिवस में सुसभ्य नहीं बनाया जा सकता!

परन्तु कैथोलिक शक्ति की जांच ऐसे अनुमान से नहीं होना चाहिये। उसने बड़ी घृणा के साथ इस बात को अमान्य किया है, और अब भी अमान्य करती है, कि वह शक्ति मानवी नहीं है। वह ईश्वरीय शक्ति माने जाने का दावा करती है। मुख्य पांटिफ पृथ्वी निवासी ईश्वर प्रतिनिधि है। उसका निश्चित न्याय सर्वथा सत्य मान कर उसमें यह शक्ति मानी जाती है कि यदि आवश्यकता हो तो वह पांटिफ अलौकिक चमत्कारों द्वारा सब काम कर सकता है। उसने एक हज़ार वर्ष से अधिक तक यूरोप की बुद्धि पर एकाधिपत्तिक अत्याचार किये थे, और यद्यपि कभी२ कोई अनाज्ञाकारी राजा लोग उसका सामना करते थे, तथापि ये सब मिल कर ऐसे तुच्छ थे कि यह कहा जा सकता है कि महाद्वीप की प्राकृतिक और राज्यनैतिक शक्ति उसी के अधिकार में रही थी।

ऐसी घटनाओं पर जैसा कि इस अध्याय में वर्णन की गई हैं, सोलहवीं शताब्दी के प्रोटेस्टैंट सुधारकों ने निःसन्देह भली भांति बिचार किया और यह फल निकला कि कैथोलिक धर्म अपने कार्य में सर्वथा अकृतकार्य्य हुआ है, और वह धोखा और छल की एक भारी प्रथा हो गया था, और ईसाई धर्म का उद्धार केवल प्राचीन-कालिक विश्वास और कामों तक लौट जाने ही से हो सकेगा। यह निश्चय अकस्मात नहीं कर लिया गया था। ऐसी ही सम्मति बहुत से धार्मिक और विद्वान पुरुषों की बहुत दिन से थी। मध्य युग में पवित्रात्मा अेंट्रीसीलस लोगों ने ज़ोर के साथ अपना यह विश्वास प्रगट किया था कि एक रोमन सम्राट के घातक दान ने सत्य धर्म को विनष्ट कर डाला। यूरोप के उत्तरीय भाग निवासी मनुष्यों को यह निश्चय दिला कर कि कुमारी मरियम की पूजा, महात्माओं से प्रार्थना करना, अलौकिक चमत्कारों का होना, रोगियों का ईश्वरीय शक्ति द्वारा निरोग्य होना, पाप करने के लिये आज्ञापत्रों की खरीद और

राजधानी तक धर्म को सीमाबद्ध कर देने का चिन्ह था। वास्तव में यूरोपीय भाषाओं का प्रस्तार उसके विनाश का द्वारा था : वे भाषायें भिखमंगे योगियों और अपढ़ मनुष्यों में एक प्रभाव जनक सम्बन्ध थीं, और उनमें से कोई भी ऐसी भाषा न थी जिसने अपनी प्राथमिक पुस्तकों में धर्म की ओर भारी घृणा न प्रगट की हो।

इसलिये बहुभाषी यूरोपियन साहित्य की उन्नति होना कैथोलिक राज्य में असम्भव था। एक बड़े गौरवान्वित और भव्य धार्मिक ऐक्य ने उस साहित्य सम्बन्धी ऐक्य को प्रचलित किया था जो एक भाषा के प्रयोग से समझा जाता है।

जब इस भांति एक सार्वजनिक भाषा के होने से धर्म की शक्ति बहुत बढ़ गई थी तब सम्प्रदाय के प्रभाव का बहुत कुछ वास्तविक रहस्य उस अधिकार पर निर्भर था। ज्यों २ घरू जीवन विधान में परिवर्तन हुये त्यों २ धर्म का प्रभाव घटता गया। इसी के साथ ही साथ उस को कूटनीति द्वारा भिन्न जातीय सम्बन्धों की मुख्यता से भी निकाल दिया गया।

रोमन राज्य के प्राचीन समय में सर्व प्रान्तों के सेना निवास-स्थान सदैव से सभ्यता के केन्द्र प्रमाणित होते आये थे। उद्योग और क्रम जो उनसे प्रगट होते थे उनसे एक ऐसा उदाहरण मिलता था जो इर्द गिर्द वासी इगलैंड, फ्रान्स और जरमनी के असभ्य निवासियों पर प्रभाव डालता था। और यद्यपि यह उनका काम न था कि वे विजित जातियों की दशा सुधारने में दत्तचित हो जावें, वरन् उनका यह काम था कि उन्हें बुरी दशा में रक्खें जिसमें उन्हें अधीन रखने में सहायता मिले, तथापि व्यक्तीय और जातीय दशा की उन्नति धीरे २ होती ही रही।

रोम के पुरोहितीय राज्य समय में भी ऐसे ही फल हुये। देहात के खुले मैदानों में वैखानस आश्रमों ने सैनिक छावनियों को हटा दिया और गांव वा बड़े नगर में गिरजाघर ज्ञान का केन्द्रस्थान था। वैखानस आश्रमों का मनोहर विभव बड़ा प्रभाव डालता था और गिरजाघरों के पवित्र और उच्च उपदेश अच्छा फल पैदा करते थे।

भी बे रोक रास्ता खुला था। बुद्धिमान और औद्योगिक पुरुष सब कुछ कर सकते थे। बहुत से अति उच्च राजपद उन मनुष्यों से भरे हुये थे जो अति नीच कुलों से उन्नति कर गये थे। यदि जातीय समता न थी (जैसा कि धनवान और समृद्धशाली जातियों में कभी हो नहीं सकती) तो राजनैतिक समता अवश्य थी, और बड़े ज़ोर के साथ स्थिर रक्खी जाती थी।

कदाचित ऐसा कहा जा सकता है कि इस प्राकृतिक उन्नति में से बहुत कुछ उन्नति विशेष दशाओं के कारण हुई थी, जैसी कि प्राचीन काल में किसी जाति की नहीं हुई। काम करने के लिये एक बहुत बड़ा लम्बा चौड़ा नाट्यशाला खुला था, अर्थात् एक पूरा महाद्वीप उस मनुष्य के हस्तगत होने को तय्यार था जो उसे लेना चाहे। प्रकृति को जीतने के लिये और उसके दिये हुये अनन्त सुअव-सरों से लाभ उठाने के लिये केवल साहस और उद्योग की आवश्य-कता थी।

परन्तु क्या वे मनुष्य एक बड़े सिद्धान्त से न उत्साहित किये गये होंगे जिन्होंने सफलता सहित प्राचीन जंगलों को सभ्यता का निवासस्थान बना डाला, जो अंधेरे जंगलों वा नदी पहाड़ों वा भयंकर मरुस्थलों से न डरे और जिन्होंने एक शताब्दी में महाद्वीप की एक ओर से दूसरे छोर तक अपना विजय रास्ता बना लिया और उसको अब तक अपनी अधीनता में रक्खे हुये हैं? अच्छा अब इन प्रतिफलों के साथ हम उन प्रतिफलों का मीलान करते हैं जो स्पेन निवासियों कृत मैक्सिको और पेरू के आक्रमण से हुये। इन स्पेन निवासियों ने उन देशों में एक ऐसी आश्चर्य्यप्रद सभ्यता का विनाश कर डाला जो कई एक बातों में स्वयं उनकी सभ्यता से बढ़ कर थी और जो बिना लोहा और बारूद के पूर्णता को पहुँच चुकी थी, और जिसका मूलाधार ऐसी कृषी पर था जिसमें घोड़े, बैल वा हल कुछ भी न लगते थे। स्पेन निवासियों के कार्यारम्भ का एक स्पष्ट मूलाधार था और उनके बढ़ाव में किसी प्रकार की रुकावट नहीं थी। उन्होंने अमेरिका के आदिम निवासियों के सब ही कृत्यों को विनष्ट

अन्य सब बुरे काम जो पादरियों को लाभकारी हैं और ईसाई धर्मानुकूल बताये जाते हैं, परन्तु जो उस धर्म का कोई भी भाग नहीं है, उनके मिटवाने के लिये केवल ल्यूथर की वाक्यशक्ति ही की आवश्यकता थी। कैथोलिक धर्म, मनुष्य जाति की भलाई को उन्नति देने वाली प्रथा की भांति, अपनी असलियत प्रमाणित करने में स्पष्ट निर्फल हुआ और उसके काम उसके बड़े दावों के अनुकूल नहीं थे, और एक हज़ार वर्ष का समय पाकर भी उसने मनुष्य समूहों को (जहां तक प्राकृतिक भलाई और मानसिक विद्या का सम्बन्ध है) एक ऐसी दशा में छोड़ा जो उस दशा से बहुत नीची थी जैसी कि होनी चाहिए थी।



ग्यारहवां अध्याय।

वर्तमान सभ्यता के साथ विज्ञान का सम्बन्ध।

(अमेरिका के इतिहास से विज्ञान के बड़े प्रभावों का उदाहरण।

यूरोप में विज्ञान का प्रचार। वह प्रभाव मूरिश स्पेन से उत्तरीय इटैली तक गया और ऐविगनान में पोपों के न रहने के कारण लोगों ने उसको स्वीकार किया। छापे के प्रभाव, और समुद्रीय यात्राओं के प्रभाव और धार्मिक सुधार का प्रभाव। इटली में वैज्ञानिक समाजों की स्थापना। विज्ञान का मानसिक प्रभाव। उस प्रभाव ने यूरोप में विचार की दशा और ढंग बदल दिया। लन्दन की रायल सुसायटी और अन्य वैज्ञानिक समाजों के काम इसका उदाहरण देते हैं।

विज्ञान के अर्थ सम्बंधी प्रभाव का उदाहरण उन बहुत से यंत्रिक और पदार्थिक अन्वेषणों से मिलता है जो चौदहवीं शताब्दी से इधर किये गये। उन अन्वेषणों का प्रभाव स्वास्थ्य और घरू जीवन पर और शान्ति प्रद और युद्ध सम्बन्धी कलाओं पर।

"विज्ञान ने मनुष्य जाति के लिये क्या किया है?" इस प्रश्न का उत्तर)।



धार्मिक सुधार के समय में यूरोप हमको रोमन ईसाई धर्म के प्रभावों का वह फल बतलाता है जो उसने सभ्यता की उन्नति में

पूरा हो गया होता तो आज दिन विज्ञान और धर्म में कुछ झगड़ा न रहता; और रिफारमेशन की खेंचातानी बच गई होती, और झगड़ा करने वाली प्राटेस्टेंट सम्प्रदायें न होती, परन्तु कांसटैंस और बेसिल की सभायें इटली की गुलामी न हटा सकीं, और वह उत्तम फल प्राप्त न हुआ।

इस भांति कैथोलिक धर्म बल हीन हो रहा था। ज्योंही उसका कठिन दबाव उठगया मनुष्यों की बुद्धि फैलने लगी। मुसलमानों ने कपड़े के लत्तों और रूई से कागज़ बनाने का ढंग निकाल लिया था। बेनिस निवासी लोग छापने की कला चीन से यूरोप में लाये थे। पहला अन्वेषण दूसरे के लिये आवश्यकता था। तब से सब जाति के मनुष्यों में मानसिक सम्बंध होने लगा जिसके रोकने की कोई सम्भावना न थी।

छापे के अन्वेषण से कैथोलिक धर्म को एक कठिन धक्का लगा, क्योंकि पहले यही धर्म भिन्न देशों से लिखा पढ़ी करने के ठीके का बहुत बड़ा लाभ उठाता था। उसी के केन्द्रस्थान में सब पादरियों के नाम आज्ञाएं वितरित होती थीं और उपदेशपीठ से लोगों को सुनाई जाती थीं। यह ठेका और उसकी दी हुई बड़ी भारी शक्ति छापाखानों के कारण विनष्ट हो गई! हाल के समय में उपदेशपीठ का प्रभाव सर्वथा तुच्छ ही होगया है। उपदेशपीठ का स्थान सर्वथा समाचार पत्रों ने ले लिया है।

तब भी कैथोलिक धर्म ने अपना पुराना बड़प्पन बिना झगड़े के नहीं छोड़ा। ज्योंहीं इस नई कला की अटल इच्छा देखी गई, निन्दा के रूप से उसके रोकने का उद्योग किया गया। किसी पुस्तक के छापने के हेतु पोप की आज्ञा लेने की आवश्यकता पड़ती थी। इस काम के लिये यह आवश्यक था कि पादरी लोग उस पुस्तक को पढ़ें, जाचें, और उसके विषय में अपनी सम्मति प्रकाश करें। उसके लिए एक ऐसा प्रशंसा पत्र होना चाहिये कि वह पुस्तक धार्मिक और शास्त्रविहित है। पोप षष्ठम अलेग्ज़ेंडर ने सन् १५०१ ई० में उन छापेखानेवालों के बिरुद्ध जो हानि कारक सिद्धान्त छापें, एक

कर डाला। लाखों अभागों को निर्दयता से मार डाला। वे जातियां जो बहुत शताब्दियों तक सन्तोष और समृद्ध में रही थीं और ऐसी रीतियों और कानूनों को मानती थीं जो उनके इतिहास से उनके लिये बहुत ही उचित ज्ञात होते हैं, अराजकता में डालदी गईं। वे लोग मिथ्या विश्वास में पड़ गये और उनकी बहुत सी भूमि और अन्य सम्पत्ति रोमन धार्मिक सम्प्रदाय के अधिकार में चली गई।

मैंने यह उपरोक्त उदाहरण यूरोप में हस्तगत हो सकने वाले उदाहरणों को छोड़ अमेरिका के इतिहास से इस कारण लिया है कि यह उदाहरण एक ऐसे काम करने वाले सिद्धान्त का उदाहरण है जिसमें बाहरी दशाओं ने कुछ हस्तक्षेप नहीं किया। यूरोप की राजनैतिक उन्नति ऐसी सरल नहीं है जैसी कि अमेरिका की।

काम के ढंग और उसके फलों पर विचार करने से पहले मैं संक्षेपतः यह वर्णन करूंगा कि वैज्ञानिक सिद्धान्त यूरोप में कैसे प्रचलित हुआ।

(यूरोप में विज्ञान का प्रचार)

बहुत वर्षों तक धर्म युद्ध (क्रूसेड्स) प्रत्येक ईसाई जाति की पवित्रात्मिकता और भयों द्वारा खींचा हुआ केवल बहुत सा धन ही नहीं लाते रहे थे, वरन् उन्होंने पोप की शक्ति को बहुत भयंकरता तक बढ़ा दिया था। उन दुहरे शासन बिधानों में से जो यूरोप में सब कहीं फैले हुये थे, आत्मिक शासन ने प्रबलता प्राप्त करली और लौकिक शासन केवल उसका दास था। सब ओर से और सब प्रकार के बहानों से धन की नदियां लगातार इटली में बहती आती थीं। लौकिक राजाओं ने जान लिया था कि हमारे लिये थोड़ी आमदनी बच रही है। सन् १३०० ई० में फ्रांस के राजा फ़िलिप फ़ेयर ने इस प्रकार अपने राज्य के धन बहाव को, (बिना अपनी आज्ञा के सोना चांदी बाहर भेजने की मुमानियत करके) केवल रोकने ही का निश्चय नहीं किया वरन् उसने यह भी दृढ़ निश्चय करलिया कि पादरियों और पुरोहितों की जागीरों से भी कुछ राज्य-कर लेना चाहिये। इस बात से पोप के साथ बड़ा घातक झगड़ा हुआ। राजा जाति से निकाल

रहे हैं, और जिस समय वह लेखों और शब्दों द्वारा इस झगड़े को बढ़ा रहा था, वे तलवार द्वारा उसके प्रस्तावों को स्थापित कर रहे थे।

ल्यूथर की और उसके कामों की जो अवज्ञा की गई थी वह ऐसी कटु थी कि हास्यास्पद हो गई थी । ऐसा कहा गया था कि उसका बाप उसकी माता का पति न था, बरन् एक नाटा भूत था, जिसने उसे छला था । और दश बर्ष तक अपनी बुद्धि के साथ झगड़ा करते रहने से वह नास्तिक होगया था, और आत्मा की अमरता नहीं मानता था और मद्यपान की प्रशंसा में कुछ भजन बनाये थे, क्योंकि वह स्वयं नित्य शराब पीता था, और पवित्र धर्म ग्रन्थों की निन्दा करता था बिशेष कर मूसाकृत ग्रंथों की, और जो कुछ वह उपदेश करता था उसके एक शब्द पर भी स्वयं बिश्वास नही रखता था और सेंटजेम्स की पत्री को तुच्छ बस्तु कहता था, और सर्वोपर यह कहा गया था कि रिफारमेशन उसका काम नहीं था, बरन् बास्तव में ग्रहों की एक विशेष स्थिति के कारण हुआ था । परन्तु रोमन पुरोहितों में यह एक गँवारू मसल थी कि इरैसमस ने रिफारमेशन का अण्डा दिया और ल्यूथर ने उसका सेवन किया ।

रोम ने पहिले इस अनुमान में भूल की कि वह झगड़ा सिवाय एक आकस्मिक बिद्रोह के और कुछ नहीं है । उसने यह भी न देखा कि वह बिद्रोह बास्तव में उस भीतरी हलचल की पराकाष्ठा है जो यूरोप में दो शताब्दियों से होता रहा था, और जो दिनोंदिन शक्तिवान होता जाता था और यदि इसके सिवाय अन्य कुछ न भी होता तो भी तीन पोपों के होने से मनुष्यों को बिबश होना पड़ता कि वे अपने लिये सोच बिचार करें और प्रतिफल निकालें । कांस-टैंस और बेसिल की सभाओं ने लोगों को सिखा दिया था कि पोपों की शक्ति से भी बढ़ कर एक कोई शक्ति है । वे लम्बी और रक्तपा-तक लड़ाइयां जो हुई थीं वेस्टफैलिया की संधि से बंद हो गईं, और तब यह बात ज्ञात हुई कि यूरोप के मध्य और उत्तरीय भाग ने रोम के मानसिक अत्याचार का भार फेंक दिया है, और स्वस्वार्थपरता

समाजच्युत करने की आज्ञा निकाली थी । सन् १५१५ ई० में लेटरन कौंसिल ने आज्ञा निकाली कि ऐसी कोई किताब न छपना चाहिये जो पुरोहितीय सम्मतियों से जांची न गई हो, नहीं तो छापने वाला पुरुष समाजच्युत किया जायगा और अर्थ दण्ड भी होगा, और जांचने वालों को हिदायत की गई कि वे बड़ी सावधानी रक्खें कि कोई धर्म विरुद्ध पुस्तक न छपने पावे । इस भांति धार्मिक वाद-विवाद का रोब फैल गया । यह रोब इसलिये था कि कहीं सत्य बात प्रगट न हो जाय ।

परन्तु इस अज्ञान की शक्तियों के धार्मिक मदोन्मत्त झगड़ों से कुछ लाभ न हुआ । मनुष्यों में मानसिक सम्बंध दृढ़ हो ही गया । उसका सर्वोच्च फल वर्तमान काल के समाचार पत्र हैं, जो अब प्रति दिन जगत के सब भागों से समसामयिक खबरें प्रकाशित करते हैं। पढ़ना जन साधारण का काम ही होगया । प्राचीन समाज में यह काम बहुत थोड़े मनुष्यों का था । हाल के समाज के कतिपय बहुत अच्छे चिन्ह इसी परिवर्तन के कारण हैं ।

यूरोप में कागज़ बनाने और छापेखाने के प्रचार से ऐसा फल हुआ । इसी भांति जहाज़ी कम्पास (दिग्दर्शक यंत्र) के प्रचार से बड़े२ आर्थिक और नैतिक प्रभाव प्रगट हुये । हिन्दुस्तान से व्यापार करने के विषय में वेनिस और जिनोवा निवासियों की प्रतिस्पर्द्धा के कारण अमेरिका का ज्ञात होना, डीगामा का आफ्रिका महाद्वीप का परिक्रमा करना और मजिल्लां का पृथ्वी परिक्रमा करना इसी कम्पास के प्रभाव थे । पृथ्वी परिक्रमा के सम्बंध में (जो कि मनुष्य कृत कामों में से सब से बड़ा काम है) यह बात स्मरण रखना चाहिये कि कैथोलिक धर्म निश्चित रूप से यह सिद्धान्त मानता था कि पृथ्वी समचौरस है, आकाश वैकुण्ठ का फर्श है, और नर्क संसार के नीचे है । कतिपय पादरियों ने, जिनका अनुशासन सर्वोत्तम माना जाता था, पृथ्वी के गोलाकार स्वरूप के विरुद्ध वैज्ञानिक और धार्मिक प्रमाण दिये थे, जैसा कि हम पहले कह आए हैं । अब यह वादविवाद

स्थापित होने और शीघ्रता से बढ़ने से होती है। ये सभाएं उन मूरिश सभाओं की पुनर्भूत रूप थीं जो पहिले समय में ग्रनेडा और कारडोआ में थीं। मानो उस रस्ते को स्मारक चिन्ह से चिन्हत करने के लिये जिस रास्ते से सभ्यता फैलानेवाले प्रभाव आये थे, टोलो का विद्यालय जो १३४५ ई० में स्थापित किया गया था, अब हमारे समय तक बच रहा है। परन्तु वह विद्यालय फ्रान्स के दक्षिणी भाग के रसिक साहित्य को प्रगट करता था और एक बड़े विचित्र नाम (फूलों के खेल का विद्यालय) से प्रसिद्ध था। प्राकृतिक विज्ञान की उन्नति के लिये "अकैडेमिया सैक्रेटोरम नेचरी" नामक पहली सभा 'बैप्टिस्टापोरटा' ने नेपिल्स में स्थापित की थी। टीरावोशी के कथनानुसार, वह सभा धर्माधिकारियों ने तोड़दी थी। 'लिन्सीन' नामक सभा रोम नगर में 'फ्रेडिरिक सिसी' ने स्थापित की थी। उसका बिशेष चिन्ह स्पष्ट रीति से उसके तात्पर्य्य को प्रगट करता था अर्थात एक बनबिलाव अपनी आखें आकाश की ओर किये हुये अपने पंजो से एक त्रिशिरा कुत्ते को फाड़ता हुआ। 'अकैडीमिया डेल सिमेन्टो' नामक सभा जो सन् १६५७ में फ्लारेन्स नगर में स्थापित हुई थी अपने अधिवेशन ड्यूक के महल में किया करती थी। वह दश बर्ष तक चली और तदनन्तर पोप गवर्नमेंट की आज्ञानुसार तोड़ दी गई। इसके बदले में ग्रेंड ड्यूक का भाई कार्डिनल बना दिया गया था। टारीसेली और कैस्टेली सरीखे बहुत से बड़े २ मनुष्य उस सभा के सभासद थे। उस सभा में सम्मिलित होने के लिये सब प्रकार का बिश्वास शपथ खाकर छोड़ देने और सत्यता की जांच करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करने का नियम था। इन सभाओं ने बिज्ञान के उन्नति दाताओं को उस उजाड़ स्थान से बाहर निकाल लिया जहां वे अब तक रहा करते थे। और उनसे मेल मिलाप और ऐक्य भाव बढ़ा कर उन सब सभाओं को सजीवता और शक्ति प्रदान की।

बिज्ञान का बुद्धि सम्बंधी प्रभाव।

इस अप्रासंगिक अर्थात इस एतिहासिक बर्णन से घूम कर कि

ने विजय पाई है और यह अधिकार स्थापित कर दिया है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी अलग सम्मति रख सकता है।

परन्तु यह बात असम्भव थी कि कैथोलिक धर्म की अस्वीकृति के साथ ही साथ यह निज सम्मति के अधिकार की स्थापना भी मिट जाय। इस हलचल के आरम्भ में इरेसमस सरीखे कई एक प्रख्यात मनुष्यों ने, जो पहले उसके उन्नति दाता रहे थे, कैथोलिक धर्म को छोड़ दिया। उन्होंने देख लिया था कि बहुत से सुधारक लोग विद्या से बड़ी घृणा रखते थे और उन्हें यह भय था कि कहीं ऐसा न हो कि हम धर्माग्रही हलचल में पड़ जायें। प्राटेस्टेंट समूह को भी, अपनी बारी से, असम्मति और प्रथकता द्वारा अपना अस्तित्व स्थिर कर लेने पर भी उन्हीं सिद्धान्तों के कार्य्य को मानना पड़ा। इस हेतु बहुत सी अन्तरगत सम्प्रदायों में विभक्त हो जाना अटल हो गया था। इन सम्प्रदायों ने, अब यह देख कर कि बड़े इटैलियन शत्रु से अब कुछ डर रहा ही नहीं, परस्पर प्रथक होने की लड़ाइयां लड़ने लगे। भिन्न २ देशों में जैसे २ पहले एक समूह और तदनन्तर दूसरा समूह शक्तिवान होता गया, उसने अपने प्रतिस्पर्द्धियों पर निर्दयता करने का कलंक अपने ऊपर लिया। जब समय पाकर सताया हुआ समूह सताने वाले समूह पर विजय पाता, और उनसे बदला लेता था, तब उन घातक बदलों ने ही उन भिन्न समूहों को विश्वास दिला दिया कि उन्हें अपने प्रतिस्पर्द्धियों को वह वस्तु अवश्य देना चाहिये जो वे स्वयं अपने लिये मांगते हैं, और इस भांति उनके झगड़ों और दुराचारों से सहनशीलता का बड़ा सिद्धान्त स्वयं प्रथक हो गया। प्ररन्तु सहनशीलता केवल एक मध्यावस्था है और ज्यों२ प्राटेस्टेंट धर्म की मानसिक प्रथकता प्रवाहित होगी, वह क्षणिक दशा को (जिसके लिए तत्व ज्ञान बहुत प्राचीन काल से आशा कर रहा है) एक अधिक ऊंची और अधिक सभ्य अवस्था तक पहुँचा देगी, अर्थात् वह जातीय अवस्था जिसमें सब लोगों के लिए विचार की पूर्ण स्वतंत्रा होगी। सहनशीलता (यदि भय के कारण न हो) केवल वेही मनुष्य दिखा सकते हैं जो अपनी सम्मतियों की अपेक्षा

कर लेता था कि वह बुद्धिग्राह्य वस्तुओं का सन्तोष प्रद विचार है। दोनों का विरोध लगातार बढ़ता ही गया। एक ओर अर्थात विज्ञान की ओर तिरस्कार का भाव था, और दूसरी ओर अर्थात धर्म की ओर घृणा का भाव था। अपक्षपाती साक्षी चारों ओर देख रहे थे कि विज्ञान शीघ्रता से धर्म की जड़ खोद रहा है।

इस भांति गणित विद्या वैज्ञानिक खोज का बड़ा साधन हो गई थी और वैज्ञानिक विवेचना की भी साधन हो गई थी। एक रीति से यह कहा जा सकता है कि उसने मस्तिष्क सम्बन्धी कामों को घटा कर यंत्रिक कार्य्य कर दिया था, क्योंकि उसके चिन्ह बहुधा सोचने की मेहनत बचा लेते थे। मानसिक शुद्धता का स्वभाव जिसको गणित विद्या उत्तेजित करती थी विचार की अन्य शाखाओं तक फैल गया और एक मानसिक हलचल पैदा करदी। अब अलौकिक चमत्कार सम्बन्धी प्रमाणों से वा उस तर्क शास्त्र से जो मध्य युग भर विश्वास-नीय रह चुका था सन्तोषित होना असम्भव था। इस भांति उसने केवल सोचने के ढंग ही पर प्रभाव नहीं डाला, वरन् उसने विचार का पथ ही बदल दिया। इस बात के विषय में, भिन्न २ विद्वान समाजों के कामों में विचारित विषयों का मीलान करके, हम उन विवेचनाओं से संतुष्ट हो सकते हैं जिनमें मध्य युग निवासी मनुष्यों का ध्यान लगा रहा था।

परन्तु गणित-विद्या का प्रयोग केवल कल्पनाओं की जांच तक ही सीमाबद्ध न था, वरन् जैसा कि हम ऊपर प्रगट कर आये हैं, वह विद्या ऐसे उपाय भी बताती है जिससे अब तक अनदेखी बातों की आगम सूचना दी जाती है। इस बात में यह विद्या धर्म की भविष्य-वाणियों की जोड़ीदार हो गई। निप्चून ग्रह की खोज उसी भांति का उदाहरण है जो ज्योतिष विद्या ने दिया; और सूच्याकार वर्तन की खोज भी एक उदाहरण है जो चक्षुविद्या सम्बन्धी तरंगिक सिद्धान्त ने दिया।

परन्तु जब यह बड़ा साधन प्राकृतिक विज्ञान में ऐसी आश्चर्य्य-प्रद उन्नति का कारण हुआ तब वह स्वयं भी उन्नति कर रहा था।

विज्ञान किन २ दशाओं में यूरोप में प्रचारित हुआ, अब उसके कार्य्य के ढंग और उसके फलों की ओर चलता हूं।

वर्तमान सभ्यता पर विज्ञान का प्रभाव दो भांति से पड़ा है। (१) बुद्धि विषयक (२) अर्थ सम्बन्धी। इन्ही शीर्षकों से हम उसका भली भांति विचार कर सकते हैं।

बुद्धि विषयक रीति से उसने मौखिक शास्त्र का प्रमाण विनष्ट कर दिया। उसने बिना प्रमाण किसी विद्वान के सिद्धान्तों को मानने से इन्कार कर दिया चाहे वह विद्वान कितनाही बड़ा वा उसका नाम कितना ही आदरणीय क्यों न हो। इटली देश के अकैडेमिया डेल सिमेन्टो' नामक विद्यालय में भरती होने के नियम और लन्दन की रायल सुसायटी का मान्य आदर्शवाक्य इस बात का उदाहरण देते हैं कि उसने इस विषय में कैसा मार्ग ग्रहण किया था।

पदार्थिक विवेचनाओं में उसने अप्राकृतिक और अलौकिक चमत्कार सम्बन्धी प्रमाण को अमान्य किया था। उसने उस लक्षण-प्रमाण को भी छोड़ दिया था जिसे प्राचीन काल में यहूदी लोग मानते थे, और इस बात को नहीं मानता था कि किसी दूसरी वस्तु के उदाहरण द्वारा किसी बात का प्रमाण दिया जा सकता है और इस भांति उस तर्कशास्त्र को निकाल बाहर किया था जो कई शताब्दियों तक प्रचलित रह चुका था।

पदार्थिक खोजों में उसकी कार्य्यप्रणाली यह थी कि वह किसी प्रस्तावित कल्पना के मूल्य की जांच करता था। उस कल्पना के सिद्धान्त पर किसी विशेष दशा को लेकर गणित द्वारा जांच करता था, और तदनन्तर प्रयोग वा निरीक्षण करके निश्चित करता था कि इन निरीक्षणों वा प्रयोगों का फल उस हिसाब के फल से मिलता है वा नहीं। यदि न मिलता होता तो वह कल्पना असत्य मानी जाती थी।

यहां पर हम इस कार्य्यवाही के ढंग के दो एक उदाहरण दे सकते हैं। न्यूटन ने, इस अनुमान से कि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति चन्द्रमा तक फैल सकती है, और वही शक्ति हो सकती है जो उसे उसके कक्षा पर पृथ्वी के चौगिर्द घुमाती है, हिसाब लगाया था कि

वे प्रचलित ईश्वर विद्या से बिलकुल अनमिल हैं। प्रगट वा अप्रगट किसी न किसी भांति वे सिद्धान्त ईश्वर विद्या के विरुद्ध हैं। वे धर्म्माध्यक्ष लोग प्रयोगिक विज्ञान से इतनी बड़ी घृणा रखते थे कि उन्होंने जान लिया था कि 'अकैडेमिया डेल सीमेन्टो' नामक सभा तोड़ कर हमें बहुत बड़ा लाभ हुआ है। यह भाव केवल कैथोलिक धर्म ही का नहीं था। जब लन्दन की रायल सुसायटी स्थापित हुई थी तब ईश्वर विद्या वादियों के उस पर ऐसे कड़े कटाक्ष हुये थे कि निःसन्देह यदि राजा द्वितीय चार्ल्स खुल्लम खुल्ला और सशपथ सहायता न देता वो वह टूट जाती। उस सभा पर यह दोष लगाया गया था कि वह स्थापित धर्म को विनाश करना चाहती है, महाविद्यालयों को हानि पहुंचाना चाहती है और प्राचीन तथा दृढ़ विद्या को उलट देना चाहती है।

इस बात को देखने के लिए कि इस सभा ने मानवी उन्नति के हेतु कितना काम किया है, केवल हमें उसके कार्यवाहियों के पत्रे उलटना पड़ेंगे। वह सभा १६६२ में स्थापित की गई और उस समय से आज तक जितनी बड़ी२ वैज्ञानिक उन्नतियां और खोजें की गई हैं उन सब में वह स्वार्थ लेती रही है। उसी ने न्यूटनकृत प्रिन्सीपिया नामक पुस्तक प्रकाशित की, उसी ने हैली की समुद्रीय यात्रा में बहुत सहायता दी जो कि किसी राज्य की ओर से पहला वैज्ञानिक बड़ा काम था। उसी ने रक्त के संक्रामिक सिद्धान्त पर प्रयोगिक परीक्षाएं कीं और हारवी की रक्तभ्रमण वाली खोज को स्वीकार कर लिया। टीका लगाने के कार्य्य में उसने उत्साह दिलाया था, इस कारण कैरोलाइन रानी ने प्रयोग परीक्षा के लिये छः दंडित दोषी मांगे थे, और तदनन्तर उस काम के लिये स्वयं अपने लड़के दिये थे। उसी सभा के उत्साह दिलाने से ब्रैडले ने अपनी बड़ी खोज, (अर्थात् अचल सितारों की अचलता और पृथवी की धुरी का अक्ष विचलन) पूर्ण की थी। डिलैम्बर कहता है कि वर्तमान ज्योतिष की शुद्धता इन्हीं दोनों खोजों के कारण है। इसी सभा ने थर्मोमिटर की उन्नति को, सरदी गर्मी की नाप को और हरीमन की जेब घड़ी,

अच्छा अब हम उसकी उन्नति का हाल कुछ थोड़ी सी पंक्तियों में वर्णन करते हैं।

बीज गणित का बीज सिकन्दरिया निवासी डायोफेन्टस के ग्रन्थों में देखा जा सकता है, जिसके विषय में यह अनुमान है कि वह सन् ईस्वी की दूसरी शताब्दी में हुआ है। उसी मिश्र देशीय पाठशाला में उकलैदिस ने पहले रेखागणित की बड़ी २ सत्यताएं एकत्र की थीं और उनको नैयायिक क्रम से रक्खा था। सिरैक्यूस में आरकीमैडीज़ ने निःशेषीकृत ढंग द्वारा अधिक ऊंचे प्रश्नों का साधन खोजने का उद्योग किया था। उस समय का घटना प्रवाह ऐसा था कि यदि लोग विज्ञान को आश्रय देते जाते तो बीज गणित का अन्वेषण अवश्य ही हो जाता।

बीजगणित के मूल सिद्धान्तों के ज्ञान के लिये हम अरब निवासियों के ऋणी हैं। हम उस नाम के लिये भी उनके ऋणी हैं जिस नाम से गणितविद्या की यह शाखा प्रसिद्ध है। उन्होंने सिकन्दरिया के विद्यालय की बची बचाई वस्तुओं में होशियारी से वे उन्नतियां और मिला दीं जो हिन्दुस्तान से प्राप्त हुई थीं और इस विषय को निश्चित स्थिरता और रूप प्रदान किया। यह बीज गणितविद्या जैसी कि उनके पास थी, पहले पहल इटली देश में तेरहवीं शताब्दी के आरम्भ के लगभग लाई गई। उसकी ओर लोगों का इतना अधिक ध्यान गया कि लगभग ३०० वर्ष बीत गये तब कोई यूरोपियन ग्रन्थ इस विषय का निकला। सन् १४९६ ई० में पैशीओली ने निजकृत "आरटी मैजीओरी" वा 'अलगैबरा' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया। सन् १५०१ ई० में मिलन निवासी कार्डन नामक व्यक्ति ने घनमूलीय समीकरणों के साधन हेतु एक कायदा और बढ़ाया। सीपियोफिरो (१५०८), टारटेलिया और वाईटा ने और उन्नतियां कीं। तदनन्तर जर्मनी निवासियों ने इस विषय को अपने हाथों में लिया। इस समय गणितसंकेत अपूर्ण दशा में थे।

डिसकारटीज़ कृत रेखागणित का प्रकाशन गणितविद्याओं का एतिहासिक समय है (१६३७)। दो वर्ष पहले अविभाजित अंकों

सिकन्दरिया के अजायबघर में ईसा के समय से १०० वर्ष से कुछ ही पहिले हीरो नामक गणित विशारद की निकाली हुई एक कल थी। वह धुएं के जोर से घूमती थी और इस रूप की थी जिसे अब हम 'प्रत्याघातकल' कह सकते हैं। इस कल को, जो कि अत्यावश्यक अन्वेषणों का बीज थी, १७०० वर्ष तक लोग केवल एक आश्चर्य्यप्रद वस्तु की भांति स्मरण करते रहे।

वर्तमान कालिक धूमकल के अन्वेषण के साथ दैवयोग का कुछ सम्बन्ध नहीं है, यह कल मनन शक्ति और प्रयोग का फल है। सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में कई एक यंत्रिक कारीगरों ने धुएं के गुणों को काम में लाने का उद्योग किया। उनके परिश्रम वाट नामक मनुष्य ने अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में पूर्णतः को पहुंचा दिये।

वह धूमकल शीघ्र ही सभ्यता का कुली बन गई। वह कई लाख मनुष्यों का काम करने लगी। उसने, उन लोगों को जिनको जन्म भर पशुओं की भांति परिश्रम करना पड़ता था, अधिक अच्छे कामों में लग जाने का सुअवसर दिया। जिन लोगों को प्राचीन काल में परिश्रम करना पड़ता था वे उसके फल को समझ सकते हैं।

उसका सर्वप्रथम प्रयोग ऐसे कामों में हुआ जैसे कि पानी उलीचना, जिसमें केवल बल ही की आवश्यकता है। परन्तु शीघ्र ही उसने अपनी स्पर्श शक्ति की मृदुता को भी कातने और बुनने की औद्योगिक कलाओं में प्रमाणित करदिया। उसने बहुत बड़े२ कारीगरी के कारखाने पैदा कर दिये और संसार भर को कपड़ा पहनाने लगा। उसने सब जातियों के उद्योग को बदल दिया।

पहिले नदियों और तदनन्तर समुद्र में नौका चलाने के काम में उसने उस समय तक प्राप्त हुई चाल को चौगुने से भी अधिक कर दिया। अटलान्टिक समुद्र को पार करने के लिये ४० दिन की आवश्यकता के बजाय अब वह आठ दिन में पार किया जा सकता है। परन्तु खुश्की के आवागमन में उसकी शक्ति अत्यंत आश्चर्य्यप्रद प्रकाशित हुई। रैलवे इंजिन के प्रशंसनीय अन्वेषण ने मनुष्यों को एक घंटे से कम में उससे कहीं अधिक यात्रा करने के

क्रानोमीटर और समय मापन की उन्नति दी। इसी सभा द्वारा ग्रेगरी का पत्रा इँगलैन्ड में सन् १८५२ में प्रचलित हुआ, यद्यपि धार्मिक लोगों ने बड़ा कड़ा विरोध किया था। उस सभा के कतिपय मेम्बरों का, अज्ञानी और क्रोधी जनों ने, गलियों२ पीछा किया। वे विश्वास करते थे कि उनके जीवन के ग्यारह दिन छीन लिये गये। ऐसा आवश्यक समझा गया था कि पादरी वाल्मैसिली का नाम जो कि एक विद्वान जैज़्यूइट था और जिसने इस विषय में बहुत स्वार्थ लिया था, छिपा रक्खा जाय, और जब इसी हलचल में ब्रैडले मर गया; तब यह प्रसिद्ध किया गया था कि उसने ईश्वर की ओर से अपने दोष का दण्ड पाया।

यदि मैं इस बड़ी सभा के गुणों का ठीक वर्णन करना चाहूं तो मुझे इस पुस्तक के बहुत सेप त्रे ऐसे विषयों के वर्णन में लगा देने पड़ेंगे जैसे कि डोलाण्ड कृत रंगहीनकारी दूरवीन; राम्सडेन कृत विभाजक कल जिसने पहले पहल ज्योतिष सम्वंधी निरीक्षणों को शुद्धता प्रदान की, मेसन और डिक्सन कृत पृथ्वी तल पर एक अंश की नाप; शुक्र-रवियुति सम्बंधी 'कुक' का महान कार्य्य, उसकी पृथ्वी परिक्रमा, उसका यह प्रमाण कि समुद्री वीमारी जो बहुत दिनों से समुद्रीय यात्राओं को हानि पहुंचा रही है वानस्पतिक चीज़ें खाने से रोकी जा सकती है; ध्रुवीय महा यात्रायें; मैस्केलीन और कैवेन्डिश कृत प्रयोगों द्वारा पृथ्वी के घनत्व गुण का निश्चित होना; हर्शल कृत यूरेनस ग्रह की खोज; कैवेन्डिश और वाट कृत पानी की वनावट; लन्दन और पेरिस के वीच देशान्तर रेखाओं के अन्तर का निश्चय, वोल्टीय राशि का अन्वेषण; हर्शल कृत आकाश की नापें; 'यंग' कृत व्यतिकरण सिद्धान्त की उन्नति और प्रकाश के तरंग सिद्धान्त की स्थापना; जेलखानों और अन्य वड़े भवनों में वायु के आवागमन का प्रवन्ध; गैस द्वारा नगरों में रोशनी करने का प्रचार; सेकेंड सूचक लंगर की लम्बाई का निश्चय, भिन्न२ अक्षांशों में आकर्षण कारक परिवर्तनों की नाप; पृथ्वी की गोलाई नापने के कार्य्य; रास कृत ध्रुवीय यात्रा; डेवी कृत सेफ्टी लैम्प का अन्वेषण और मिट्टियों और खारों का प्रथक्करण;

के ही लिए आवश्यक न थीं वरन एकाकी घरों के लिये भी। तदनन्तर सड़कों पर रोशनी करने का ढंग निकला। पहले पहल गलियों की ओर द्वार रखने वाले मकानों के निवासियों को दबाया गया कि वे अपनी खिड़कियों पर मोमबत्तियां वा दीपक रक्खा करें, और तद-नन्तर वह ढंग जो कारडोआ और ग्रनाडा में बड़े लाभ के साथ प्रच-लित रहा था अर्थात् सार्वजनिक दीपकों का ढंग काम में लाया गया, परन्तु यह ढंग वर्तमान शताब्दी तक (जब गैस द्वारा रोशनी करने का ढ़ंग निकाल दिया गया) पूर्ण न हो पाया था। सड़कों पर दीपक जलाने के ढंग के साथ ही साथ चौकीदारों और पुलिस के प्रबंधों को भी उन्नति दी गई।

सोलहवीं शताब्दी तक यंत्रिक अन्वेषण और दस्तकारी की उन्नतियां घरू और सामाजिक जीवन पर बड़ा प्रभाव डाल रही थीं। शीशे और घड़ियां दीवारों पर दिखलाई देने लगे और अल वों पर पिहाने बनने लगे। यद्यपि कई प्रांतों में बावरचीखानों में अब तक घास फूस जलाई जाती रही, तथापि कोयला का प्रयोग बढ़ने लगा। भोजनागार में मेज़ पर नवीन सुस्वादु भोजन सामग्रियां दिखाई पड़ने लगीं। व्यापार के कारण परदेशी वस्तुएं आने लगीं। उत्तरीय देश के भद्दे पेय पदार्थ हट कर दक्षिणीय देश की उत्तम मदिराएं प्रचलित हुईं। बर्फखाने बनवाये गये। बायु चक्कियों में प्रचलित आटा चालने की रीति अधिक सफेद और अधिक अच्छी रोटियां देती थी। धीरे २ अलभ्य वस्तुएं भी साधारण सी होगईं अर्थात हिन्दुस्तानी अन्न, आलू, टर्की, और सबसे बढ़ कर तमाखू भी मिलने लगी। इटली देश में अन्वेषित (भोजन करने के) कांटों ने अगुलियों का गंदा प्रयोग छोड़ा दिया। ऐसा कहा जा सकता है कि सभ्य मनुष्यों के भोजन में इस समय वास्तविक परिवर्तन हो गया था। चीन से चाय और अरब से कहवा आ गये थे। हिन्दोस्तान से शक्कर का प्रचार हुआ था, और इन वस्तुओं ने बहुत कुछ मदिराओं का प्रयोग हटा दिया। फर्शी क़ालीनों ने पयाल की तहें हटवादीं। कोठों में अच्छे पलंग देख पड़ने लगे और वस्त्रागारों में अधिक स्वच्छ

योग्य बना दिया जितनी कि अगले समय में लोग एक दिन से अधिक समय में कर सकते थे।

रेलवे इंजिन ने केवल मानवी सजीवता का मैदान ही नहीं बड़ा कर दिया, वरन् दूरी को संकुचित करके उसने मानव जीवन की योग्यताओं को भी बढ़ा दिया है। कारीगरी की वस्तुएं और कृषी की पैदावारें शीघ्रता से लाने लेजाने में वह मानवी उद्योग के लिये अति पूर्ण उत्तेजक हो गया।

समुद्र पर धूमपोत चलाने की पूर्णता में क्रानोमीटर के अन्वेषण द्वारा बहुत उन्नति हुई, क्योंकि उसने यह सम्भव कर दिखाया कि कोई जहाज समुद्र में अपना ठीक स्थान जान सकता है। सिकन्दरिया के विद्यालय में वैज्ञानिक उन्नति में बड़ा भारी ऐब यह था कि समय नापने का कोई यंत्र न था और सरदी गर्मी नापने का कोई यंत्र न था अर्थात् क्रानोमीटर और थर्मामिटर न थे। वास्तव में क्रानोमीटर के अन्वेषण के लिये थर्मामीटर का अन्वेषण आवश्यक ही है। जल-घड़ियों से काम लिया गया था पर वे शुद्धता में ठीक न निकलीं। उनमें से एक के विषय में, जिस पर राशिचक्र बना हुआ था और जिसको कतिपय प्राचीन ईसाई लोगों ने विनष्ट कर दिया था, सेन्ट पालीकार्प ने बड़ी सार्थक युक्ति से कहा था कि "इन सब बड़े राक्षसों में एक ऐसा कला कौशल देखा जाता है जो ईश्वर के विरुद्ध है"। सन् १६८० ई० के लगभग तक क्रानोमीटर शुद्धता तक नहीं पहुँचा था। 'हूक' नामक व्यक्ति ने, जो कि न्यूटन का समसामयिक था, उसमें चक्राकार कमानी सहित समता-चक्र लगाया और बहुत प्रकार के घटीयंत्र क्रमशः निकाले गये, जैसे कि लंगरयंत्र डेड़बीट यंत्र, डूप्ले यंत्र, और रिमान ट्वायर यंत्र। सरदी गरमी के परिवर्तन के लिये प्रबन्ध किया गया। 'हैरीसन' और आरनोल्ड ने अन्त में उनकी सूइयों को समयगमन का शुद्ध मापक बना कर अन्ततः उसे पूर्ण ही कर दिया। क्रानोमीटर के अन्वेषण में गाडफ्रे कृत परावर्तनीय षष्ठांश यंत्र का भी अन्वेषण मिला देना चाहिये। इसके कारण जहाज़ हिलते रहने पर भी ज्योतिष सम्बंधी निरीक्षण करना सम्भव हो गया।

घोड़े पर, जिसे उसके मालिक ने बहुत से कपट खेल सिखाये थे,
सन् १६०१ ई० में लिस्बन नगर में अभियोग चलाया गया, और जांच
से पाया गया कि उस पर भूत सवार है, और वह जला दिया गया।
उसके और कुछ दिन बाद बहुत सी जादूगरिनियां जिन्दा जलादी गईं।

खोज और अन्वेषण, एक बार प्रचार पाकर शीघ्रता के साथ
अनिवार्य्य भाव से बढ़ते ही चले गये। उन्हों ने परस्पर एक दूसरे पर
लगातार प्रभाव डाला और सदैव ही अलौकिक शक्तिवाद का शोषण
करते रहे। इन्द्रधनुष की विवेचना को डी डामिनिस ने प्रारम्भ
और न्यूटन ने पूरा किया। उन्हों ने प्रमाणित कर दियो कि वह
ईश्वर का लड़ाई का हथियार नहीं था, वरन पानी के बुन्दो पर
प्रकाश की किरणों के पड़ने का प्रतिफल था। डी डामिनिस मुख्य
विशपवृत्ति और कार्डिनल के मुकुट की आशा के लालच से रोम में
बुलाया गया। एक सुन्दर भवन में ठहराया गया, परन्तु बड़ी साव-
धानी से ताका गया। रोम और इंगलैंड में एकता सुझाने का दोषी
ठहरा कर वह सेंट एनजेलो के किले में कैद कर दिया गया और वहीं
मरा। वह ठठरी में रख कर धर्माध्यक्षों के न्यायालय में लाया
गया, उस पर नास्तिकता का दोष लगाया गया, और उसका मृतक
शरीर नास्तिकवादिनी पुस्तकों के एक ढेर के साथ आग में जला
दिया गया। फ्रैंकलिन ने बिजली और वैद्युति शक्ति को एक ही वस्तु
प्रमाणित कर के जूपिटर को निरस्त्र कर दिया। मिथ्या विश्वास
के आश्चर्यों को सत्यता के आश्चर्यों ने हटा दिया। दोनों प्रकार
की दूरबीनों ने, अर्थात् परावर्तक दूरबीन और तथ्यवर्णदर्शक दूर-
बीन जो अन्तिम शताब्दी में आविष्कृत हुई, मनुष्यों को विश्व के अनन्त
बड़े पदार्थों के भीतर प्रवेश करने, यथा शक्ति उस को भली भांति
पहिचानने, और उसका अनन्त प्रस्तार और उसका अमाप्य समय
जानने के योग्य कर दिया। और थोड़े दिन बाद तथ्यवर्ण प्रदर्शक
खुर्दबीन ने मनुष्य की आंखों के सामने अत्यंत छोटी सांसारिक वस्तुओं
को भी रख दिया। गुब्बारे मनुष्य को बादलों के ऊपर ले जाने लगे
और डाईविंग बेल मनुष्य को समुद्र की तह तक पहुँचाने लगा।

और बहुधा परिवर्तनीय वस्त्र दिखाई पड़ने लगे। बहुत से नगरों में जलकुण्डों और मार्ग-पम्पों के बजाय जल-नल प्रचलित हो गये। छतें जो पुराने समय में धूम धूसरित हुआ करती थीं अब शृंगारिक रंगीन चित्रों से सुशोभित होने लगीं। स्नानागारों में सब लोग जाने लगे, और शारीरिक दुर्गन्ध को छिपाने के लिये इत्र इत्यादि सुगंधित पदार्थों की आवश्यकता कम हो गई। उद्यान विद्या के निर्दोष सुख भोगों की बढ़ती हुई जो बागों में अनेक प्रकार के विदेशी फूलों (जैसे नीलाकृति गुलाब, गोशखिर्स, क्राउन इम्पीरियल, फ़ारसी कमोदिनी, काकुंचकी, और अफरीकन गेंदा) के प्रचार से प्रगट होती थी। गलियों में पालकियां दिखलाई पड़ने लगीं, तदनन्तर बंद गाड़ियां, और तदनन्तर किराये की गाड़ियां चलने लगीं।

यंत्रिक उन्नतियों ने सुस्त देहातियों तक भी अपना आवागमन करलिया और धीरे २ हमारे समय की जोतने, बोने, घास काटने अनाज काटने और कूटने के औज़ारों तक उन्नति कर गई।

भिक्षुक समूह के उपदेश देने पर भी यह बात मानी जाने लगी कि निर्धनता पाप और अज्ञान का द्वारा है और व्यापार द्वारा धन कमाना युद्ध द्वारा शक्ति प्राप्त करने की अपेक्षा कहीं अच्छा है। क्योंकि यद्यपि मानटेस्की का यह कथन सत्य हो सकता है कि "व्यापार भिन्न जातियों को मिलाता तो है, पर भिन्न व्यक्तियों को विरोधी बना देता है और सदाचरण को व्यापारिक वस्तु बना देता है," तथापि केवल व्यापार ही जगत में ऐक्य फैला सकता है और उसके विचार और उसकी आशा सर्वव्यापी शान्ति ही है।

यद्यपि थोड़े पत्रों के बजाय उस उन्नति के ठीक वर्णन के लिये कई एक ग्रंथ चाहिये जो घरू और जातीय जीवन में उस समय हुई जब विज्ञान अपने उत्तम प्रभाव डालने लगा और अन्वेषण शक्ति उद्योग की सहायता करने लगी, तथापि कुछ ऐसी बातें हैं जो बिना वर्णन किये छोड़ी नहीं जा सकती। बारसीलोना के बन्दर से स्पेन के खलीफा बहुत बड़ा व्यापार किया करते थे, और उन्हों ने अपने यहूदी साझियों के साथ बहुत से ऐसे व्यापारिक अन्वेषण किये थे जिन्हें,

कलाओं की बड़ी भारी सफलता ही के विषय में कुछ कहा गया अर्थात् औद्योगिक प्रदर्शनियों और जगत-मेलों के विषय में ही कुछ कहा गया।

यह कैसी सूची है, और तब भी कैसी अपूर्ण है! इसमें एक सदैव बढ़ती हुई मानसिक हलचल की केवल झलक मात्र देख पड़ती है अर्थात् वस्तुओं का एक ऐसा वर्णन जैसे वे संयोगवश दृष्टिगोचर होते हैं। इस साहित्य सम्बंधी और विज्ञान सम्बंधी सजीवता और मध्य युग की स्थिरता के बीच में कितना आश्चर्य्यप्रद भेद है।

इस मानसिक प्रकाश ने जो इस सजीवता के चारों ओर फैला हुआ है मानव जाति के अगणित उपकार किये हैं। रूस में इसने अगणित ग़ुलाम प्रजा को स्वतंत्र करा दिया, और अमेरिका में इसने चालिस लाख हबशी गुलामों को स्वतंत्रा प्रदान की है। मठ–द्वारों के छोटे प्रदेश के बजाय इसने दान का प्रबंध किया है, और राज्य नियम को धनहीनों की ओर उन्मुख किया है। इसने वैद्यक विद्या को उसका वास्तिक धर्म लखा दिया है, अर्थात रोगों को अच्छा करने की अपेक्षा उनका रोकना अधिक अच्छा है। राज्य प्रबंध में इसने वैज्ञानिक ढंगों का प्रचार किया था अर्थात् अनिश्चित और स्वतंत्र राजनियमों को निकाल कर नवीन नियमों के प्रचार से पहले बड़े परिश्रम से सामाजिक दशायें निश्चित करली जाती हैं। जिस ढंग से यह मानसिक प्रकाश मानव जाति को उच्चासीन कर रहा है वह इतना सुस्पष्ट और प्रभावोत्पादक है कि एशिया की प्राचीन जातियां भी उस अनुग्रह में भाग लेना चाहती हैं। हमें यह बात न भूलना चाहिये कि उनके साथ हमारे काम ऐसे होना चाहिये जैसे उनके प्रति-कर्म हमारे साथ हों। यदि उस समय मूर्ति पूजक धर्म का अन्त हो चुका था जब सब देवता रोम में एकत्र किये गये थे और एक दूसरे के सामने रक्खे गये थे; और यदि जब हमारी यात्रा सम्बंधी आश्चर्य्य प्रद सरलताओं द्वारा अनमिल जातियां और विरोधी धर्म (मुसलमानी, बौद्ध और ब्राह्मण धर्म) एकत्र हो गये हैं, तब उन सब का सुधार अवश्य होना ही चाहिये। इस झगड़े में केवल विज्ञान ही सुरक्षित रहेगा,

थर्मामिटर गर्मी के परिवर्तनों की ठीक मात्रा बतलाने लगा और बैरोमीटर वायु का बोझ प्रगट करने लगा। तुलायंत्र के प्रचार ने रसायन विद्या को यथार्थता प्रदान की और पदार्थ का अविनाशी गुण प्रमाणित कर दिया। आक्सीजिन, हाईड्रोजिन और अन्य अनेक गैसों की खोज ने, और अलूमीनम, कैलसीयम और अन्य धातुओं की प्रथकता ने प्रमाणित कर दिया कि पृथ्वी, वायु और जल तत्व नहीं हैं। एक ऐसे साहस के साथ जिसकी प्रशंसा करना अनुचित नहीं है, शुक्र-रवियुत घटना से लाभ उठाया गया और भिन्न देशों में महान् कार्य्य कर्ताओं को भेज कर सूर्य्य से पृथ्वी का अन्तर निश्चित कर लिया गया। सन् १४५६ और १७५९ ई० के बीच में जितनी उन्नति यूरोपियन बुद्धि ने की थी वह हैली के पुच्छल तारे से प्रमाणित हो गई। जब वह अगले समय में निकला था तब लोगों ने उसे ईश्वरीय कोप का आगम सूचक माना था (अर्थात् अति भयंकर क्रोध, युद्ध, महामारी और अकाल का फैलाने वाला)। पोप की आज्ञा से यूरोप भर में सब गिरजाघरों के घंटे उसको डरवाकर भगा देने के लिये बजाये गये थे, और धार्मिक पुरुषों को आज्ञा दी गई थी कि अपनी नैत्यक प्रार्थना में एक प्रार्थना और बढ़ादें। और चूंकि ग्रहणों और अवर्षणों और वर्षाओं के हेतु की गई प्रार्थनाओं का बहुधा बड़ा प्रभाव होता था, इसी हेतु इस समय पर ऐसा प्रसिद्ध किया गया था कि पोप की प्रार्थना ने पुच्छल तारे पर विजय प्राप्त की है। परन्तु इसी बीच में हैली ने कैपलर और न्यूटन के वैज्ञानिक अनुभवानुसार यह बात जानली थी कि उसकी चालें ईसाइयों की प्रार्थनाओं से नहीं पराजित हुईं वरन् अपने निज घनत्व द्वारा दीर्घवृतिक कक्षा में नियमानुसार हुई हैं। यह जान कर कि प्रकृति ने उसकी निडर भविष्य वाणी को पूरा होते हुये देखने का सुअवसर उसे नहीं दिया, उसने भविष्य ज्योतिषियों से प्रार्थना की थी कि सन् १७५९ ई० में उस पुच्छल तारा के पुनरागमन को ताकते रहें, और उस वर्ष में वह पुच्छल तारा अवश्य ही प्रगट हुआ।

प्राटेस्टेंट धार्मिक संधि और उसके काम।

उपरोक्त परिभाषाओं और कामों की समालोचना—इस विरोध की वर्तमान अवस्था और भविष्य आशायें)



जो ईसाई संसार के विचार की वर्तमान दशा को जानता है वह अवश्य इस बात को जानता है कि एक बुद्धि सम्बंधो और धर्म सम्बंधी संकट सन्निकट है। चारों ओर से घटा घिरती आती हुई देखते हैं और आने वाले तूफान के शब्द सुन रहे हैं। जर्मनी में जातीय समाज विदेशी समाज के विरुद्ध तय्यारी कर रहा है। फ्रांस में उन्नत्याकांक्षी मनुष्यों से झगड़ा कर रहे हैं, और उनके झगड़े में उस बड़े देश का राज्यनैतिक बड़प्पन लगभग विनष्ट हो गया है, वा प्रभाव रहित होगया है। इटली में रोमनगर एक समाज्यच्युत राजा का राज्य हो रहा था। सर्वाधिकारी पोप इस बहाने से कि वह राजा कैदी है वैटकिन सभा से अपने अभिशाप प्रकाशित कर रहा है, और अपने बहुत से भ्रमों के पूर्ण प्रमाणों के होते हुये भी अपनी अव्यर्थता प्रगट कर रहा है। एक कैथोलिक धर्माध्यक्ष इस बात को सत्यता सहित प्रकाश करता है कि यूरोप भर की सब सभ्य समाज ईसाई धर्म से खिँच कर साधरण जीवन की ओर झुकती हुई जान पड़ती है। इँगलेंड और अमेरिका में धार्मिक लोगों ने भय सहित यह बात देखली है कि समय के भाव से धर्म की मानसिक जड़ भीतर ही भीतर पोली होगई है। आने वाली विपत्ति के लिये वे यथाशक्ति भली भांति तय्यारी कर रहे हैं।

अति कठिन जांच जो किसी समाज पर आ पड़ती है, वह उस समय होती है, जब उसको अपने धार्मिक बन्धनों से स्वतंत्र होना पड़ता है। यूनान और रोम के इतिहास भली प्रकार प्रगट करते हैं कि ऐसे समय पर कैसे भारी खतरे उठाना पड़ते हैं। परन्तु यह बात किसी धर्म के भाग्य में नहीं बदी कि वह सदैव स्थिति रहे। धर्मों में अवश्य परिवर्तन होते हैं जब मनुष्य की बुद्धि सम्बंधी उन्नति होती है।

क्योंकि उसने हमें विश्व के अधिक भारी विचार दिये हैं, और ईश्वर सम्बंधी विचार अधिक महत्व पूर्ण कर दिये हैं।

वह उद्देश जिसने इस हलचल को सजीवता दी और जिसने इन खोजों और आविष्कारों में जान डाल दी, व्यक्तिवाद था। किसी के चित्त में धन लाभ की आशा थी, और अधिक सज्जन मनुष्यों के चित्त में आदर की आकांक्षा थी। तब इस बात पर आश्चर्य न करना चाहिए कि इस सिद्धान्त ने राजनैतिक रूपधारण किया, और गत शताब्दी में दो अवसरों पर सामाजिक गड़बड़ें पैदा कीं अर्थात अमेरिका और फ्रान्स के राज्य परिवर्तक विद्रोह कराये। अमेरिका के राज्य परिवर्तक विद्रोह से एक महाद्वीप ही व्यक्तिवाद को मिल गया, जहां प्रजापालित राज्यों की अधीनता में वर्तमान शताब्दी के अन्त होने से पहिले ही दश करोड़ मनुष्य (सार्वजनिक रक्षार्थ आवश्यकीय रोकों को छोड़ कर) स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने लगेंगे। और दूसरा अर्थात् फ़रासीसी विद्रोह (यद्यपि उसदेश ने सब यूरोप के राज्य नैतिक रूप को दुरुस्त कर दिया है, और युद्ध सम्बन्धी सफलताओं में बहुत प्रख्यात हो चुका है) अब तक अपनी इच्छाओं को पूरा नहीं कर सका और बार बार फ्रांस पर बड़ी भयंकर विपत्तियां डाली हैं। फ्रान्स के द्विरूपक शासन विधान ने, (अर्थात् भौतिक और अध्यात्मिक अधीनता स्वीकार करने से) उसको वर्तमान उन्नति का मुख्य अगुआ और उसी के साथ विरोधी भी बना दिया है। एक हाथ से फ्रान्स ने बुद्धि को राज्य सिंहासन दिया है और दूसरे हाथ से पोप को पुन:स्थापित किया है और स्थिर किये हुये है। उसके व्यवहार की इस नियम विरुद्धता का अन्त न होगा जब तक कि वह अपनी सर्व सन्तान को उत्तम शिक्षा न देगा चाहे वह सन्तान अति दीन हीन कृषक ही क्यों नहो।

फ़रासीसी राज विद्रोह ने वर्तमान सम्मतियों पर जो मानसिक आक्रमण किया था वह वैज्ञानिक भाव का न था, वरन् साहित्य भाव का था। वह गुण दोष विवेचक और आक्रमणकारक था। परन्तु विज्ञान कभी आक्रमणकारी नहीं हुआ। विज्ञान सदैव अपना

होगा। इसमें भी उसे सीडन की लड़ाई से निराश होना ही बदा था।

अब आगे बहुत दिनों तक बिदेशी लड़ाइयों से कुछ अधिक आशा न रख कर रोम ने यह देखना चाहा कि भीतरी उपद्रव का क्या फल होता है, और जर्मन राज्य की वर्तमान हलचल उसी की करतूतों का फल है।

यदि अस्ट्रिया वा फ्रान्स बिजयी होता तो जर्मनी सहित प्रोटेस्टैंट धर्म पराजित हो जाता। परन्तु जिस समय ये सैनिक हलचलें हो रही थीं, एक भिन्न प्रकार की हलचल अर्थात बुद्धि सम्बंधी हलचल आरम्भ हुई। उसका सिद्धान्त यह था कि पुराने नियमों और कार्य्यों को फिर से प्रचलित करना चाहिये और उनको खूब बढ़ाना चाहिए, फल चाहे कुछ ही क्यों न हो।

केवल यही नहीं कहा जाता था कि पोप को लौकिक राजाओं के साथ २ सब देशों के शासन बिधान में भाग लेने का ईश्वर प्रदत्त अधिकार है, वरन यह भी कहा जाता था कि इस बात में रोम का प्रभुत्व अवश्य मानना ही चाहिए, और आपुस के झगड़ों में राजाओं को रोम की आज्ञानुसार ही काम करना चाहिए।

और इस कारण से कि विज्ञान की उन्नति ही से रोम की स्थिति बिगड़ी थी, रोम ने अपनी सीमाएं निरूपित करना चाहीं और अपने अधिकार की सीमाएं निश्चित करना चाहीं और सब से बढ़ कर उसने वर्तमान सभ्यता की निन्दा करना आरम्भ कर दिया।

सन् १८४८ ई० में गेईटा से पोप के लौट आने के थोड़े ही दिन बाद ये युक्तियां सोची गईं, और जेज्यूइट लोगों की सलाह से आरम्भ भी हो गईं। ये जेज्यूइट लोग, इस आशा से कि ईश्वर असम्भव बातें भी करदेगा, अनुमान करते थे कि बुढ़ापे में पोप शासन फिर सशक्ति हो सकता है। क्यूरिया के कार्य्य कर्ताओं ने राज्य सम्बंध में धार्मिक सम्प्रदाय की पूर्ण स्वतंत्रता प्रगट करदी, बिशप लोगों को पोप के अधीन बतलाया और बड़े पादरियों को बिशपों के अधीन बताया, प्रोटेस्टैंट लोगों को अपनी नास्तिकता छोड़ कर फिर असली धर्म की ओर लौट आना उचित धर्म कहा गया, और सब प्रकार की

कितने देश ऐसे हैं जो अब भी उसी धर्म को मान रहे हैं जिसे वे हज़रत ईसा के जन्म समय में मानते थे ?

अन्दाज़ किया गया है कि यूरोप महाद्वीप की पूर्ण जन-संख्या लगभग तीन अरब एक करोड़ के है। इनमें से एक अरब पचासी करोड़ रोमन कैथोलिक हैं, और तेतीस करोड़ ग्रीक कैथोलिक हैं। प्रोटेस्टेंट लोगों की संख्या इकहत्तर करोड़ है जो बहुत सी सम्प्रायों में विभाजित है। पचास लाख यहूदी हैं और सत्तर लाख मुसलमान।

अमेरिका की सम्प्रदायों के धार्मिक अवान्तर सम्प्रदायों की गणना ठीक नहीं दी जा सकती। सब ईसाई धर्मावलम्बी दक्षिणीय अमेरिका रोमन कैथोलिक मत का है। यही बात मध्य अमेरिका और मैक्सिको के और स्पेनिश और फरासीसी राज्य निवासियों के विषय में भी कही जा सकती है। संयुक्त राज्य और कनाडा में प्रोटेस्टेंट धर्मावलम्बी अधिक-तर हैं। आस्ट्रेलिया का भी यही हाल है। हिन्दोस्तान में ईसाइयों की थोड़ी सी जन संख्या मुसलमानों और अन्य पूर्वीय जातियों के सामने कुछ है ही नहीं। सब वर्तमान समाजों में से रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय बहुत अधिक फैली हुई है, और बहुत दृढ़ता से संगठित है। वह सम्प्रदाय धार्मिक सम्मेलन की अपेक्षा अधिकतर राज्यनैतिक सम्प्रदाय है। उसका सिद्धान्त यह है कि सब शक्ति धर्माध्यक्षों की है और दुनियादार लोगों के लिये केवल यही अधिकार है कि उनकी आज्ञा मानें। प्राचीन काल के ईसाई धर्म में सम्प्रदायों के जो रूप थे वे धीरे२ एक पूर्णाधिकारी के रूप में निमग्न हो गये हैं, और उसके एक मुखिया को ईश्वर-प्रतिनिधि मानते हैं। यह सम्प्रदाय कहती है कि वह ईश्वर आज्ञा जिसके अनुसार वह काम करती है ऐसी है जिसमें लौकिक राज्य प्रभाव भी सम्मिलित है और उसे अधिकार है कि वह लौकिक राज्यों को अपने काम में लावे, परन्तु राज्य को कोई अधिकार नहीं कि वह उसके कामों में हस्तक्षेप करे, और यह भी मानती है कि प्रोटेस्टेंट देशों में भी वह आज्ञा लौकिक राजाओं से मिल कर प्रबंध करने वाली नहीं है, वरन सर्वाधिकारी शक्ति है। वह सम्प्रदाय आग्रह करती है कि राज्य को उस वस्तु पर

करने के लिये बुलाये जाते हो जो पहलेही से एक अव्यर्थ पोप द्वारा दी जा चुकी हैं। स्वच्छन्द वादविवाद करने का किसी को विचार तक न था। सभाओं की लिखित कार्यवाही देखने की किसी को आज्ञा न थी। विरोधी प्रतिनिधियों को कुछ कहने की आज्ञाही नहीं दी गई। २२ जनवरी सन १८७० ई० में एक अर्जी दी गई जिसमें पोप की अव्यर्थता को भली भांति निरूपण कर देने के लिये निवेदन किया गया था। थोड़ी सम्मतियों के विरोधवाली अरज़ी भी पेश की गई थी। जिस पर थोड़ी सम्मतियों वाले विचारों के अनुसार काम करना मना कर दिया गया था और उनका प्रकाशन भी रोक दिया गया था। और यद्यपि क्यूरिया सभा ने बहुत अधिक सम्मतियों वाली शर्त रक्खी थी, तथापि यह आज्ञा जारी करना उचित समझा गया कि प्रतिवाद करने के लिये यह आवश्यकता नहीं है कि लगभग सब ही सम्मतियां एक ओर हो जायं, वरन कुछही अधिक सम्मतियां काफी हैं। कम सम्मतियों के एतराज़ों पर विलकुल ध्यान नहीं दिया जाता था।

ज्यों २ सभा अपने उद्देशों की ओर बढती थी त्यों २ विदेशी राजा उसके प्रमत्त निश्चय से भयभीत होते जाते थे। वायना के मुख्य धर्माध्यक्ष की लिखी हुई और बहुत से कार्डिनलों और मुख्य विशपों की दस्तख़ती अर्जी में पोप से निवेदन किया गया कि अव्यर्थता वाला सिद्धान्त विचारार्थ उपस्थित न किया जाय, क्योंकि धार्मिक सम्प्रदाय को इस समय एक ऐसा झगड़ा करना है जिसे पहले लोग जानतेही न थे। और यह झगड़ा उन लोगों से करना है जो धर्म को मानव प्रकृति के लिये एक हानिकारी प्रथा कहते हैं। और यह एक असमय बात है कि उन कैथोलिक जातियों पर जो इतनी अधिक धूर्तताओं से ललचा लिये गये हैं, टेण्ट सभा से प्रकाशित सिद्धान्तों की अपेक्षा अधिक सिद्धान्तों का भार डाला जाय। उस निवेदन पत्र में यह भी लिखा था कि विज्ञान के साथ धर्म के सम्बंधों का निरूपण जो पूछा गया है वह धर्म के शत्रुओं को कुछ नवीन अस्त्र दे देगा जिनसे वे लोग कैथोलिक सम्प्रदाय के विरुद्ध अच्छे अच्छे आदमियों का क्रोध उभाड़ सकेंगे। आस्ट्रिया देश के प्रधान अमात्य ने पोप शासन के प्रधान अधि-

उदासीनता को बहुत बुरा ठहराया। दिसम्बर सन् १८५४ ई० में विशप लोगों की एक समाज में पोप ने पापरहित गर्भाधान के सिद्धान्त का प्रकाश किया था। उसके दश वर्ष बाद उसने सुविख्यात गश्ती चिट्ठी और नियमावली का प्रचार किया।

वह गश्ती चिट्ठी ता: ८ दिसम्बर सन १८६४ ई० को लिखी गई थी। उसका मसौदा विद्वान धर्माधिकारियों ने लिखा था और तदनन्तर होली आफिस के सभासदों ने वादविवाद करके उसकी जांच की थी, तदनन्तर वह चिट्ठी पोप के प्रतिनिधियों के पास भेजी गई थी, और अन्त में पोप और कार्डिनल लोगों ने भी उसे पढ़ा था।

बहुत से पादरियों ने उस चिट्ठी में लिखी हुई वर्तमान सभ्यता की निन्दा पर एतराज किया था। कतिपय कार्डिनल उससे सहमत नहीं थे। कैथोलिक समाचारपत्रों ने उसे स्वीकार तो किया, पर सन्देह और खेद के साथ। प्रोटेस्टेंट राज्यों ने उसे रोका नहीं, कैथोलिक राज्य उससे भयभीत हो उठे। फ्रान्स देश में केवल उसका वह भाग प्रकाशित होने दिया जिसमें ज्युबिली करने की विज्ञप्ति थी। आस्ट्रिया और इटली ने उसका प्रचार तो होने दिया, पर अपनी मंजूरी नहीं दी। कैथोलिक देशों के राज्यनैतिक पत्रों और कानून बनाने वाली सभाओं ने उसका अच्छा स्वागत नहीं किया। बहुत लोगों की शिकायत थी कि वह सम्भावतः धार्मिक सम्प्रदाय और वर्तमान समाज के बीच वाले भेद को और अधिक बढ़ा देगी। इटली के समाचार पत्रों ने उसे पोप शासन और वर्तमान सभ्यता के बीच में ऐसी लड़ाई करा देने वाली वस्तु समझी जिससे फिर कभी सुलह या संधि न हो सके। यहां तक कि स्पेन में भी ऐसे समाचार पत्र थे, जिन्होंने "वर्तमान सभ्यता को कलंकित करने और अभिशाप लगाने में रोम के दरबार के इस हठ और अंधापन" पर खेद प्रगट किया था।

वह (गश्ती चिट्ठी) यों निन्दा करती है कि "यह अत्यंत हानिकारी और मूर्ख सम्मति है कि विचार शक्ति और ईश्वर भक्ति में

दायें उनके विनाश को प्रकाश करने वाली कही जाती थीं। कहा गया था कि ल्यूथर के अनुगामी लोग यूरोप भर में सर्वाधिक त्यागनीय मनुष्य हैं, यहां तक कि स्वयं पोप यह मान कर कि सब संसार भर के लोग इतिहास भूल गये हैं, इस बात के कहने में न हिचका कि "जर्मनी निवासियों को जानना चाहिये कि रोमन सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्य कोई धार्मिक सम्प्रदाय स्वच्छंद और उन्नतिकारी सम्प्रदाय नहीं है।"

इसी समय में जर्मनी के पादरियों में पोप की ज़बरदस्ती का प्रतिवाद करने के लिये और उसे रोकने के लिये एक समाज स्थापित हुई। उस समाज ने इस बात का प्रतिवाद किया कि ईश्वर के सिंहासन पर एक आदमी विराजे, अर्थात कोई किसी प्रकार का ईश्वर प्रतिनिधि हो नहीं सकता, । और वैज्ञानिक विश्वासों को धार्मिक अधिकारों के अधीन करने से इन्कार कर दिया। बाज़ २ मनुष्य स्वयं पोप को नास्तिकता का दोष लगाने में नहीं हिचके । इन अनाज्ञाकारियों को समाजच्युत करने का काम प्रारम्भ कर दिया गया, और अन्त में यह कहा गया कि कोई २ प्रोफेसर और शिक्षक अपनी २ जगहों से निकाल दिये जायें और पोप की अव्यर्थता माननेवाले लोग उन जगहों पर रक्खे जायें । जर्मन राज्य ने इस दरख्वास्त को पूरा करने से इन्कार कर दिया । जर्मनी राज्य पोप राज्य से प्रेमभाव बनाये रखने का बहुत इच्छुक था । वह अध्यात्मिक झगड़े में सम्मिलित नहीं होना चाहता था, परन्तु धीरे धीरे उसे विवश यह विश्वास करना पड़ा कि यह झगड़ा केवल धार्मिक नहीं है वरन राज्यनैतिक है। अर्थात् पोप यह देखना चाहता है कि मैं एक राज्य को दूसरे राज्य के विरुद्ध लड़ा सकता हूं या नहीं । एक व्यायामशाला में एक शिक्षक समाजच्युत किया गया और जब राज्य से उसको मौक़ूफ़ कर देने के लिये कहा गया तब राज्य ने इन्कार कर दिया। सम्प्रदायिक अधिकारियों ने धर्म पर आघात करना कहकर इस बात की निन्दा की । सम्राट ने अपने मंत्री का पक्ष किया। अव्यर्थवादी समाज ने सम्राट को धमकाया कि सब अच्छे २ कैथोलिक लोग विरोधी हो

कारी के पास एक प्रतिवाद पत्र भेजा जिसमें उसने सूचित किया था कि वह कोई ऐसा काम न करे जो आस्ट्रिया के अधिकारों पर हस्तक्षेप का कारण हो सके। फ़रासीसी सरकार ने भी एक पत्र लिखा था जिसमें यह सुझाया था कि एक फ़रासीसी विशप को आज्ञा मिलना चाहिये कि वह सभा को फ्रान्स की दशा और फ्रान्स के अधिकार समझा दे। इसका उत्तर पोप सरकार की ओर से यह था कि एक विशप ये दो काम नहीं कर सकता कि वह राज्य दूत भी हो और सभा का एक धार्मिक मेम्बर भी हो। इसके अनन्तर फ़रासीसी सरकार ने एक बहुत बिनीत पत्र में कहा था कि सार्वजनिक सम्मतियों का सिद्धान्त होजाने से रुकजाने का कारण विशप लोगों की नरमी और पोप की दूर दर्शिता है। और अपने नागरिक और राज्यनैतिक कानूनों को धार्मिक राज्यों के हस्तक्षेपों से बचाने के लिये सार्वजनिक बुद्धि और फरासीसी कैथोलिक लोगों की स्वदेश भक्ति का भरोसा है। नार्थ जर्मन "कान्फीडरेशन" भी इन एतराजों में सम्मिलित हो कर पोपराज्य को उन पर बिचार करने के लिये बहुत दबा रही थी।

२३ अपरैल को वान आरनीम नामक जर्मन राज्यदूत ने डैरू नामक फ़रासीसी मंत्री से मिलकर क्यूरिया सभा को यह सुझाया कि मध्ययुग के विचारों का फिर से प्रचार करना अनुचित है। इस भांति उत्साहित किये जाने से थोड़े से विशप लोगों ने इस समय चाहा कि पोप की अभ्यर्थता पर बादविवाद करने से पहिले लौकिक शक्ति के साथ अध्यात्मिक शक्ति के सम्बंध निश्चित हो जाना चाहिये। और यह भी निश्चित हो जाना चाहिये कि सेन्ट पीटर और उसके उत्तराधिकारियों को राजाओं और सम्राटों पर आज्ञा चलाने की शक्ति हजरत ईसा ने दी थीं या नहीं।

इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया गया, यहां तक कि कुछ दिन ठहरने तक की कृपा नहीं दिखाई गई। जैज्यूइट लोग जो इस हलचल का मूलाधार थे, इस सभा में अपनी युक्तियों को ज़बरदस्ती निबाह ले गये। सभा ने अपने को सार्वजनिक गुण दोष विवेचना से बचाने के लिये कोई युक्ति उठा नहीं रक्खी। उसकी कार्य्यवाही बहुत

जान लेगा कि यह बात कैसे हुई कि उन्हीं जातियों ने सर्वाधिक उन्नति की है जिन्होंने दोहरी शासन प्रथा का भार अपने कंधो से फेंक दिया है। वह यह भी लख लेगा कि फ्रान्स देश पर जो फ़ालिज गिरा है उसका कारण क्या है। एक ओर तो फ्रान्स यूरोप का अगुआ होना चाहता है और दूसरी ओर पुरानी लकीर का फ़कीर भी बना रहना चाहता है। निज देश निवासी अपढ़ श्रेणी के लोगों को संतुष्ट करने को वह ऐसी कूटनीति पर चलता है जिसको वहां के समझदार लोगों को अवश्य दूषित समझना चाहिये। दोनों राज्य प्रणालियां जिनके अधीन वह रहता है ऐसी समतौल हैं कि कभी कोई बढ़जाती है कभी कोई, और बहुधा एक दूसरे को अपने तात्पर्य पूर्ण करने का द्वारा बना लेते हैं।

परन्तु इस दोहरी प्रथा का अब अन्त होने वाला है। उत्तरीय जातियों के लिये, जो कम बिचारवान और कम व्यर्थविश्वासी थीं, वह प्रथा बहुत दिनोंसे असह्य हो चुकी थी। उन्होंने सरासरी तौर से उसे रिफ़ारमेशन के समय में ही, रोम की ओर से प्रतिवाद और वहाने होने पर भी अस्वीकार कर दिया था। रूस ने जो शेष सब देशों से अधिक सुख सम्पन्न था, किसी विदेशी अध्यामिक शक्ति के प्रभाव को कभी नहीं माना। वह इस बात का घमंड करता था कि मैं प्राचीन यूनानी रीति का प्रेमी बना रहा। और उसे पोप-शासन में सिवाय प्राचीन धर्म विरोध के और कुछ न देख पड़ा। अमेरिका में लौकिक और अध्यात्मिक शक्तियां पूर्णतः प्रथक २ रही हैं। अर्थात अध्यात्मिक शक्ति को कभी यह सुअवसर नहीं दिया जाता कि वह लौकिक शक्ति के कामों से कुछ सम्बंध रक्खे, यद्यपि और सब भांति से उसे पूर्ण स्वतंत्रता दी गई है। नवीन दुनिया (अमेरिका) की दशा से भी हम सन्तुष्ट हैं कि ईसाई धर्म के दोनों रूपों (कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट) ने अपनी २ बढ़ने की शक्ति विनष्ट कर दी है, उनमें से कोई भी अपनी स्थिर सीमा से आगे नहीं जा सकता, अर्थात कैथोलिक संयुक्त-राज्य कैथोलिक ही रहते हैं, और प्रोटेस्टेंट, प्रोटेस्टेंट ही रहते हैं। और प्रोटेस्टेंट समूह में

जायेंगे, और उससे कह दिया कि पोप से झगड़ा करने में राज्यशासन विधान बदला जा सकता है और बदलनाही पड़ेगा। अब यह बात प्रत्येक मनुष्य को स्पष्ट विदित हो गई कि प्रश्न यह है कि राज्य-शासन प्रणाली में राज्य का मालिक किसको होना चाहिये, लौकिक राज्यशासन को वा रोमन धार्मिक सम्प्रदाय को ? यह बात स्पष्टही असम्भव है कि मनुष्य ऐसे दो राज्यों के अधीन रह सकें जिनमें से प्रत्येक एक दूसरे के कथन को व्यर्थ ठहराता है। यदि राजा रोमन धर्म सम्प्रदाय की अधीनता न स्वीकार करे तो दोनों में शत्रुता हो जाय। इस भांति रोम द्वारा यह झगड़ा जर्मनी के मत्थे मढ़ा गया। यह झगड़ा एक ऐसा झगड़ा है जिसमें वर्तमान सभ्यता से विरोध रखने के कारण रोम स्पष्टही अत्याचारी प्रमाणित होता है।

राज्य ने, अब अपने विरोधी का अस्तित्व मान कर अपना बचाव इस भांति किया कि सरकारी पूजन प्रबंध सम्बंधी विभाग से कैथेलिक लोगों का विभाग तोड़ दिया। यह बात सन १८७१ ई० के मध्य ग्रीष्म ऋतु में हुई। अगले नवम्बर मास में राजकीय पार्लीमेन्ट ने एक क़ानून बनाया कि अपने ओहदे के धर्म के विरुद्ध काम करने वाले धर्माचार्य्य गण यदि कोई ऐसा काम करें जिससे साधारण प्रजा की शांति भंग हो तो उनको साधारण दोषियों की भांति दण्ड दिया जाय। और इस सिद्धान्त को मान कर कि किसी जाति का भविष्य उसी के हाथ में रहता है जिसके हाथ में शिक्षा विभाग रहता है, एक हलचल हुई कि धार्मिक सम्प्रदाय से शिक्षा विभाग प्रथक कर लिया जाय।

जेज्यूइट समाज जर्मनी देश भर में एक ऐसी समाज को बढ़ा रहा था और शक्तिमान कर रहा था जिसका मूल आधार इस नियम पर था कि धार्मिक बातों में राज्य का क़ानून अवश्य माननीय नहीं है। बस यही काम खुल्लमखुल्ला बग़ावत का था। तब क्या राज्य को डर जाना चाहिये ? अरमीलेन्ड के बिशप ने खुल्लम खुल्ला कह दिया कि मैं उन राज्यकीय क़ानूनों को नहीं मानूंगा जो धार्मिक सम्प्रदाय से सम्बंध रखते होंगे। राज्य ने उसकी तनख़ाह बंद कर दी, और यह देख कर कि जब तक जैज्यूइट लोग देश में रहेंगे तब तक शान्ति न

से दूसरे सिरे तक पहुँचता है। और सब चीज़ों को समता रखने की आज्ञा देता है। वह प्रत्येक वस्तु को देखता है यहां तक कि उन वस्तुओं को देखता है जो उसके बनाये व्यक्तियों की स्वतंत्र क्रिया द्वारा प्रगट होती हैं"।

"ईश्वर वाणी के विषय में"—पवित्र माता, धार्मिक सम्प्रदाय की यह सम्मति है कि मानवी बुद्धि के प्राकृतिक प्रकाश द्वारा ईश्वर निश्चित रूप से जाना जा सकता है, परन्तु उसकी ऐसी भी मरज़ी है कि वह स्वयं अपने को और अपनी इच्छा की सदैव सत्य आज्ञाओं को अलौकिक ढंग से प्रकाशित करे। ये अलौकिक आज्ञा प्रकाशन, जैसा कि ट्रेन्ट की पवित्र सभा ने कहा है, प्राचीन और नवीन टेस्टामेंट ग्रंथों में हैं, जैसा कि वह सभा की आज्ञाओं में गिनाये गये हैं, और प्राचीन वल्गेट लैटिन प्रति में भी पाए जाते हैं। ये पवित्र वाक्य हैं क्योंकि वे पवित्र आत्मा की प्रेरणानुसार लिखे गये हैं। उनका कर्त्ता ईश्वर है और इस रूप से वे धार्मिक सम्प्रदाय को सौंपे गये हैं"।

"और अशान्त चित्तों को रोकने के हेतु, जो कदाचित अशुद्ध व्याख्या करने लगें, यह आज्ञा दी जाती है (ट्रेंट की सभा के निश्चय को नूतन करते हुये] कि कोई मनुष्य धर्म ग्रन्थों का पवित्र सम्प्रदाय कृत अर्थ से विरुद्ध कुछ अर्थ न करे, क्योंकि वैसा अर्थ करने का अधिकार सम्प्रदाय ही को है"।

"धार्मिक विश्वास के विषय में"—इस कारण से कि मनुष्य ईश्वर को अपना मालिक मानने के लिये बिवश है और उत्पत्ति की हुई बुद्धि अनुत्पादित सत्यता के पूर्णतः अधीन है, मनुष्य का धर्म है कि जब ईश्वर अपने वाक्यों को प्रकाशित करता है तो वह उस प्रकाशन को बिश्वास सहित माने। यही बिश्वास अलौकिक गुण है और उस मनुष्य के मोक्ष का प्रारम्भ है, जो ईश्वर प्रेरित वाक्यों को सत्य मानता है। और वह सत्य मानना इस कारण से न हो कि बुद्धि के प्राकृतिक प्रकाश द्वारा उनमें स्वाभाविक सत्यता देख पड़ती है, वरन इस हेतु से कि वे ईश्वर प्रकाशित हैं। परन्तु तो भी इस कारण से कि वह विश्वास बुद्धि के अनुकूल हो, ईश्वर ने दैवी

अवान्तर भेद होने का स्वभाव कम होता जाता है। भिन्न जातियों के लोग स्वतंत्रता सहित सम्बंध करते हैं। वे लोग अपनी वर्तमान सम्मतियां समाचार पत्रों से एकत्र करते हैं, न कि धर्मसम्प्रदाय से।

नवां पियस नामक पोप इन सब हलचलों में जिनका हम वर्णन कर आये हैं, दो तात्पर्य्यों पर लक्ष दिये हुये था; (१) पोप का परिपूर्ण "अधिकार निमज्जन" जिस पर एक आध्यात्मिक शक्ति वाला स्वतंत्र व्यक्ति ईश्वराधिकारों सहित मुखिया रहे, (२) ईसाई धर्मावलम्बी सब जातियों की बुद्धि संबंधी उन्नति पर अधिकार रखना। इनमें से पहिले का न्याययुक्त फल राजकीय हस्तक्षेप है। पोप आग्रह करता है कि सब दशाओं में लौकिक राज्यशक्ति आध्यात्मिक शक्ति के अधीन रहनी चाहिये और धार्मिक सम्प्रदाय के स्वार्थों के प्रतिकूल सब राज्यनियम मंसूख कर देना चाहिये। उन नियमों के अनुसार चलना धार्मिक नहीं है। गत पत्रों में मैं संक्षेपतः कतिपय उन कठिनाइयों का वर्णन कर आया हूं जो इस कूटनीति के पोषण करने के उद्योग में हो चुकी हैं।

अब मैं उस ढंग पर विचार करता हूं जिस ढंग से पोप शासन अपना बुद्धि सम्बंधी अधिकार स्थापित करने का प्रस्ताव करता है, और किसी भांति वह विज्ञान नामक अपने शत्रु के साथ अपना सम्बन्ध निर्णीत करता है, और मध्ययुग की दशा को फिर से लौटा लाना चाहता है, वर्तमान सभ्यता का विरोध करता है, और वर्तमान समाज की निन्दा करता है।

गश्ती चिट्ठी और धार्मिक नियमावली से वे नियम प्रगट होते हैं जिनको कार्य्य में परिणत करना वैटिकन कौन्सिल का मुख्य तात्पर्य था। नियमावली सर्वेश्वरवाद, प्रकृति वाद और बुद्धि स्वातंत्र्य वाद को कलंकित ठहराती है, और ऐसी सम्मतियों की (जैसे कि सब संसार ही ईश्वरमय है) निन्दा करती है। प्रकृति को छोड़ कर अन्य कोई ईश्वर नहीं है, आध्यात्मिक मामले भी वैसे ही समझे जांय जैसे दार्शनिक बातें, वे ढंग और वे नियम जिनके द्वारा प्राचीन विद्वानों ने अध्यात्म-विद्या की उन्नति की थी अब समय के

क्योंकि ईश्वर प्रेरित धर्म सिद्धान्त, अन्य दार्शनिक खोजों की भांति मानवी बुद्धि द्वारा सम्पूर्ण करने के लिये नहीं उपस्थित किया गया, वरन वह ईसा के अनुगामियों को पवित्र कोष की भांति अच्छी भांति सुरक्षित रखने और सावधानी से प्रचार करने के हेतु सौंपा गया है। इस लिये पवित्र धर्म के सब ही सिद्धान्तों की व्याख्या सदैव ऐसी करनीं चाहिये जो धार्मिक सम्प्रदाय के भाव और अर्थ के अनुकूल हो। यह बात भी विधिवत नहीं है कि अधिक उत्तम व्याख्या के बहाने या आड़ से उस अर्थ से अलग जा पड़े। इस लिये ज्यों २ पीढियां और शताब्दियां गुज़रती जाती है त्यों २ प्रत्येक मनुष्य की समझ, ज्ञान और बुद्धि को, एक एक करके और सम्प्रदाय भर की एकत्र करके, खूब बढ़ना चाहिये, पर केवल उसीके अनुकून (अर्थात् एक किसी सिद्धान्त के भाव और अर्थ और विश्वास को ठीक वैसा ही) रखना चाहिये और उसे विगाड़ना न चाहिये।"

अन्य व्यवस्थाओं में से निम्न लिखित व्यवस्था प्रकाशित की गई थी:—उस मनुष्य को समाजच्युत समझना चाहिये

(१) जो एक सच्चे ईश्वर के होने से इन्कार करता है, जो सब दृष्ट और अदृष्ट वस्तुओं का वनानेवाला और मालिक है।

(२) जो विना संकोच कहता है कि पदार्थ के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु है ही नहीं।

(३) जो कहता है कि ईश्वर का तत्व और अन्य सब वस्तुओं का तत्व एकही है।

(४) जो कहता है कि दोनों प्रकार की (अर्थात दैहिक और आत्मिक) सीमाबद्ध वस्तुयें, वा कम से कम आध्यात्मिक वस्तुयें ईश्वरीय तत्व से निकली हैं, वा यह कहता है कि ईश्वर तत्व अपने स्वयं प्रकाश वा उन्नति द्वारा सब कुछ हो जाता है।

(५) जो इस वात को नहीं मानता कि सर्व संसार और सर्व सांसारिक वस्तुएं जो उसमें हैं ईश्वर द्वारा नास्ति से अस्ति की गई हैं।

(६) जो यह कहै कि मनुष्य अपने उद्योग से और नित प्रति उन्नति द्वारा अन्त में सचाई और नेकी को पासकता है और उसेपाना ही चाहिये।

चमत्कार और भविष्य वाणियों को सम्मिलित कर देने की इच्छा की, जो उसकी सर्वशक्तिमानी और ज्ञान को प्रगट करने वाले ऐसे प्रमाण हैं, जिनको सब मनुष्य समझ सकते हैं। ऐसी ही बात हम मूसा के कथनों में, अन्य देवदूतों के कथनों में और सर्वोपर हज़रत ईसा के कथनों में पाते हैं। इस हेतु उन सब बातों पर विश्वास करना चाहिये जो ईश्वर कृत ग्रंथों में लिखी हुई हैं, वा मौखिक कथाओं की भांति प्रचलित चली आती हैं, और जिन्हें धार्मिक सम्प्रदाय ने अपने उपदेशों द्वारा विश्वासनीय कहा है"।

"बिना इस विश्वास के न तो कोई उसके योग्य हो सकता है और न अमर जीवन पावेगा, जब तक कि अन्त तक उसी में निमग्न न रहे। इस लिये ईश्वर ने अपने इकलौते पुत्र द्वारा अपने प्रकाशित शब्दों के रक्षक और उपदेशक की भांति धार्मिक सम्प्रदाय को स्थापित किया है। क्योंकि वे चिन्ह जो ईसाई धर्म के विश्वास को प्रगट करते हैं, केवल कैथोलिक सम्प्रदाय में पाये जाते हैं। नहीं वरन इससे भी कुछ अधिक, यह सम्प्रदाय स्वयं, अपने प्रचार के विचार से अपनी प्रसिद्ध पवित्रता के विचार से भली बातों में बड़ी सफलता के विचार से एकता के विचार से और स्थिरता के विचार से विश्वास किये जाने का बहुत बड़ा और प्रगट दावा करती है, और ईश्वरीय दूत होने का अकाट्य प्रमाण देती है। इस भांति यह सम्प्रदाय अपनी सन्तानों को दिखलाती है कि जो विश्वास वह रखती है, वह अति सुदृढ़ मूलाधार पर स्थित है। और उस हेतु उन लोगों की दशा इससे बिलकुल विरुद्ध है जो ईश्वर प्रदत्त विश्वास से कैथोलिक सत्यता को मानते हैं और जो मानवी सम्मतियों से बहक कर असत्य धर्म के अनुगामी हो रहे हैं"।

"विश्वास और बुद्धि के विषय में"--इसके अतिरिक्त कैथोलिक धर्म सम्प्रदाय सदा से मानती आई है और अब भी मानती है कि ज्ञान दो प्रकार के हैं, जिनमें से प्रत्येक अपने नियम और उद्देश्य के कारण एक दूसरे से पृथक है। उनके नियम में प्रथकता है, क्योंकि एक ज्ञान में तो हम प्राकृतिक बुद्धि से जानते हैं, और दूसरे में ईश्वर

विज्ञान का दोष लगाया। इस भयंकर नाम के कारण ही उनकी अखों के सामने एक अनिश्चित रूपधारी भूत आखड़ा हुआ जान पड़ता था, जो घंटा २ में घटता बढ़ता था और डरावनी शकल रखता था। कभी २ यह एलाईएन्स उस बड़े भूत से सभ्य शब्दों में बात चीत करता था, और कभी कभी निन्दा के ढंग से।

एलाईएन्स ने यह समझने में भूल की कि वर्तमान विज्ञान रिफारमेशन का सच्चा और जुरीवां पैदा होने वाला भाई है। वे साथ ही साथ गर्भ में आये और साथ ही साथ पैदा हुये। वह एलाईएन्स यह भी न देख सका कि यद्यपि बहुत सी विरोधी संप्रदायों को एक करना असम्भव है तो भी वे सब सम्प्रदायें विज्ञान के विषय में एक दूसरे की सम्बंधिनी बन जायेंगी, और यह भी न देख सका कि उस विज्ञान के साथ अविश्वास करना नहीं, वरन उसके साथ खूब मेल रखना ही उन सम्प्रदायों की सच्ची नीति है।

अब कैथोलिक धर्म की संस्था पर जैसा कि वैटिकन कौन्सिल ने निश्चित किया है कुछ विचार करना शेष रहा। ऐसी वस्तुओं के लिये जो भिन्न २ व्यक्तियों के साथ एक सा सम्बंध रखती हैं उन्हें एक ही विचार से देखना चाहिये। इस उदाहरण में जिस पर हम इस समय विचार कर रहे हैं, एक धार्मिक पुरुष अपनी स्वयं विशेष स्थिति रखता है और विज्ञानी पुरुष की भिन्न स्थिति है जो उससे बहुत ही विरुद्ध है। उन दोनों में से कोई भी एक दूसरे से यह नहीं कह सकता कि उसके सहयोगी को मानना पड़ेगा कि घटनाओं का दृश्य जो उन दोनों के सामने फैला हुआ है वास्तव में दोनों के लिये एक सा है।

सिद्धान्तिक संस्था इस स्वयंसिद्ध बात को मानने की हठ करती है कि रोमन सम्प्रदाय उस ईश्वर आज्ञा के अनुसार काम करती है जो विशेष भांति से केवल उसी को मिली है। उस अधिकार के बल से वह सम्प्रदाय सब आदमियों से उनके बुद्धिप्रतिपादित

(७) जो धर्म पुस्तकों को ज्यों की त्यों सब भागों सहित जैसे कि वे ट्रेन्ट की पवित्र कौन्सिल द्वारा गिनाई गई थीं, पवित्र और धार्मिक नियमावली की भांति मानने से इन्कार करे, वा इस बात से इन्कार करे कि वे ग्रंथ ईश्वर प्रेरित हैं।

(८) जो यह कहे कि मानवी बुद्धि इतनी स्वतंत्र है कि ईश्वर भी उसे विश्वास करने के लिये आज्ञा नहीं दे सकता।

(९) जो यह कहे कि ईश्वर प्रेरित वाक्य बाहरी साक्षियों द्वारा विश्वासनीय नहीं बनाये जा सकते।

(१०) जो यह कहे कि अलौकिक चमत्कार नहीं किये जा सकते, वा यह कहे कि वे कभी निश्चय नहीं जाने जा सकते और ईसाई धर्म की ईश्वरीय उत्पत्ति उनसे नहीं प्रमाणित हो सकती।

(११) जो यह कहे कि ईश्वर प्रेरित वाक्य में कोई गुप्त भेद नहीं है, वरन धर्म के सबही सिद्धान्त उचित वृद्धि प्राप्त बुद्धि द्वारा समझे और प्रमाणित किये जा सकते हैं।

(१२) जो यह कहे कि मानवी विज्ञान इतनी स्वतंत्रता के साथ सीखना चाहिये कि मनुष्य को उन विज्ञानों से प्रतिपादित सिद्धान्तों को सत्यही मान लेना चाहिये, चाहे वे ईश्वर प्रेरित सिद्धान्त के विरुद्ध ही क्यों न हों।

(१३) जो यह कहे कि विज्ञान की उन्नति में यह बात किसी समय घटित हो सकती है कि वे सिद्धान्त जो धार्मिक सिद्धान्त से प्रकाशित किये गये हैं अवश्य अपने असली भाव के अतिरिक्त किसी दूसरे भाव में लेना चाहिये, जिसमें सम्प्रदाय नें उन्हें कभी नहीं लिया और न अब लेती है।

इन निश्चित सिद्धान्तों में भरी हुई असाधारण और साभिमान मनमानी युक्तियों को शिक्षित कैथोलिक लोगों ने संतोष सहित स्वीकार नहीं किया। जर्मनी के महाविद्यालयों की ओर से इनका विरोध हुआ और जब वर्ष के अन्त में वैटिकन कौन्सिल की आज्ञायें सर्व साधारण लोगों ने मान लीं, तब यह बात उन आज्ञाओं की

के सम्राटों के धार्मिक विचार और उनके राजसी जीवन की रीतियां वैसी ही थीं जैसी कि यूरोप और एशिया निवासी लोगों की थीं। विचार का प्रवाह भी एक ही सा था। मधुमक्खियों का एक झुंड यदि किसी दूर देश में ले जाया जाय तो वह वहां भी अपने छत्ते एक ही से बनावेगा और अपने जातीय नियम उसी क्रम के रक्खेगा जैसे अज्ञात समूह करेंगे, और बस यही हाल उन मनुष्यों का है जो प्रथक २ रहते हैं और परस्पर असंबन्धित हैं। विचार और कामों का यह क्रम ऐसा अपरिवर्तनीय है कि कुछ दार्शनिक लोग ऐसे भी हैं जो एशिया के इतिहास का प्राचीन उदाहरण यूरोप के इतिहास में लगा कर इस सिद्धान्त के पुष्ट करने में कभी न हिचकेंगे कि "यदि यूरोप को एक रोमन विशप दिया जाय और कुछ शताब्दियों का समय दिया जाय तो कुछ दिनों बाद विशप अव्यर्थ वादी पोप हो जायगा और यदि यूरोप को एक अव्यर्थ वादी पोप दिया जाय, तो यूरोप में लामा धर्म दिखलाई पड़ने लगेगा। वही लामा धर्म जो एशिया में बहुत दिनों से पाया जाता है।

दैहिक और आत्मिक वस्तुओं की उत्पत्ति के विषयमें सिद्धान्तिक संस्था ने अपने कथनों में एक और महत्व पूर्ण बात बढ़ादी है, कि वे लोग समाजच्युत किये जायें जो सब वस्तुओं की उत्पत्ति ईश्वर से मानते हैं, वा जो ऐसा मानते हैं कि दृष्टिगोचर प्रकृति केवल ईश्वर-तत्व का प्रकाशन मात्र है। ऐसा करने में उसके कर्त्ताओंको थोड़ी कठिनता नहीं पड़ी है। उनको उन भयंकर विचारों का सामना करना पड़ा है (चाहे वे नवीन हों चाहे प्राचीन) जो अब हमारे समय में बड़े जोर के साथ विचारवान मनुष्यों पर जबरदस्ती आ पड़े हैं। शक्ति के अविनाशित्व और प्रतियोग्यता का सिद्धान्त अपने न्याय युक्त फल की भांति वही पुराना पूर्वीय उत्पत्ति सिद्धान्त पेश करता है। विकाश और वृद्धि के सिद्धान्त क्रमागत उत्पादक कार्यों के सिद्धान्त से भिड़ जाते हैं। प्रथमोक्त सिद्धान्त का मूलाधार इस मूल सिद्धान्त पर है कि विश्व भर की शक्ति की मात्रा अपरिवर्तनीय है। यद्यपि वह मात्रा न बढ़ती है न घटती है, तथापि जिन रूपों से

विश्वास छुड़ा देना चाहती है, और सब जातियों को अपनी सभ्य शक्ति के अधीन करना चाहती है।

परन्तु इतना बड़ा दावा अवश्य ही ऐसे निश्चित और निर्दोष प्रमाणों से पुष्ट होना चाहिये जो केवल अनुमानिक और उपमानिक ही न हों, वरन स्पष्ट, जोरदार और ठीक हों। वे ऐसे प्रमाण हों जिन पर सन्देह करना पूर्णतः असम्भव हो।

परन्तु सम्प्रदाय कहती है कि मैं अपना दावा मानवी बुद्धि की पंचायत में न उपस्थित करूंगी। वह चाहती है कि वह दावा एक दृढ़ विश्वास की भांति मानलिया जाय। यदि यह मान लिया जाय तो उसकी सब आवश्यकतायें भी मानना ही पड़ेंगी चाहे वे कैसी ही बड़ी क्यों न हों।

बड़ी विलक्षण विरुद्धता के साथ कैथोलिक धर्म की सिद्धान्तिक संस्था बुद्धि का निरादर करती है। कहती है कि बुद्धि विचारणीय विषयों को निश्चित नहीं कर सकती, और तब भी उसी बुद्धि को व्यवस्था करने के लिये प्रमाण देती है। वास्तव में ऐसा कहा जा सकता है कि वह सर्व कृत्य बुद्धि के लिये एक क्रोधपूर्ण बहाना है जिससे वह स्वयं रोम्मन ईसाई धर्म के पक्ष में हो जाय।

ऐसे भिन्न विचारों के साथ यह बात असम्भव ही है कि धर्म और विज्ञान वस्तुओं के ठीक वर्णन में एकसम्मति हों। न दोनों किसी एक फल तक पहुँच सकते हैं सिवाय इस भांति के कि वे दोनों बुद्धि को सर्वोच्च और अंतिम न्यायाधीश मानें।

वैटिकन कौन्सिल ने इसका प्रतिवाद किया। उसने धर्म को बुद्धि से बढ़कर माना। वह कहती है कि धर्म और बुद्धि दो भिन्न प्रकार के ज्ञान हैं और एक का उद्देश गुप्त भेद और दूसरे का उद्देश सत्य घटनायें हैं। धर्म तो गुप्त भेदों से काम रखता है, और बुद्धि सत्य घटनाओं से। धर्म की बड़ाई प्रतिपादन करते हुये वैटिकन कौन्सिल ने इस बात का उद्योग किया कि अनिच्छुक लोगों के चित्तों को अलौकिक चमत्कारों और भविष्य वाणियों से संतुष्ट करे।

जिसने पहाड़ों की ऊंची चोटियों तक सब पृथ्वी को ढक लिया था और यह कहा कि यह सब पानी हवा उड़ा ले गई थी। परंतु वायु-मण्डल के बिस्तार के विषय के, समुद्र विषय के और वाष्पीय कृत्य के विषय के शुद्ध विचारों ने प्रमाणित करदिया कि ये कथन कैसे अस्थिर हैं। मनुष्य जाति के पुरुषाओं के विषय में धर्म ने यह कहा कि वे ईश्वर के हाथ से दैहिक और मानसिक पूर्णता सहित पैदा किये गये थे, और कुछ दिन बाद उनका पतन हुआ था अब वह धर्म इस बात पर बिचार कर रहा है कि कैसे भलीभांति उस साक्षी को निपटा दें जो प्राचीन कालिक मनुष्य के जंगली अवस्था के विषय में दिनोंदिन बढ़ती जाती है।

क्या यह कुछ आश्चर्य्य दायक बात है कि उन लोगों की गणना बहुत शीघ्रता से बढ़ती जाती है, जो सम्प्रदाय की सम्मतियों को तुच्छ समझते हैं? वह मनुष्य अदृष्ट विषय में कैसे एक विश्वासनीय पथ-दर्शक माना जा सकता है, जो दृष्ट विषय में इतनी अधिक भूलें करता है? वह मनुष्य सदाचारी और अध्यात्मिक विषय में कैसे विश्वास दिला सकता है जो पदार्थिक विषय में ही बहुत अधिक विफल मनोरथ हुआ हो? इन पूर्बापर विरोधी घटनाओं का, जैसे कि 'प्रेत छाया,' 'व्यर्थ युक्तियां,' 'झूंठी विद्या से उत्पन्न झूंठी कथायें' सत्यता का रूप धारण किये हुये कपट मय भूलें, छोड़ देना संभव नहीं है। धार्मिक सम्प्रदाय ने इनको यही दूषित नाम दिये थे। परन्तु इसके बिरुद्ध, वे धर्माधिकारियों के अव्यर्थता के दावा के विरुद्ध बड़ी कठिन साक्षियां हैं, जो बड़ा ज़ोरदार और अदूषित प्रमाण देती हैं, और उस अव्यर्थता के दावा पर अज्ञान और मूर्खता के विश्वास का दोष प्रमाणित कर देती हैं। इतनी अधिक भूलों का दोषी ठहराये जाने पर पोपों ने उसकी व्याख्या देने का उद्योग नहीं किया। वे इस पूर्ण विषय से जान बूझ कर अनजान बने हैं। नहीं, वरन इस से भी कुछ अधिक, अर्थात धृष्टता के प्रभाव पर विश्वास करके, इन घटनाओं का सामना करके भी पोप लोग अव्यर्थता का दावा करते हैं।

परन्तु पोप को सिवाय उन अधिकारों के जिन को वह बुद्धि द्वारा-

वह शक्ति प्रकाशित होती है वे रूप परस्पर परिवर्तित हो सकते हैं। अब तक इस सिद्धान्त ने पूर्ण वैज्ञानिक प्रणाम नहीं पाया, परन्तु उसके पक्ष में इतने अधिक और इतने दृढ़ प्रमाण दिये जाते हैं कि वह बहुत रोबदार और बहुत अधिकार पूर्ण अवस्था तक पहुंच गया है। अच्छा, उत्पत्ति और प्रलय का एशियाई सिद्धान्त इस बड़े विचार से मिलता जुलता सा दिखाई पड़ता है। वह यह नहीं मानता कि एक मानवी व्यक्ति के गर्भ में आते ही ईश्वर अनस्तित्व से एक आत्मा पैदा करता है और उसमें डाल देता है, वरन यह मानता है कि पहिले से वर्तमान पवित्र और सर्वव्यापी बुद्धि का एक भाग उसे दिया जाता है और जब उसका जीवनकाल व्यतीत हो जाता है वह भाग लौटता है और उसी में लय हो जाता है जहां से वह पहिले आया था। संस्था के कर्ता ऐसे विचारों को मानने से मना करते हैं और अपनी आज्ञा न मानने वालों को सदैव के लिये जाति बाहर रहने का दंड देते हैं।

इसी भांति वे विकाश और वृद्धि सिद्धान्तों को भी निपटा देते हैं। गंवारपन से हठ करते हैं कि धार्मिक सम्प्रदाय स्पष्ट उत्पादक कार्य्यों में विश्वास रखती है। यह सिद्धान्त कि प्रत्येक जीवधारी रूप किसी प्रथमस्थित रूप से निकला है, वैज्ञानिक रीति से शक्ति सम्बन्धी सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक उन्नतावस्था में है और कदाचित प्रमाणित सिद्धान्त मान लिया जा सकता है, [उन अधिक बातों का चाहे जो कुछ हो जो उसमें अब हाल में बढ़ा दी गई हैं]

धार्मिक सम्प्रदाय रिफारमेशन पर दोषारोपण करने में बुद्धि को विश्वास के आधीन मानने के निज विचारों को काम में लाई है। उसकी दृष्टि में रिफारमेशन एक अपवित्र नास्तिकता है जो मनुष्य को सर्वेश्वरवाद, पदार्थ वाद, और अनीश्वर वाद के गढ्ढे में डाल देती है, और मानवी समाज के मूलाधार ही को तहस नहस करने का उद्योग करती है! इसलिये वह धार्मिक सम्प्रदाय उन चंचल चित्त मनुष्यों को रोकती है, जो ल्यूथर के मतानुसार यह सिद्धान्त मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को धर्म पुस्तकों का अपने लिये अपने मतानु-

सकुच सहित कर रहा है। यह बात तात्पर्य रहित नहीं है कि जर्मनी देश, इटली निवावियों को निकाल कर अपने को दुहरे शासन के भार से मुक्त करना चाहता है और उस सुधार को पूरा करना चाहता है जिसे उसने तीन शताब्दी पहिले अपूर्ण ही छोड़ दिया था। वह समय आ रहा है जब मनुष्य शान्त निश्चल धर्म और सदैव उन्नतिकारी विज्ञान में से किसी एक को चुन कर पसन्द कर-लेंगे, अर्थात वह धर्म जिसमें मध्ययुग वाली सांत्वनायें हैं, और वह विज्ञान जो सदैव मनुष्य जीवन के मार्ग में अपनी पदार्थिक बर-कतें फैला रहा है, इस संसार के मनुष्यों का भाग्य ऊंचा कर रहा है और मानव जाति को एक कर रहा है। उसकी सफलतायें सुदृढ़ और चिरस्थायी हैं। परन्तु जो शोभा वा कीर्ति कैथोलिक धर्म पदा-र्थिक विचारों से झगड़ा करके प्राप्त करेगा वह अपनी अच्छी से अच्छी दशा में भी केवल उल्कापात की सी चमक होगी अर्थात क्षणभंगुर और व्यर्थ होगी।

यद्यपि गेज़ाट का यह कथन कि "धार्मिक सम्प्रदाय सदैव स्वच्छन्द राज्य की पक्षपाती रही है" बहुत अधिक सत्य है तथापि यह अवश्य स्मरण रखना चाहिये कि जिस नीति पर वह चलती है उसमें बहुत कुछ राज्यनैतिक आवश्यकता है। उन्नीस शताब्दियों के दबाव से वह धार्मिक सम्प्रदाय उत्तेजित की गई है। परन्तु यदि उसके कामों में स्वच्छन्दता प्रगट होती है तो उसके जीवन में अवश्यम्भावी फल भी प्रगट होते हैं क्योंकि जैसे एक मनुष्य का हाल है वैसा ही पोप शासन का भी हाल है, वह बचपन की आपत्तियों को लांघ गया है, युवावस्था की चुस्तियां दिखला चुका है, और अब उसका काम पूरा हो चुका है, अब उसे अवश्य वृद्धावस्था कीअशक्तता और विलापशीलता में पड़ना पड़ेगा। उसकी जवानी अब कभी नहीं आसकती। केवल उसके स्मारकों के चिन्ह रह जायेंगे। जैसे मूर्ति पूजक रोम ने अपने चलते समय का छायाचित्र राज्य पर डाला था, और उसके सब बिचारों को निज रंग से रँग दिया था, उसी भांति ईसाई रोम यूरोप पर अपनी विदाई समय की छाया डाल रहा है।

प्रमाणित कर सके अन्य कोई अधिकार नहीं दिये जा सकते। पोप ऐसा नहीं कर सकता कि धार्मिक मामलों में तो अव्यर्थता का दावा करे और वैज्ञानिक मामलों में उस से इन्कार करे। अव्यर्थता में तो सबही बातें आ जाती हैं। उस से सर्वज्ञ होने का तात्पर्य्य है। यदि वह ईश्वर विद्या में सत्य है तो वह विज्ञान में भी अवश्य सत्य है। यह कैसे सम्भव है कि पोपों की अव्यर्थता उन प्रसिद्ध भूलों के अनुकूल वता सकें जो उन्होंने की हैं।

तव क्या यह आवश्यक नहीं है कि अपनी सम्मतियों को स्थिर रखने के लिये पोप लोग जो दवाव डालने का दावा करते हैं वह अमान्य किया जाय, और यह घोषणा पूर्ण रीति से खंडन की जाय कि "धर्म-निरीक्षक सभा वर्तमान समय के अविश्वास के विचार से एक आवश्यक वस्तु है' और मानवी प्रकृति के नाम पर उस सभा के ज़ोर जु़ल्म के विरुद्ध खूब ज़ोर से प्रतिवाद किया जाय? क्या विचार शक्ति ऐसे अधिकार नहीं रख सकती जो किसी के अधीन न हों?

कैथोलिक धर्म और समय के भाव के बीच वाला भेद दिनोंदिन वढ़ता ही जाता है। कैथोलिक धर्म आग्रह करता है कि अंध विश्वास बुद्धि से वढ़ कर है और गुप्त भेद सच्ची घटनाओं से अधिक महत्वपूर्ण हैं। वह धर्म दावा करता है कि मैं ही प्रकृति और ईश्वरवाक्य का एक मात्र व्याख्यापक और ज्ञान का सब से वढ़कर न्यायाधीश हूं। वह संक्षेप ही में धर्म ग्रन्थों की सब ही वर्त्तमान विवेचना अस्वीकार करता है, और आज्ञा देता है कि ट्रेन्ट के ईश्वर-विद्या वादियों के विचारानुसार ही बाइविल को मानना चाहिये। वह खुल्लमखुल्ला स्वतंत्र सभाओं और नियमबद्ध प्रथाओं से अपनी घृणा प्रगट करता है और कहता है कि वे लोग अक्षम्य भूल करते हैं जो ऐसा मानते हैं कि वर्त्तमान सभ्यता के साथ पोप की अनुकूलता हो सकती है वा होना चाहिये।

परन्तु समय का भाव यह प्रश्न करता है कि—क्या मानवी बुद्धि को त्रिदेवोपासक पादरियों के अधीन होना चाहिये, वा उन अपढ़ और अविचारी मनुष्यों के व्यर्थ विचार के अधीन होना चाहिये जो

करती है, जो दोष लगानेवाले का नाम न बताकर किसी मनुष्य को दोषी ठहराती है और शारीरिक पीड़ा पहुँचा कर उससे दोष स्वीकार कराती है, जो माता पिता को अपनी सन्तानों को धार्मिक सम्प्रदाय के बाहर शिक्षा देने का अधिकार नहीं देती और हठ सहित कहती है कि घरू जीवन की निगरानी करने और विवाह और परित्याग का प्रबंध करने का अधिकार केवल उसी को है, जो उनकी धृष्टता की निन्दा करती है जो धार्मिक सम्प्रदाय के अधिकार को राज्याधिकार के अधीन समझते हैं वा जो धार्मिक सम्प्रदाय को राज्य से प्रथक कराना चाहते हैं, जो सब प्रकार की सहनशीलता को पूर्णत: खण्डन करती है और कहती है कि प्रत्येक देश में केवल कैथोलिक धर्म ही धर्म की भांति रखने योग्य है और ईश्वर भक्ति के अन्यान्य सब मार्ग निकाल देना चाहिये और जो अपने विरोधी राज्य नियमों को मंसूख करा देना चाहती है और ऐसा होने पर लोगों को आज्ञा देती है कि वे उन राज्य नियमों को न मानें ? (क्या ऐसी धर्म शक्ति का कथन मानना चाहिये) ।

यह उपरोक्त शक्ति, ऐसा जान कर भी कि वह अपने कार्य्य साधन हेतु कोई अलौकिक चमत्कार नहीं कर सकती, शासन के विरुद्ध षड़यंत्र करके समाज की शांति भंग करने में तनक भी नहीं हिचकती, और स्वतंत्र राज्यों से मेल करके अपने कार्य्य साधन करने की इच्छुक रहती है ।

इस प्रकार के दावों का तात्पर्य्य वर्तमान सभ्यता के विरुद्ध विद्रोह करना ही है, जो मानो उसको विनाश कर देने की इच्छा ही है चाहे कितनी ही जातीय हानि क्यों न हो । उन दावों बिना रोके हुये मान लेने में मनुष्य जाति को वास्तव में गुलाम हो जाना पड़ेगा ।

इस भविष्य फल के झगड़े के विषय में क्या किसी को सन्दे है ? जिन वस्तुओं का मूलाधार कल्पित कथाओं और कपट कार्य्यों है वे विनष्ट होंगे । ऐसी संस्थाओं को, जो झूठे दावा करने प्रबंध करती हैं और छल कपट फैलाती हैं, कारण बताना

क्या वर्तमान सभ्यता उस उन्नति की चाल को छोड़ने के लिये राज़ी होगी जिसने उसे इतनी शक्ति और इतना आनन्द दिया है क्या वह मध्ययुग के जंगली अज्ञान और व्यर्थ विश्वास तक पुनः लौट जाने के लिये राज़ी होगी ? क्या वह उस शक्ति का कथन मानेगी जो ईश्वरीय अधिकार का दावा करते हुये भी अपने कर्तव्यों के उचित प्रमाण नहीं दे सकती ? और जो ऐसी शक्ति है जिसने यू... को प्रत्येक उद्योग की उन्नति के लिये मार काट करके लोगों को भयंकरता से दबाते हुये शताब्दियों तक आगे नहीं बढ़ने दिया, और जो ऐसी शक्ति है जो गुप्त भेदों के बादलों पर अपना मूलाधार रखती है; जो अपने को बुद्धि और साधारण समझ से ऊपर रखती है, जो उस घृण को बड़े जोर से प्रकाश करती है जो वह विचार स्वतंत्रता और सभ्य संस्थाओं की स्वछन्दता से रखती है, जो अपनी इच्छा प्रगट करती है कि सुअवसर पाने पर विचार स्वतंत्रता को दबा दूंगी और समाज स्वच्छन्दता को विनष्ट कर डालूंगी, जो हानिकारी और उन्मत्त कह कर इस सम्मति की निन्दा करती है कि विचार स्वतंत्रता और ईश्वर भक्ति पर सब का अधिकार है, जो प्रत्येक सुशासित राज्य नियम द्वारा उस अधिकार का प्रचार करने और प्रतिपादन करने का विरोध करती है, जो घृणा दृष्टि से इस सिद्धान्त का खण्डन करती है, कि "सर्वसाधारण की इच्छा ही कानून होगी चाहे वह किसी भांति प्रगट की गई हो," जो धार्मिक बातों में सम्मति देने का अधिकार प्रत्येक मनुष्य को देने से इन्कार करती है पर यह बात मानती है कि प्रत्येक मनुष्य को धर्म सम्प्रदाय के कथन पर विश्वास करना चाहिये और उसकी आज्ञा मानना चाहिये, जो किसी लौकिक राज्य को धर्म सम्प्रदाय के अधिकार को निश्चित करने और सीमाबद्ध करने का अधिकार नहीं देना चाहती, जो इस बात को प्रगट करती है कि अनाज्ञाकारी पुरुषों को वह केवल शिक्षण ही न देगी, वरन उन पर अवश्य दबाव डालेगी, जो दोष स्वीकार के समय किसी पुरुष की स्त्री पुत्री और सेवकों को उसी के विरुद्ध जासूस बनाकर घरू जीवन की पवित्रता पर आक्रमण

कि वे क्यों जीवित रक्खी जायें। बुद्धि के सामने धर्म को अपना लेखा समझाना होगा। गुप्त भेदों को सच्ची घटनाओं के लिये स्थान खाली करना होगा। धर्म को वह शानदार और सर्वोपर स्थिति त्यागना पड़ेगी जो विज्ञान के विरुद्ध उसे इतने दिनों तक प्राप्त रही है। पूर्ण विचार-स्वतंत्रता अवश्य फैल जायगी, धर्माध्यक्ष को सीखना पड़ेगा कि वह अपने को उतने ही राज्य के भीतर रक्खे जितने को उसने स्वयं पसंद किया है और उस दार्शनिक पर अत्याचार करना छोड़ दे, जो अपनी शक्ति और अपने विचारों की पवित्रता को जान कर ऐसा हस्तक्षेप अब अधिक दिनों तक न सह सकेगा। जो कुछ एसेड्राज़ ने बैबिलान देश की बेतलता पूर्ण-तट नदियों के निकट तेईस शताब्दियों से अधिक पहले लिखा था वह अब भी सत्य है। "सत्य चिरस्थायी है और सदैव शक्तिमान है, वह जीवित रहता है और सदैव विजय प्राप्त करता है"।

